सन्तान-कल्पद्रुम ।

अर्थात्

मनचाही सन्तान उत्पन्न करनेके विषयमें देशी-विदेशी विद्वानोंके

विचारोंका संग्रह ।

"सुयोग्य संतान उत्पन्न करनेके लिए यह आवश्यक है कि जो शरीर और मनसे योग्य हैं अर्थात् स्वस्थ, सबल, तेजस्वी, उद्योगी और पवित्र मनके अधिकारी हैं, वे ही नर-नारी विवाहसूत्रमें आबद्ध किये जायँ, और जो अयोग्य हैं वे सन्तान उत्पन्न करनेसे रोके जायँ। जो लोग सबसे पहले ऐसा करनेमें समर्थ होंगे, वे ही पृथिवीके नेता होंगे।"

—डन्‌कास्टर।

लेखक,

आगरानिवासी, बम्बईप्रवासी

रसराजवैद्य पं० रामेश्वरानन्द शर्मा।

आषाढ़ १९७८ विक्रम।

जुलाई १९२१।

मूल्य बारह आने। कपड़ेकी जिल्दका सवा रुपया।

प्रकाशक—
नाथूराम प्रेमी,
ी ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय,
हीराबाग, बम्बई।

मुद्रक,
गणपति कृष्ण गुर्जर,
श्रीलक्ष्मीनारायण प्रेस,
काशी १८२-२१।

ग्रन्थकर्त्ता—पं० रामेश्वरानन्दजी रसराज वैद्य ।

निवेदन।

(पहले संस्करण से)

लगभग चार वर्ष पहले इस पुस्तकके पाँच फार्म छप चुके थे। उसके बाद अनेक कारणोंसे इसकी छपाईका काम बन्द पड़ा रहा। इस समय भी इसका प्रकाशित होना कठिन था; परन्तु विलम्ब असह्य हो चुका था और ग्रन्थकर्ता महोदय यद्यपि अपनी अपूर्व धैर्यशीलताके कारण कुछ कहते नहीं थे, तो भी हमें उनसे मिलने जुलनेमें बहुत ही अधिक संकोच होने लगा था, इस कारण यह ज्यों त्यों करके प्रकाशित कर दी जाती है। जल्दीके कारण हमें प्रेस भी बदलना पड़ा है, कागज भी दो तरहका लगाना पड़ा है और छपाई तथा शुद्धताकी ओर भी हम विशेष लक्ष्य नहीं दे सके हैं। एक काम और भी हमने ऐसा किया है जिसके लिए हम ग्रन्थकर्त्ता महोदयके निकट सविनय क्षमा-प्रार्थी हैं। और वह यह कि पुस्तकके पिछले भागको हमने बहुत कुछ कुछ संक्षिप्त कर दिया है—जो बातें बहुत विस्तारसे लिखी गई थीं उन्हें थोड़ेमें लिख दिया है; परन्तु इस ओर पूरा पूरा ध्यान रक्खा गया है कि कोई प्रयोजनीय बात छूट न जाय।

ग्रन्थकर्त्ता महोदय बम्बई के बड़े ही नामी वैद्य हैं। मन्दाग्नि, संग्रहिणी, पाण्डुरोग, अतिसार, आदि खास खास रोगोंको आराम करनेमें तो आप खूब ही सिद्धहस्त हैं। आपका अनुभव भी बहुत बढ़ा चढ़ा है। इस समय आपकी अवस्था लगभग ६६ वर्षकी है। सन्तानशास्त्रके विषयमें अब तक आपने

जो कुछ विचार किया है और विदेशी विद्वानोंके विचारोंका जो परिचय पाया है, इस पुस्तकमें उन्हीं सब विचारोंका निचोड़ पाठकोंको मिलेगा।

ग्रन्थकर्त्ता महाशय बहुत ही उदार प्रकृतिके हैं। आपके औषधालयसे प्रतिदिन बीसों रोगी मुफ्तमें औषधियाँ प्राप्त करके लाभ उठाते हैं। जनसाधारणके हितकी ओर आपका बहुत लक्ष्य रहता है। आर्यसमाजकी संस्थाओंको तथा दूसरी देशोपकारिणी संस्थाओंको आप हजारोंकी सहायता देते रहते हैं। यह पुस्तक भी आपने जनसाधारणके हितके लिए ही लिखी है। भारतवर्षमें पहले जैसे विद्वान्, बलवान् और चरित्रवान् मनुष्य उत्पन्न होने लगें, केवल इसी उत्कृष्ट हितकामनासे इसकी रचना हुई है—इसके सिवाय आपकी इस पुस्तकमें और कोई स्वार्थवासना नहीं है।

आशा है कि पाठक इस पुस्तकसे लाभ उठावेंगे और इसके विचारोंका जनसाधारणमें प्रचार करनेका प्रयत्न करेंगे।

—प्रकाशक।

विषय-सूची।

पृष्ठसंख्या

———

सन्तान-कल्पद्रुम ।

ईश्वर-प्रार्थना ।

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव ।
यद्भद्रन्तन्न आसुव ।

हे (सवितः) सकल जगत्के अधिष्ठाता, समग्र ऐश्वर्य्ययुक्त (देव) शुद्ध स्वरूप सर्व सुखोंके दाता परमेश्वर, आप कृपा करके (नः) हमारे (विश्वानि) सम्पूर्ण (दुरितानि) दुर्गुण, दुर्व्यसन और दुःखोंको (परासुव) दूर कर और (यत्) जो (भद्रम्) कल्याणकारक गुण, कर्म, स्वभाव और पदार्थ हैं (तत्) वे सब हमको (आसुव) प्रदान कर ।

हे देव, हमको ऐसी बुद्धि प्रदान कर कि जिससे सन्तानोत्पत्तिविद्याके अनुसार हम लोग इच्छित, सद्गुणी, रूपवान्, वीर, साहसी, विद्वान्, पराक्रमी, शिल्पी, और बुद्धिमान् सन्तान उत्पन्न करें जिससे हमारे पूर्वज महान् पुरुषोंकी कीर्ति चिरस्थायी रहे और परस्पर प्रीतिपूर्वक आर्य्यजातिकी उन्नति और देशमें सुखवृद्धि हो ।

उत्तम सन्तानकी आवश्यकता।

वरमेको गुणी पुत्रो न च मूर्खशतैरपि।
एकश्चन्द्रस्तमो हन्ति न च तारागणैरपि॥
एकेनापि सुवृक्षेण पुष्पितेन सुगन्धिना।
वासितं तद्वनं सर्वं सुपुत्रेण कुलं यथा॥
एकेनापि कुवृक्षेण कोटरस्थेन वह्निना।
दह्यते तद्वनं सर्वं कुपुत्रेण कुलं यथा॥

—हितोपदेश।

अर्थात्—एक गुणी पुत्र सौ मूर्खोंसे उत्तम है। अकेला चन्द्रमा समस्त अंधकारको नष्ट कर देता है, पर हजारों तारागण उस अंधकारके नष्ट करनेमें समर्थ नहीं होते। एक ही चन्दनके वृक्षसे सम्पूर्ण वन सुगन्धित हो जाता है। इसी तरह एक ही गुणी पुत्रसे सम्पूर्ण कुल शोभाको प्राप्त होता है। एक ही सूखे वृक्षमें अग्नि उत्पन्न होकर वनके करोड़ों वृक्षोंको नष्ट कर देती है। इसी तरह कुपुत्रसे (मूर्ख संतानसे) सारा कुल लाञ्छित होता है।

इस भारतभूमिमें एक समय वह था कि जब राम, कृष्ण, बुद्धदेव, महावीर, जिन, गौतम, कणाद, कपिल, पतञ्जलि, अंगिरा, अगस्त, भारद्वाज, वशिष्ठ व्यासादि ऐसे प्रतिभाशाली पुरुष हो गये हैं कि उनमेंसे कोई कोई तो अपनेको परमेश्वरका अवतार कहला गये हैं और कितने एक इस संसारमें अभीतक

पूज्य और आचार्य्यकी दृष्टिसे माने जाते हैं। प्रिय पाठको, आप भी इन्हीं लोगोंकी संतान वा शिष्यादि परम्परामेंसे हैं। आप अपने मस्तिष्क और मानसिक शक्तिकी दुर्बलताको तो विचारें कि इस दुर्बलताका क्या कारण है ? दैवदुर्विपाकसे हम लोग शनैः शनैः अपने पूर्वाचार्योंकी विद्याको भूलते गये और धीरे धीरे इस सन्तानोत्पत्ति क्रियामें हम लोग इतने अनभिज्ञ हो गये कि इस समय जो सन्तान पैदा होती है वह पहलेकी अपेक्षा इतनी निर्बल मंद-बुद्धि और अल्प आयुवाली होने लगी कि पुराने जमानेसे मिलान करनेसे जमीन आसमानका अंतर दिखाई देने लगा। पहले इसी भारतमें कैसे कर्तव्यनिष्ठ पुरुष पैदा होते थे कि उन्हें कोई काम असंम्भव नहीं प्रतीत होता था ! परन्तु आज जहाँ तहाँ देखा जाता है कि प्रायः बहुतसे लोग आलस्यके उपासक बन रहे हैं। इस उन्नतिके युगमें जब कि समस्त राष्ट्र अपने अपने देशका अभ्युदय करनेमें कटिबद्ध हो रहे हैं और हर तरहसे अपने अपने देशका बल, विद्या और धन बढ़ा रहे हैं. तब उसी समयकी भारतवासी कुछ कदर न करके मोहनिद्रामें निमग्न हो रहे हैं।

अभी कुछ काल पूर्व (मेवाड़) उदयपुर चित्तौड़के क्षत्री कैसे युद्धकुशल और शूरवीर होते थे। वर्तमानमें काबुलके पठान और जापानके निवासी कैसे पराक्रमी और हुनरी हैं। वीर नेपोलियन कैसा रणपटु और शूरवीर था। प्राचीनकालमें शुकदेवजीने बाल्यावस्थामें कैसे ब्रह्मविद्या लाभ की ? विश्वकर्मा आदि ख्यात कलाकुशल कैसे हुआ ? नेपालके गोरखे क्षत्रिय

कैसे रणवीर होते हैं? महाभारतके समयतक एतद्देशीय (भारतीय) माताओंके प्रसवसे उत्पन्न हुए वीरोंका पता लगता है। महाभारतके पीछे उत्तम सन्तानोत्पत्तिकी विद्या नष्ट हो गई और अभी तक वह लोपावस्थामें चली जाती है।

इस समयके विद्वानोंने पशुओंकी उन्नति करनेके लिये अनेक नियम ढूँढ निकाले हैं। उत्तम वनस्पति वा फल फूल उत्पन्न करनेकी अनेक सुविधायें निकाली हैं और उसमें जी जानसे प्रयत्न करते हैं। यह अफसोसकी बात है कि उत्तम पशुपक्षी तथा फल फूल तो उत्पन्न किये जायँ, परन्तु हतभाग्य मनुष्यजाति जो सृष्टिमें सर्वोपरि उत्तम समझी जाती है वह रूपवान् और गुणवान् बनानेसे वञ्चित रक्खी जाय। यह सभ्यताके अभिमानी स्त्रीपुरुषोंके लिये बड़ी लज्जाकी बात है। हम इस बातको जोर देकर कहते हैं कि जबतक भारतवासी उत्तम, सद्गुणी, बुद्धिमान् और शूरवीर सन्तान उत्पन्न करनेमें दत्तचित्त न होंगे तबतक देशका दुःख, दारिद्र्य नष्ट न होगा। इस समय जो अन्धपरम्परा सन्तानोत्पत्तिके विषयमें चल रही है वह देशभरको दारिद्र्य और निर्बलताके सूत्रोंसे ग्रथित करेगी। इसका कारण यह है कि नियमविरुद्ध अज्ञानतासे उत्पन्न हुई संतान मूर्ख, आलसी, निर्बुद्धि और साहसहीन होती है। यदि नियमानुसार उत्तम संतान पैदा की जाय तो इस भारतभूमिमें वही सतयुगकासा समय फिर वर्तने लगे और अनेक आपत्तियोंके फंदेसे मुक्त होकर यह भारत एकताके तंतुसे बँध जाय। कायरता और कमजोरी एकदम दूर होकर लोग मनुष्यजातिकी भलाई और देशको उच्च श्रेणीमें ले जानेका प्रयत्न करने लगें।

हजारों वर्ष पहले ही हमारे पूर्वज उत्तम और सद्गुणी संतान पैदा करनेकी प्रक्रिया यथार्थ रूपसे लिख गये हैं। परन्तु पश्चात्तापकी बात है कि हम लोगोंका ध्यान भी उस ओर नहीं जाता है, कर्त्तव्यकर्म तो दूरकी बात है।

अब यूरोपादि देशोंके विद्वान् भी परीक्षा करके इस विषयका निश्चय करते जाते हैं। डाक्टर फाउलरने एक पुस्तक लिखी है। वह हजार पृष्ठसे ऊपर की है। उसमें अनेक युक्तियाँ इसी प्रकारकी दी हुई हैं कि स्त्रीपुरुष जैसी चाहे वैसी संतान उत्पन्न कर सकते हैं। परन्तु बड़े खेदकी बात है कि अपने देशमें विद्याका अभाव होनेसे यह बात ईश्वरकी मर्जीपर छोड़ रक्खी गई है।

प्रिय पाठको, जो कार्य्य आपके करनेका है उसको ईश्वरके भरोसेपर छोड़ना मूर्ख, पुरुषार्थहीन और आलसी पुरुषोंका काम नहीं तो किसका है? आप निष्कपट और निःस्वार्थ होकर शुद्ध अन्तःकरणसे ईश्वरकी सृष्टिमें चाहे जिस विषयकी खोज करें, उसका पता अवश्य लग जायगा। जिन कार्योंको मनुष्यजाति स्वयं कर सकती है उसको ईश्वरके ऊपर छोड़ना महाभ्रम है, और केवल भ्रम ही नहीं वरन् ईश्वरके सृष्टिक्रमकी आज्ञा और नियमोंका उल्लंघन करना भी है। इच्छित और रूपवान् सन्तान उत्पन्न करना मनुष्य जातिकी उत्तमताके लिये एक श्रेष्ठ कार्य है। आर्य वैद्यकमें इसका मूल प्राचीन कालसे चला आता है और अब यूरोपादि देशोंके लोग भी वर्तमान समयमें प्रकृतिके उन्हीं नियमोंका पता लगाकर मनुष्योंको समझानेका प्रयत्न कर रहे हैं और अपनी मानसिक शक्तिसे

काम लेकर कुदरतके परदेको आहिस्ते आहिस्ते हटाकर मनुष्य जातिको प्रत्येक कार्य्यमें सफलता प्राप्त करनेके उदाहरण प्रत्यक्ष-में दिखलाते जाते हैं। वे मनुष्योंको कुदरतका भेद जाननेमें आरूढ़ कर कुदरतके प्रत्येक कार्य्यको कर रहे हैं और परीक्षायें कर करके दिखला रहे हैं। उस प्रणालीके अनुसार सब मनु-ष्योंको कार्य्य करनेकी शक्ति प्राप्त करना उचित है। यदि हम किसी मूर्ख पुरुषसे कहें कि हम तुझे पानी बनाकर दिखाते हैं, तो वह हमारी इस बातपर कदापि विश्वास न करेगा; परन्तु इस जमानेका मेट्रीक्युलेशन अथवा साधारण पदार्थविज्ञान पढ़ा हुआ विद्यार्थी भी अपने पठित साधारण अभ्यासके आश्रयसे दो भाग हाइड्रोजन और एक भाग आक्सीजन नामक गैसको एकत्र मिलाकर जल बना देगा। क्योंकि रसायन शास्त्रकी प्रणालीसे आजकल यूरोपके विद्वानोंने जल बनानेका कायदा शोधन करके सिद्ध कर लिया है। इस मौके पर कुदरतके ऊपर हठ करनेवाले नासमझ मनुष्योंको लज्जित होनेके सिवा दूसरा उत्तर नहीं आता।

हमें जो अधिकार प्रकृतिके द्वारा मिले हैं, यदि हम उनका दुरुपयोग करें अथवा उनकी उपेक्षा करें तो इसमें हमारा ही दोष है, प्रकृति बेचारीका क्या अपराध? इसलिये समझ लेना चाहिए कि बालक उत्पन्न करनेमें भी प्राचीन आर्य्य और वर्तमानके यूरोपनिवासी विद्वानोंने कुदरती कायदेको शोधन करके इच्छित, रूपवान् और सद्गुणी सन्तान उत्पन्न करनेका कायदा निकाल लिया है। हम यह नहीं कहते कि इस समय बालकोंकी जो उत्पत्ति होती है, वह कुदरतके

नियमके विरुद्ध है। यह सब नियमानुकूल है; परंतु उत्तम और गुणवान् वीर सन्तान उत्पन्न करनेके जो कायदे आयुर्वेदमें पाये जाते हैं उनके अनुसार सन्तान उत्पन्न करनेकी प्रणालीसे इस समयके स्त्री-पुरुष बिलकुल अनभिज्ञ हैं। वर्तमानमें कितने ही विद्वानोंने बालक-उत्पत्तिके विषयमें बहुत काल पर्य्यन्त अभ्यास करके कितने ही तरीके और प्रयोग अनुभव करके सिद्ध किये हैं कि बालकोंकी उत्पत्ति उच्च श्रेणीके मनुष्य बननेकी हो, और प्रत्येक आर्य्य स्त्री-पुरुष अपनी सन्तान-प्रणालीको सुधारकर उच्च श्रेणीपर ले जानेके कायदोंको काममें लावें, बस यही हमारा प्रयोजन है। पर्वत आदि स्थानोंकी ऊँची जगहसे जल झिरकर नदीके प्रवाह रूपमें बहता है; क्योंकि ऊँची जमीनपरसे नीची जमीनकी तरफ जलका बहना यह कुदरती नियम है, और फिर वह नीचे समुद्रमें जा मिलता है। परंतु उस नदीमेंसे नहर निकालकर रूक्षभूमिमें अन्न और नाना प्रकारकी वनस्पतियाँ उत्पन्न करके देशको आबाद करना यह मनुष्यकृत संशोधन प्रजावर्गको सुखदायी है और कुदरत-के कायदेसे यथार्थ काम लेना है। इसी प्रकार सन्तान उत्पन्न होना कुदरती नियम है। सन्तानोंको सँभालकर उत्पन्न करने-की जो क्रिया विद्वानोंने निकाली है उसके अनुसार कुदरतके साथ बुद्धिका संयोग करके सन्तान उत्पन्न करनेसे उत्तम श्रेणी-की बुद्धिमान, विद्वान्, साहसी और वीर सन्तान उत्पन्न हो सकती है।

कई लोगोंका सिद्धान्त है कि देश वा मनुष्य जातिकी भलाई केवल उच्च श्रेणीकी शिक्षापर ही अवलम्बित है। परन्तु

हम देखते हैं कि इस समय पश्चिमी भाषाकी उच्च श्रेणीकी शिक्षादीक्षाप्राप्त जितने लोग उपस्थित हैं उनमेंसे देश और जातिके शुभचिन्तक बहुत ही थोड़े माईके लाल हैं। बाकी मान-मर्यादाके मदमें डूबे हुए अपने जातिभाइयोंको तुच्छ समझते हैं और मनुष्य मात्रके ऊपर अपने गुरूर (गर्व) का दखल जमाते हैं। ऐसे मनुष्योंसे देश तथा जातिकी कुछ भी भलाई नहीं होती। इस कथनसे कोई यह न समझे कि हम उच्च श्रेणीकी शिक्षाके विरोधी हैं। नहीं, हमारा कथन यह है कि उच्च श्रेणीकी शिक्षाके लिये उत्तम और श्रेष्ठ संस्कारयुक्त रज-वीर्य्यसे सन्तान उत्पन्न होनी चाहिए। जैसे एक बीजसे एक वृक्षके उत्पन्न होनेमें पृथ्वी, खाद, जलवायु और धूप वगैरहकी आवश्यकता है और इन सबके अनुकूल होनेपर भी यदि बीज उत्तम और दोषरहित न हो तो युक्त और यथार्थ साधन होनेपर भी वृक्षको कल्पद्रुम नहीं बना सकते। इसी प्रकार बालककी उत्पत्तिके लिये माता-पिताका रजवीर्य्य दुर्गुणोंसे दूषित और मानसिक शक्तिके उत्तम संस्कारोंसे रहित हो तो ऐसे रज-वीर्यसे उत्पन्न हुए सन्तानको उच्च श्रेणीकी शिक्षा नहीं सँभाल सकती। इस बातके हजारों दृष्टान्त इस समय देशमें उपस्थित हैं। हजारों मनुष्य उच्च श्रेणीकी शिक्षा प्राप्त करके देश और जातिकी भलाईसे बहिर्मुख हैं, जबर्दस्तकी खुशामद और सेवासे अपनी उच्च श्रेणीकी शिक्षाको दूषित कर रहे हैं, जबर्दस्तका आश्रय लेकर देशकी भलाई चाहनेवालोंको गारत कर रहे हैं। इसका मुख्य कारण यही है कि उच्च श्रेणीकी शिक्षा प्राप्त करने पर भी वे उत्तम श्रेणीके मनुष्य नहीं बनते

हैं। ऐसे लोग उत्तम रजवीर्य्य और उत्तम मानसिक शक्तिसे उत्पन्न नहीं हुए हैं; किन्तु उनकी पैदाइश दुर्गुणोंके संकल्पयुक्त रजवीर्य्यकी है। ऐसे दुर्गुणोंके संस्कार और हीन मानसिक शक्तिके संयोगसे उत्पन्न हुए बालकोंको चाहे जितनी उच्च श्रेणीकी शिक्षा दो, वे जाति और देशको कुछ भी लाभ नहीं पहुँचा सकते। इसलिये जिन मातापिताओंको अपनी सन्तान विद्वान्, सद्गुणी और शूर-वीर बनाना हो, उन्हें केवल उच्च श्रेणीकी शिक्षापर ही आधार न रखना चाहिये।

इसके लिये मातापिताको पूर्वसे ही अपना रज-वीर्य्य शुद्ध रखकर और उत्तम मानसिक शक्तिके विचारों तथा सद्गुणोंसे युक्त होकर रहना चाहिए। फिर उत्तम मस्तिष्क और उच्च श्रेणीके बालककी उत्पत्तिके निमित्त गर्भाधान संस्कारसे शुद्ध होकर गर्भधारण क्रिया करनी चाहिये, जिससे बालकके मस्तकमें स्वतन्त्र विचार, प्रत्येक विषयकी धारणाशक्ति और देश तथा जातिके हितकी कामना जन्मसे ही उत्पन्न हो सके। मोगरा और गुलाब आदिके वृक्षोंकी अंकुरावस्थामें अथवा कलममें ही पुष्पावस्थाकी सुगन्धिके परमाणु विद्यमान् रहते हैं और वह पुष्पावस्थामें प्रकट रूपमें आकर नासिकेन्द्रियसे प्रत्यक्ष हो जाते हैं। इस दृष्टान्तसे समझ लो कि यदि मातापिताके रज-वीर्य्यमें गर्भाधानके समय सद्गुण और उत्तम मानसिक शक्तिका समावेश होगा, तो बालक जन्मसे ही सद्गुणी, वीर, विद्वान् और साहसी उत्पन्न होकर युवावस्था प्राप्त होनेपर अपनी विद्या, बुद्धि और सद्गुणोंका परिचय देनेमें समर्थ होगा। इस समय बहुतसे विद्यार्थी बालकोंकी परीक्षा करनेसे आपको मालूम हो

सकता है कि अनेक बालक तो ऐसे हैं कि जो थोड़ेसे परिश्रमसे अपना पठित पाठ शीघ्र समझकर याद कर लेते हैं; और कितने ही मूर्ख ऐसे हैं कि दिन रात उत्कट परिश्रम करके और अध्यापकके अनेक बार समझानेपर भी नहीं समझते। कितने ही विद्यार्थी प्रत्येक परीक्षामें बराबर अनुत्तीर्ण होते चले जाते हैं और अन्तको लज्जित होकर विद्याभ्यास छोड़कर विमुख हो जाते हैं। कितने ही विद्यार्थी उच्च शिक्षा प्राप्त करके अनेक प्रकारकी कला और हुनर निर्माण करते हैं। कितने ही ऐसे हैं कि एक कलाकी क्रियाको अनेक बार देख चुके हैं या उस्ताद्की सहायतासे निर्माण भी कर चुके हैं, परन्तु जब स्वयं सिद्ध करनेका प्रयत्न करते हैं तो सिद्ध नहीं कर सकते। कितने ही सैनिक वीर ऐसे हैं कि शत्रुके घिरावमें आनेपर भी अपनी रणकुशल बुद्धिकी स्फुरण शक्तिसे शत्रुको भ्रम-जालमें फँसाकर साफ निकल जाते हैं। कितने ही सैनिक ऐसे हैं कि चारों तरफसे खुले मैदानमें रहकर भी शत्रुके आक्रमणमें आकर या तो कैदी बन जाते हैं या अपना शरीर त्याग देते हैं। इन बातोंपर आप विचार करेंगे, तो यही निश्चय होगा कि जिनके मातापिताके मानसिक विचार गर्भाधान समयमें श्रेष्ठ, सद्गुणी, कलाकुशल या वीरभावविशिष्ठ थे, उनकी सन्तान थोड़ी शिक्षा प्राप्त करनेपर भी उच्च श्रेणीकी धारणा शक्ति और तीव्र बुद्धिवाली होती है और जिनके मातापिताके संकल्प मलीन और मन्द बुद्धिके रहते हैं, उनकी सन्तान मलीन बुद्धिवाली उत्पन्न होती है। इस बातकी परीक्षा करके ऋषियोंने बहुत काल पूर्व ही धर्म्मनीतिमें लिख दिया है—

यस्य नास्ति स्वयं प्रज्ञा शास्त्रं तस्य करोति किम्।
लोचनाभ्यां विहीनस्य दर्पणः किं करिष्यति ॥

अर्थात् जिस मनुष्यमें स्वयं बुद्धि और तीव्र मानसिक शक्ति नहीं है उसको शास्त्रसे क्या लाभ पहुँच सकता है? उत्तम शिक्षा भी उसको प्रवीण नहीं बना सकती। जैसे कि सूरदास (नेत्रहीन पुरुष) दर्पणमें अपना मुख नहीं देख सकता।

प्रोफेसर फाउलर इस विषयमें लिखते हैं कि संसारमें सद्गुणी और न्याययुक्त बर्ताव करना चाहते हो और अपनी सन्तानको गुणी और शिक्षित बनाना चाहते हो, तो गर्भधारणके समय उन उन गुणोंसे विशिष्ट मातापिताको अपने मनमें उन गुणोंकी धारणा करनी चाहिये और माताको तो ९ मास १० दिवस पर्य्यन्त उन्हीं गुणोंका स्मरण रखना चाहिये। ऐसा करनेसे जन्मसे ही सन्तानमें उन गुणोंका समावेश रहता है और युवावस्थामें वे गुण पूर्ण रूपसे प्रस्फुटित देख पड़ते हैं। कितने ही पाश्चिमात्य विद्वानोंका इस समय ऐसा सिद्धान्त है कि जैसे व्यवहार और आजीविकासम्बन्धी विद्याओंकी शिक्षा कुमारों और कुमारियोंको दी जाती है, उसी प्रकार सद्गुणी, विद्वान्, कलाकुशल और शूरवीर देशहितैषी सन्तानोंकी उत्पत्तिकी शिक्षा भी दी जाय। यदि इस प्रणालीकी विद्याके प्रचारमें आर्य्य लोग भी कुछ दृष्टि दें, तो भारतके प्राचीन विद्वानोंकी परीक्षित विद्याका जीर्णोद्धार हो जाय और भारतमें प्राचीन कालका गौरव पुनः दिखने लगे। व्यावहारिक विद्यासे एक ही मनुष्य लाभ उठा सकता है, परंतु इस (इच्छित, गुणी, रूपवान् सन्तान) की उत्पत्तिसे वंशपरम्परा तक लाभ पहुँचना

सम्भव है। गुणी पुरुषोंके उत्पन्न होनेसे ही भारत एकताके सूत्रमें बद्ध हो सकता है और मूर्ख तथा दुर्गुणी सन्तान मनुष्योंके ऐक्य सूत्रको मूर्खतारूपी शस्त्रसे छेदन कर देती है। जिस देशमें ऐक्य है वही सुखी है, उसीमें श्रीवृद्धि है, वही स्वाधीनताके सुखका अनुभव करता है, और उसी देशकी मनुष्य-जातिको जीवित कह सकते हैं।

प्रिय पाठक सज्जनो—

"मूले नष्टे कुतः शाखा"

जिस वृक्षका मूल नहीं है, उसकी शाखा कैसे हो सकती है? जब कि आपकी सन्तानोत्पत्ति ही विधिहीन और विकृत है, तब आपकी जाति और आपके धर्मकी रक्षा, आपके देशकी श्रीवृद्धि, तथा एकता क्योंकर हो सकती है? संसारमें इस समय आर्य्य जातिकी कैसी अधोगति है! उसने अपने पूर्वजों-के विधान किये हुए षोड़श संस्कारोंमेंसे प्रथम ही संस्कारको बिलकुल त्याग दिया है।

छिन्नोपि चन्दनतरुर्नजहाति गन्धं।
वृद्धोऽपि वारणपतिर्न जहाति लीलाम्॥
यन्त्रार्पितो मधुरतां न जहाति चेक्षुः।
क्षीणोपि न त्यजति शीलगुणान्कुलीनः॥

अर्थात् कटा हुआ चन्दनका वृक्ष अपनी गंधको नहीं त्यागता, बुड्ढा गजपति भी अपने विलासको नहीं त्यागता, कोल्हू यंत्रमें प्रेरित की हुई ईख भी अपने मधुर रसको नहीं त्यागती और दरिद्र कुलीन भी अपने सुशील गुणको नहीं

त्याग सकता। परन्तु बड़े ही शोकका विषय है कि श्रेष्ठ कह-लानेवाले भारतवासियोंने उत्तम सन्तान प्राप्त करनेके प्रथम संस्कारको परित्याग कर दिया और जो जंगलोंमें वास करने-वाली जातियाँ थीं, वे इस समय उन्नतिके शिखरपर आरूढ़ हैं। इसपर भी भारतवासियोंकी निद्रा नहीं खुलती कि हम अपने मूल कारणका संशोधन करनेका प्रयत्न करें। प्यारे भाइयो, जबतक इस मूल कारणका संशोधन न करोगे, तब तक इस देश और आर्य्य जातिका कल्याण होना सर्वथा असंभव है।

॥ इति प्रथमः शाखः ॥

द्वितीयः शाखः।

गर्भस्थ बालककी शरीर-रचनापर रंग और रूपका प्रभाव।

भारतवर्षीय आर्य्य विद्वानोंने कई सहस्र वर्ष पूर्वसे ही इस विषयको निश्चय कर लिया था कि स्त्री-पुरुषका पाणिग्रहण-संस्कार होकर इच्छानुसार उत्तम संतान पैदा की जा सकती है। इसी विषयको लक्ष करके यूरोपके अनेक विद्वानोंने इसकी छानबीन की और कितने ही ग्रन्थ इस विषयकी पुष्टिमें लिखे; और अब उन लोगोंको पूर्ण विश्वास हो गया है कि स्त्री-पुरुष अपने इच्छानुसार रूपवान् पुत्र या कन्या उत्पन्न कर सकते हैं। काले रंगके सिद्दी (हबशी) स्त्री-पुरुष भी गौरवर्णी खूबसूरत संतान उत्पन्न कर सकते हैं। यूरोपके डाक्टर स्कोफील्ड "मन-का बल" नामक अपनी पुस्तकमें लिखते हैं कि, बच्चेके बीजकी स्थापनाके समय अर्थात् समागमके समय पर घोड़ा-घोड़ीके आगे (नेत्रोंके समक्ष) जिस रंगका पर्दा रखा जाय उसी रंगका बच्चा घोड़ीसे उत्पन्न होता है। इस कथनसे यह सिद्ध होता है कि गर्भाधानके समय रंगका असर घोड़े-घोड़ीके मन पर पड़ता है और उस मनोवृत्तिका असर उन दोनोंके वीर्य्य और रजपर तदाकार वृत्तिसे एक होकर पड़ता है। एतदर्थ उसी रंगका बच्चा पैदा होता है।

डाक्टर केलोग, डाक्टर ट्राळ और डाक्टर सीकस्टका मत है कि जिस रंगकी छाप मातापिताके मनपर पड़ती है उसी रंगका बालक भी उत्पन्न होता है। प्रमाणके लिये एक सफेद रंगके शशेका प्रयोग डाक्टर सीकस्टने अपनी पुस्तकमें लिखा है। डाक्टर केलाग अपनी पुस्तकमें लिखते हैं कि एक छोटे कद्वाले कुबड़े न्यायाधीश और उसकी स्त्रीने एक खूबसूरत पुतलेकी सहायतासे (खूबसूरत मनुष्याकृति पुतलेको समक्ष रखकर) अपनी मनोवृत्तिमें उसकी खूबसूरतीको ठहराकर एक खूबसूरत पुत्र उत्पन्न किया।

प्रायः यह देखनेमें आता है कि वनस्पतिमें रहनेवाले जन्तुओं (तिलली, पतङ्गादि) का रंग और उनके शरीर तथा पंखोंकी रचना वनस्पतियोंके किसी अंगके समान होती है। उनका रंग वनस्पतिके पत्र, पींड़ अथवा फूलोंके रंगके समान होता है। उनके शरीरकी आकृति कलीके समान होती है। पंखोंकी आकृति पत्र अथवा पुष्पकी एक पँखड़ीके समान होती है। इसी तरह पत्थरकी खान वा पहाड़ोंकी खंदकोंमें रहनेवाले जीवोंकी रंगत पत्थरके समान होती है। सफेद जमीनमें रहनेवाले चूहे अथवा शशा सफेद होते हैं। लोहेकी खानोंमें रहनेवाले जन्तु लोहेकी रंगतके समान होते हैं। पहाड़ या पथरीली जमीनमें खुश्कीके रहनेवाले कछुएकी रंगत बिलकुल पत्थरके समान होती है। इससे अनुमान हो सकता है कि जन्तु तथा मनुष्योंके रंग-रूप तथा अवयवोंकी रचना माता-पिताके मनपर पड़े हुए रंग-रूपके प्रभावपर निर्भर है।

अब यहाँ यह प्रश्न हो सकता है कि क्या काले सिद्दी लोग

यह प्रक्रिया करनेसे गौरवर्ण बन सकते हैं और गौरवर्ण यूरोपियन काले सिद्दियोंके समान सन्तान उत्पन्न करना चाहें तो कर सकते हैं या नहीं? इसका उत्तर यह है कि एक ही पीढ़ीमें इतना परिवर्तन नहीं हो सकता कि सर्वांशमें तुख़्म (बीज) और देशकी तासीर बदल जाय। पर हाँ, पाँच छः पीढ़ीमें इतना परिवर्तन होना सम्भव है। इसका प्रमाण भारतहीमें मौजूद है कि जो युरोपियन लोग बहुकालसे भारतमें निवास करते हैं, दो तीन पीढ़ीके पश्चात् उनकी सन्तानोंकी आकृति और रंग-रूप तथा आँखोंकी पुतलीमें बहुत अंतर पड़ गया है। शरीरका रंग उष्ण और शीतल देशकी प्रधानतासे सम्बन्ध रखता है। उत्तर भारत शीतप्रधान प्रदेशके निवासी प्रायः गौर वर्णके होते हैं। दक्षिण भारतमें मद्रास आदि प्रांतके लोग प्रायः कृष्ण वर्णके हैं। इस देशकी प्रधान रंगतको त्यागकर शारीरिक विद्यासे जानी जानेवाली खूबसूरती कृष्ण वर्ण दम्पतिसे उत्पन्न हुई संतानमें अवश्य आ सकती है।

आयुर्वेदमें जैसे इच्छित संतान उत्पन्न करनेके अनेक प्रमाण मिलते हैं वैसे यूनानीमें हैं कि नहीं, इसका ठीक पता नहीं मिला। हाँ, इतना पता अवश्य मिला कि एक दिन ईरानके अब्बास नामक एक हकीमसे मेरी मुलाकात हुई। ये महाशय बुशायरके रहनेवाले थे। उनसे इस विषयमें प्रश्न किया गया। उनके पास तवारीखशाही नामक अरबीकी एक पुस्तक थी। उसमें तुख़्मकी तासीरपर एक नजीर लिखी हुई थी। उसका तर्जुमा करके उन्होंने हमें इस प्रकार सुनाया—"एक बादशाहके जनानखानेमें सिद्दी जातिकी एक लौंडी बेगम साहबाके

पास रहती थी। बेगम साहबाके जो औलाद होती थी, वह काली और बेडौल चेहरेवाली होती थी। इसी कारण बादशाह-ने अपने दो लड़कोंको मार डाला था। पुत्र चाहे कैसा ही कुरूप हो, लेकिन मातृ-स्नेह कुरूपपर भी पूर्ण होता है। दो लड़-कोंकी मृत्युका शोक बेगम साहबाको असह्य हो गया, तब उसने छिपी रीतिसे यह प्रबन्ध किया कि यदि मेरे उदरसे तीसरा बच्चा भी बदसूरत हो तो किसी दूसरी स्त्रीके गर्भसे उत्पन्न हुए बालकसे बदल लिया जाय। खुदाके फ़ज़्लसे बेगम साहबाके तीसरा लड़का भी हुआ। लेकिन वह भी बदसूरत और काला था। उसी तारीखको एक धुनिये (पिंजारे)के यहां बच्चा हुआ था। उसीके साथ बेगम साहबाके पेटसे उत्पन्न हुए बच्चेका बदला हो गया और दौलतके लोभसे पिंजारा और उसकी औरत भी खुश हो गई। पिंजारेका लड़का गोरा और खूबसूरत था। बदला होनेके बाद बालक होनेकी इत्तला बादशाहको दी गई। बादशाह अबकी बार गोरा और खूबसूरत बेटा देखकर खुश हो गये। बच्चा परवरिश पाकर बड़ा हुआ, लेकिन उसके लक्षण सुस्त और खराब निकले। खिदमतगार उसको अच्छे कपड़े पह-नावें, तो वह धूल मिट्टी डालकर उनको खराब कर दे अथवा उतारकर फेंक दे और जमीनमें लोटता रहे। एक लकड़ी लेकर उससे जमीनको ठोंकता रहे और मुखसे 'हुर्र हुर्र हुर्र पें पें पें' शब्द करता रहे। इस आदतसे बादशाहको बड़ी नफरत थी, लेकिन वह उसकी खूबसूरतीपर खुश था। इधर वह काला बालक भी धुनियेके यहाँ परवरिश पाकर बड़ा हो गया। एक दिन कई बराबरीवाले लड़कोंसे खेलते खेलते आपसमें

लड़ाई हो गई। दस पन्द्रह लड़के एक ओर और धुनियेका काला लड़का तथा एक दूसरा लड़का उसके साथमें दूसरी ओर था। इन दोनोंने सब लड़कोंको मारकर भगा दिया। उस तरफसे बादशाहकी सवारी गुजरी। बादशाहने यह सब खेल अपनी आँखोंसे देखा। वे उन दोनों बच्चोंको मनही मनमें शाबासी देने तथा अपने घरके बच्चेकी आदतको याद करके रंजीदा होने लगे। कई महीनोंके बाद शाही दरबारमें तीन बालकोंको सिपाही लोगोंने खड़ा किया। उनकी उमर ११।१२ सालके करीब थी। सिपाही बोले कि—हुजूर, इन छोकरोंने ११ सालके एक लड़केको फाँसी देकर मार डाला है। उसके माँ-बापने फरियाद की है। उन तीनों लड़कोंसे बादशाहने पूछा कि तुमने इसके लड़केको फाँसी देकर क्यों मार डाला? लड़के बोले कि एक बकरीका बच्चा हर रोज उछल कूदकर हमारे साथ खेलता था। इनके लड़केने उसकी गर्दन-पर पैर रखके दबाया और बकरीका बच्चा जीभ निकालकर मर गया। हम दो लड़के सिपाही हैं और यह एक जल्लाद है। हमको बादशाह और वजीरने हुक्म दिया कि जानके बदलेमें इसकी जान लो और इसे फाँसी दे दो। हमने एक दरख्तमें रस्सी बाँधकर उसमें इसके गलेको फँसाकर खींच दिया तो यह लड़का मर गया। इस तरह हमने बादशाह तथा वजीरके हुक्मकी तामील की। बादशाहने पूछा कि बादशाह तो मैं हूँ; मैंने तो तुम्हें कोई हुक्मही नहीं दिया। लड़के बोले कि हमारे बादशाह और वजीर दो लड़के हैं। बादशाहने कहा कि तुम सिपाहीके साथ जाओ और अपने बादशाह और वजीरको

बुला लाओ । वे लड़के उन दोनों लड़कोंको बुला लाये। बादशाहने देखा कि ये वे ही बहादुर लड़के हैं, जिन्होंने १०।१५ लड़कोंको मारकर भगा दिया था । बादशाहने काले लड़केसे पूछा कि तू कौन है ? लड़केने जवाब दिया कि मैं धुनियेका लड़का हूँ और सब लड़कोंने मुझे लड़नेमें मजबूत और तेजस्वी समझकर बादशाह बना रक्खा है । मैं लड़कोंका बादशाह हूँ और दूसरा लड़का बादशाही दूत (एलची) का है। इसको सब लड़कोंने मेरा वजीर बना रक्खा है और उस लड़केने बकरीके बच्चेको गर्दन दबाकर मार डाला था। न्यायके समय सब लड़कोंकी मजालिसकी यही राय हुई कि जानके बदले इसकी जान लेनी चाहिये । इसलिये मुझ बाद-शाह और इस वजीरके हुक्मसे इन तीनों लड़कोंने उसको फाँसी दे दी। बादशाही दरबारके सब दरबारियोंने कहा कि जानके बदलेमें जो जान ली गई है, सब मजलिस, बादशाह और वजीर तीनोंकी एक रायसे ली गई है ; तीनों लड़के बेगु-नाह हैं, इनको छोड़ दीजिये । अन्तमें लड़के छोड़ दिये गये । उस दिन बादशाह अपनी बेगमके पास महलमें गये और अपने लड़केको उसी धुनमें देखकर बड़े रंजीदा हुए और बेगम साहबासे उस दिनके छोकरोंका मुकदमा तथा लड़ाईकी बहा-दुरीका हाल सुनाया । बेगम साहबा नीची गर्दन करके बोलीं कि जहाँपनाह, इसका सच्चा हाल यदि मेरी जान बख्शी जाय तो मैं सुनाऊँ ! बादशाहके आश्वासन देनेपर बेगमने कहा कि जहाँपनाह वह काला लड़का आपहीका है और यह लड़का जो कि आपके पास परवरिश पाता है, उस धुनियेका है ।

हुजूरके मारनेके खौफसे मैंने इसे बदल लिया था। बादशाह सुनकर निरुत्तर हो गये और उसी वक्त उन्होंने तबीबों और ज्योतिषी लोगोंको बुलवाया। ज्योतिषी तो अंडबंड बकने लगे और उनके कहनेका बादशाहपर कुछ असर न हुआ; परन्तु तबीब साहब (वैद्य) ने लड़केकी सूरत शकलको देखकर कहा कि हुजूरके जनानखानेमें बेगम साहबाके पास इस काले लड़केकी शकलकी कोई स्त्री रहती होगी। इस लड़केमें जो गुण, स्वभाव, बुद्धि, पराक्रम और तेज है वह तो हुजूरके तुखम (बीज) का असर है और शकल इसकी काली लौंडीके समान है। कारण, वह हर समय बेगम साहबाकी खिदमतमें रहती होगी। उसी वक्त बादशाहने उस काली लौंडीको तबदील कर दिया और बेगम साहबाके पास खूबसूरत दासियाँ रख दीं। इसके पश्चात् बेगम साहबाके जो संतान हुई वह गौरवर्ण और खूबसूरत हुई। इस ऐतिहासिक तबीबकी नजीरसे रंग और वीर्य्यके असरका पूरा पता लगता है।

रूपवान् स्त्री-पुरुषोंसे रूपवान् सन्तान पैदा हो, यह तो ठीक ही है; परन्तु कुरूपा स्त्री कुरूप पतिसे गर्भ धारण करके अपने मनको सत्पुरुषोंका लक्ष्य बनाकर गुणी और रूपवान् सन्तान भी पैदा कर सकती है। हमने स्वयं देखा है कि, एक यूरोपियनके यहां काले वर्णकी स्त्री-पुरुष नौकर थे। स्त्री धायका काम करती थी, साहबके बच्चोंको पालती थी और मर्द बावर्ची था। उनके जो संतान उत्पन्न हुई वह सब गोरे वर्णकी हुई, यूरोपियनोंके समान श्वेत वर्ण और कंजी आँखोंकी नहीं हुई। उनका रंग पारसी लोगोंके समान गौरवर्ण था। नेत्रोंकी पुतली भी

काली थी। सिरके बाल घूँघरवाले थे। इसका यही कारण है कि इन कृष्ण वर्ण स्त्री-पुरुषका ध्यान सदैव गोरे बालक, मेम और साहबके ऊपर रहनेसे उनके रंग और रूपका प्रभाव उनकी संतानपर पड़ा और वह खूबसूरत और गौरवर्णकी हुई।

एक मनुष्य कदमें बिलकुल ठिंगना (पस्तकद) था। सूरत शकल भी उसकी अच्छी नहीं थी। उसकी स्त्री कदमें उससे दूनी थी, परन्तु वह पस्तकदका पुरुष पुरुषार्थमें बराबर सामर्थ्यवाला था। जब उसके एक सन्तान हुई तो वह भी छोटे कदकी मालूम होने लगी। उसने डाक्टरोंसे पूछा कि मेरा यह लड़का जवानीकी उमरमें मेरे ही बराबर होगा अथवा मुझसे लम्बा होगा? डाक्टरोंने उस बालककी अस्थियोंको नापकर उसकी उमरका हिसाब लगाया तो मालूम हुआ कि बालक युवावस्था प्राप्त होनेपर भी पितासे एक वा पौन इंच कम रहेगा। जब उस पुरुषने डाक्टरोंसे कहा कि अब मैं कदापि सन्तान उत्पन्न न करूँगा, क्योंकि मुझसे भी कदमें छोटी सन्तान उत्पन्न करना उचित नहीं है, तब उस विद्वान् डाक्टरने उसको राय दी कि तुम अपनी स्त्रीके कदके समान लम्बे और खूबसूरत एक ही शकलके कई पुतले बनवाकर उस घरमें कई ठिकाने रक्खो जिस घरमें स्त्री रहती है जिससे कि उस लम्बे कदवाले खूबसूरत पुतलोंपर स्त्रीकी दृष्टि हर समय पड़ती रहे। वह छोटे कदवाला मनुष्य धन-वान् था। उसने गौर वर्णके कई खूबसूरत पुतले बनवाकर कई स्थलोंपर घरमें रखवा दिये। इसके बाद उसकी स्त्री दूसरी बार गर्भवती हुई। उसका मन उन पुतलोंपर स्थिर हो गया था।

इसलिये गर्भावस्थामें स्त्रीके मनपर पुतलोंकी छाप ऐसी पड़ी कि दूसरा बालक बहुत खूबसूरत और उत्पन्न होते ही प्रथम बालक के कदसे लम्बा जान पड़ा और जवान होनेपर अपनी माताके कदको पहुँचा। यह उदाहरण डाक्टर केलोगने अपनी किताबमें दिया है।

माताकी मनोवृत्तिमें आई हुई रंगकी धारणाशक्तिसे बालकका रंग कृष्ण वा गौर हो सकता है। इसका और एक अच्छा उदाहरण यह है—स्पेन देशकी एक अमीरके घरकी स्त्रीके शयनागारमें काले रंगके एक इथोपीयनका चित्र लगा हुआ था। उस अमीरकी स्त्रीके मनपर उस काली तसबीरका ऐसा असर पड़ा कि उसका बालक काले रंगका हुआ। ऐसे ही एक इथोपियन काली स्त्रीको श्वेत रंग विशेष प्रिय था और उसकी मनोवृत्तिमें सदैव सफेद रंगकी भावना रहती थी, इस कारण उसको जो बालक उत्पन्न हुआ वह सफेद (गौर) रंग और कंजे नेत्रोंवाला था। इन प्रमाणोंसे यह सिद्धान्त निकलता है कि जिस रंगकी छाप गर्भ रहनेके समयसे स्त्रीके मनपर पड़े बालकका वही रंग होना सम्भव है। यूरोपके परीक्षकोंने पशुओंके रंगकी परिवर्तन-क्रिया लिखी है कि, गर्भवती मादियोंके समक्ष रंगीन पर्दा लगानेसे उसी रंगके बच्चे उत्पन्न होते हैं; परंतु भारतके पशुओंमें कुदरती नियमसे पशुओंके रंग बदलनेकी क्रिया देखी जाती है। प्राय: भारतके भेड़-बकरी पालनेवाले गड़रिये और गूजर लोग भेड़ बकरियोंके साथमें एक गौ रखते हैं और उस गौके बछड़ा-बछड़ी प्राय: काले अथवा काले और सफेद (चितकबरे) उत्पन्न होते हैं। इसका कारण यही है कि गौ गर्भवती होकर भेड़

बकरियोंमें रहती है और उसके मन तथा नेत्रोंमें विशेष करके स्याह रंग ही भरा रहता है। इसी प्रकार सफेद ऊनकी प्राप्तिके लिये गड़रिये लोग अपनी काली भेड़ोंपर खड़िया चूने या छुईके बड़े बड़े धब्बे लगा देते हैं। इस क्रियासे पहले सफेद-काले (चितकबरे) बच्चे पैदा होते हैं और दूसरी पीढ़ीमें सफेद होने लगते हैं। आप लोगोंने बहुत सी भैंसें देखी होंगी कि जिनका रंग सफेद या भूरा है। इसका कारण यही है कि जो भैंस गर्भवती होनेपर गौओंके समूहमें सदैव रहती है उसके बच्चोंकी आकृतिपर सफेदी या भूरेपनका असर गौओंसे आता है। गो जाति विशेष करके सफेद रंगकी ही होती है, लेकिन देशभेदसे तथा जमीनके भेदसे कहीं कहींकी गायोंका रंग लाल, काला आदि भी पाया जाता है। इसका कारण यह है कि जिस जगहकी जमीन विशेष लाल होती है, वहाँकी गायें विशेष करके लाल रंगकी होती हैं और जहाँकी जमीन सफेद या भूरी है, वहाँकी गायें विशेष करके सफेद या भूरी होती हैं और गौओंका विचित्र रंग अन्य जातिके पशुओंमें रहनेसे हो जाता है। लंदनसे ब्रिटिश मेडिकल जरनल नामके पत्रके प्रमाणसे डाक्टर लो लिखता है—"तबीबी परीक्षासे निश्चय किया गया है कि एक सफेद सुअरी (बाराहकी मादा) को बकशीयर जातिके काले बाराहके साथ रक्खा गया। उससे गर्भ रहकर जो बच्चे उत्पन्न हुए उनका रंग काला और सफेद था। फिर दूसरे समय इसी सफेद सुअरीको लाल ताम्र-वर्णके सुअरके साथ रक्खा, तो उस सुअरसे गर्भ धारण करनेके बाद उसी सुअरी-के बच्चे सफेद और ताम्र वर्णके उत्पन्न हुए और किसी

किसी बच्चेमें काले दाग भी हुए। एक छोटे सींगोंवाली गौ बड़े सींगोंवाले बैलके समीप रक्खी गई। उसके जो बछड़ा उत्पन्न हुआ, उसकी अर्द्धाकृति बैलके समान थी। फिर उसी गौको छोटे सींगोंवाले बैलके समीप रक्खा, तो प्रथम बैलके सींगोंकी और दूसरे बैलके सींगोंकी आकृति उसमें मिलती थी। इन प्रमाणोंसे सिद्ध होता है कि रंग तथा शरीरकी बनावटका ढाल जैसा मातापिताके मनमें हो वैसा ही सन्तानके ऊपर पड़ता है और सन्तान उसी रंगकी उत्पन्न होती है। प्राचीन पद्धति (आयुर्वेदसे) और नूतन पद्धति (यूरोपवालोंकी प्रत्यक्ष परीक्षा) से जो प्रमाण ऊपर लिखे गये हैं उनसे यह सिद्ध हो गया है कि बालकके माता-पिताके मनपर जिस रंगकी मजबूत छाप पड़ती है उसी रंगका बालक उत्पन्न होता है। अब यह विधि भी जानने योग्य है कि गौर (सफेद) रंगका बालक उत्पन्न करना हो तो किस विधिसे कर सकते हैं। आयुर्वेदमें कहा है कि रूपसे रूपकी उत्पत्ति होती है। यदि माता-पिता कृष्ण वर्णके हों तो बालक भी कृष्ण वर्णका होना सम्भव है और यदि पिताका रंग गौर और माताका रंग कृष्ण अथवा पिताका रंग कृष्ण और माताका रंग गौर हो, तो इन दोनोंके रंगसे मध्यावस्थाके रंगवाला बालक उत्पन्न होता है। कृष्ण वर्णके पिताका स्नेह गौर वर्णकी मातापर अधिक हो तो सन्तानके शरीरपर मध्यावस्थाके रंगसे कुछ अधिक गौर रंग अथवा बिलकुल माताके समान गौर रंग होगा। क्योंकि कृष्ण वर्णका पति गौर वर्णकी स्त्रीको अति प्रेमसे चाहता है। इससे गौर वर्णकी छाप स्त्रीसे उतरकर पतिके

मनमें भरी रहती है। इस कारण गोर वर्णकी छाप पतिके वीर्यमें पूर्ण रूपसे असर करती है। इस प्रकार काले पुरुषकी सन्तान गोर वर्ण होती है। इसी प्रकार यदि गोर वर्णकी पत्नीका कृष्णवर्णके पतिपर अतिशय प्रेम हो तो सन्तानका रंग कृष्ण वर्ण पिताके समान होता है। क्योंकि स्त्रीके मनकी गति हर समय पतिके ऊपर जाकर रुकती है और स्त्रीके मनपर कृष्ण वर्णकी छाप लगकर बालकके ऊपर असर करती है। यही कारण गौरवर्णकी स्त्रीसे कृष्णवर्ण पतिके समान सन्तान होनेका है। जब स्त्री-पुरुषका विचार गौरवर्ण सन्तान उत्पन्न करनेका हो और पतिका वर्ण कृष्ण और स्त्रीका गौर हो तो पुरुषको उचित है कि सहवाससे प्रथम स्त्रीका अति प्रेमसे अपने मनमें हर समय चिन्तन रक्खे जिससे स्त्रीकी खूबसूरत और गौर वर्णकी छाप पुरुषके मनसे उतरकर बीजपर पूर्ण रूपसे हर समय रहे। इस क्रियासे प्रत्येक सन्तान गौर वर्णकी उत्पन्न होगी और गौर वर्णकी स्त्रीको हर समय कृष्ण वर्णके पतिका चिन्तन अपने मनमें न करना चाहिये। क्योंकि स्त्रीके मनपर हर समय कृष्ण वर्णकी छाप पड़नेसे सन्तान भी कृष्ण वर्णकी होगी। इसलिये स्त्रीको उचित है कि किसी खूबसूरत बालकको जो कि गौर वर्णका हो, अपना पुत्र समझकर मनसे अति प्रेमके साथ चिन्तन किया करे, जिससे उस खूबसूरत और गौर वर्णके बालककी छाप स्त्रीके मनपर बराबर अंकित हो जाय। ऐसा मनन करनेसे गौरवर्णका बहुत ही खूबसूरत बालक उत्पन्न होगा और एक बालक खूबसूरत उत्पन्न होनेसे पीछे अन्य बालक भी गौर वर्णके और खूबसूरत होते हैं। क्योंकि

स्त्रीका मन अपने पलहे बालककी खूबसूरतीपर सहज ही स्थिर हो जाता है और सन्तानके स्नेहकी छाप उसके मनपर पूर्ण रूपसे बैठ जाती है। इस क्रियासे कृष्णवर्णके पतिसे संभोग करनेपर भी स्त्री गौरवर्णकी सन्तान बराबर उत्पन्न कर सकती है। इसके सिवा यदि स्त्री रूपवान् और गौर वर्ण सन्तान उत्पन्न करना चाहे, तो गर्भधारणके अनन्तर निरन्तर खूबसूरत और मनको हर्षित करनेवाले पदार्थोंका अवलोकन करती रहे; परन्तु स्त्रीको उचित है कि खूबसूरत पर-पुरुषका चिन्तन कदापि न करे; क्योंकि परपुरुषका चिन्तन करनेसे स्त्रीका पातिव्रत धर्म नष्ट हो जाता है। जैसा कि कहा है—

देवो मनुष्यो गन्धर्वो युवा चापि स्वलंकृतः।
द्रव्यवानभिरूपो वा न मेऽन्यः पुरुषो मतः॥

अर्थात्—अपने पतिसे भिन्न पुरुष, देवता, मनुष्य, गन्धर्व, युवा, अलंकारोंसे भूषित, धनवान् और अत्यन्त रूपवान् हो तो भी उसका चिन्तन स्त्रीको कदापि न करना चाहिये। पतिव्रता स्त्रीको उचित है कि पर-पुरुषका चिन्तन स्वप्नमें भी न करे। यदि मन स्थिर करनेके लिये खूबसूरत बालकका साधन न मिल सके, तो गौरवर्णके खूबसूरत बालकका चित्र अपनी दृष्टिके सामने रक्खे और उसपर हर समय मनोवृत्तिको स्थिर करे, जिससे मनोवृत्तिपर खूबसूरत बालककी छाप लग जावे। घरू कामकाजसे अवकाश पाकर अथवा रात्रिको शयन करनेके समय जब चित्त स्वस्थ हो, तब स्त्रीको चाहिए कि बालककी

खूबसूरतीका मनन करते करते निद्राके वशीभूत हो जाय। स्त्रीके मनपर ऐसे समयमें पूर्णरूपसे बालककी खूबसूरतीकी छाप लग जाती है और प्रातःकाल भी जब स्त्री शयनसे उठे तब उसी खूबसूरत बालकका चिन्तन करे। इस समयकी चिन्तासे दिनभरके लिये मनपर बालककी खूबसूरतीका असर जमा रहता है। इसी कारण प्रातःकालका समय ऋषि लोगोंने (धर्म-अर्थ-मोक्ष सम्बन्धी) वेदके तत्त्वार्थ जाननेके लिये नियत किया है और योगिराज इसी समयमें परमात्माका ध्यान करते हैं। यथा—

ब्राह्मे मुहूर्ते बुध्येत धर्मार्थौ चानुचिन्तयेत्।
कायक्लेशांश्च तन्मूलान् वेदतत्त्वार्थमेव च ॥

प्रातःकाल चित्तकी वृत्ति बहुत निर्मल और स्थिर होती है। इस कारण उस समय जिस वस्तुका चिन्तवन किया जाता है, उसका असर हृदयपर स्थायी होता है। दूसरे अन्य रंगोंकी अपेक्षा सफेद रंग (गौरवर्ण) का असर मनपर शीघ्र होता है। इसलिये जिस समय स्त्री स्वस्थचित्त बैठी हो उस समय या निद्रा आनेसे प्रथम नेत्र बंद करके चित्रके सिवाय गौरवर्णके बालकका चिन्तन करे। ऐसा करनेसे भी मनोवृत्ति सफेद रंगपर स्थिर हो जाती है। गौके श्वेत बछड़े, सफेद फूल और अन्य प्रकारके श्वेत पदार्थोंका देखना स्त्रीको हितकारी है। जिस घरमें गर्भवती स्त्री रहती हो उसकी खिड़कियाँ और दीवालें सफेद चूनेसे पोती जावें तथा वह स्त्री स्वच्छ और सफेद वस्त्र पहने तो उत्तम है।

भारतवर्षमें गर्भवती स्त्रियाँ पुत्रकामनासे अनेक बिढंगी और भयानक मूर्तियोंकी सदैव आराधना करती रहती हैं। काली, भैरव, चण्डी, मसानी आदिकी मूर्तियाँ भयानक रूप-वाली होती हैं। उनका मुख फटा हुआ और जीभ निकली हुई होती है। ऐसी मूर्तियोंको गर्भवती स्त्री कदापि न देखे। क्योंकि इन विकृताङ्ग मूर्तियोंके देखने और ध्यान करनेसे गर्भस्थ बालक या तो अङ्गभङ्गवाला अथवा विकृत आकृतिवाला होता है। ऐसे विकृत गर्भको वैद्यकशास्त्रमें राक्षसगर्भ कहा है।

इति द्वितीयः शाखः।

———

तृतीयः शाखः ।

गर्भस्थ बालककी शरीररचनापर मातापिताकी मानसिक शक्तिका प्रभाव ।

प्राणधारियोंमेंसे मनुष्यके शरीरसे सम्बन्ध रखनेवाला मन महान् शक्तिमान् है। प्राचीन आर्य्य फिलासफरोंने बन्ध और मोक्षको मनकी शक्तिके ऊपर माना है। योगियोंने परमात्माका साक्षात्कार होना मनकी महान् शक्तिपर ही बतलाया है। इसी प्रकार आर्य्य रणकुशल वीरोंने अपना जय और शत्रुका पराजय मनपर ही माना है। जिनका मन शिथिल पड़ गया, वे ही पराजित हैं और जिनके मनमें ऐसा उत्साह है कि जबतक प्राण रहें तबतक शत्रुओंके शस्त्रका निशाना बन जावें, उन वीरोंने अवश्य ही विजय प्राप्त की है। ऐसे हजारों प्रमाण इतिहासोंमें मिलते हैं। उसी महान् शक्तिवाले मनको प्राचीन-आर्य्यवैद्योंने सन्तानोत्पत्तिमें मुख्य आधार माना है। जैसा कि—

गर्भोपपत्तौ तु मनः स्त्रियायं जन्तुं व्रजेत्तत्सदृशं प्रसूते।
गर्भस्य चत्वारि चतुर्विधानि भूतानि मातापितृसंभवानि ॥ २४
आहारजान्यात्मकृतानि चैव सर्वस्य सर्वाणि भवन्ति देहे।
तेषां विशेषाद्बलवन्ति यानि भवन्ति मातापितृकर्मजानि ॥ २५
तानि व्यवस्येत् सदृशत्वलिङ्गं सत्वं यथानूकमपि व्यवस्येत्
रूपाद्धिरूपप्रभवः प्रसिद्धः कर्म्मात्मकानां मनसो मनस्तः।
भवन्ति येत्वाकृतिबुद्धिभेदा रजस्तमस्तत्र च कर्महेतुः ॥ ३५

अतीन्द्रियैस्तैरतिसूक्ष्मरूपैरात्मा कदाचिन्न वियुक्तरूपः।
न कर्मणा नैव मनोमतिभ्यां चाप्यहङ्कारविकारदोषैः॥ ३५
रजस्तमोभ्यान्तु मनोऽनुबद्धं ज्ञानं विना तत्र हि सर्वदोषः।
गतिप्रवृत्त्यो स्तुनिमित्तमुक्तं मनः सदोषं बलवच्च कर्म॥ ३६

(चरक, शारीरस्थान)

अर्थ—गर्भोत्पत्तिके समयमें स्त्रीका मन जिस जन्तुकी ओर चला जाता है, गर्भस्थ बालककी सूरत भी प्रायः बहुत कुछ उसी जन्तुके समान हो जाती है। गर्भके चारों भूत मातापिताके चार महाभूतोंसे उत्पन्न होते हैं। जल, अग्नि, वायु और पृथ्वी इनको महाभूत कहते हैं। गर्भस्थ बालकका शरीर माताके आहार रसके बने हुए पदार्थोंसे पुष्ट होता है। अर्थात् बालकका समस्त शरीर मातापिताके अंशोंसे बना हुआ है। इसलिये इनमेंसे जिसके लक्षण प्रबल होते हैं उसीके सदृश सन्तान होती है। सन्तानका रूप मातापिताके सदृश होनेमें चार महाभूत मुख्य कारण हैं। परन्तु इनके सिवा जिस रूपमें स्त्रीकी इच्छा अधिक होती है, वैसे ही रूपवाली सन्तान होती है। क्योंकि रूपसे रूपका उत्पन्न होना प्रसिद्ध है। अर्थात् जैसे रूपवान् स्त्री-पुरुषका बीज होगा वैसा ही रूप गर्भस्थ बालकका बनकर उत्पन्न होगा।

कर्माश्रित मनसे गर्भके मनकी उत्पत्ति होती है। जो आकृति और बुद्धिमें भेद होता है, उसमें रजोगुण और तमोगुण ये कर्म हेतु हैं। उस अतीन्द्रिय और अतिसूक्ष्मभूत गुणसे आत्मा कभी विमुक्त नहीं होता है और वह आत्मा कर्म, मन, मति, और अहंकारादि विकार दोषोंसे अलग नहीं होता है।

रजोगुण और तमोगुण ये मनसे नित्य सम्बन्ध रखते हैं। ज्ञानके बिना वे सम्पूर्ण दोष हैं। दोषोंसे युक्त मन और बलवान् कर्म ये गतिकी प्रवृत्तिके निमित्त कथन किये गये हैं।

अब इस प्राचीन सिद्धान्तसे यह सिद्ध हो गया कि गर्भधारण की क्रियाके समयसे लेकर गर्भके सातवें महीने तक गर्भवती स्त्री उत्तम रूपवान्, सौम्य, सतोगुणी, धार्मिक, विद्वान्, न्यायी, शूरवीर, प्रजा-रक्षक, देश-हितैषी, रजोगुणी राजा महाराजादि उत्तम पुरुषोंके चिंतन और उनके इतिहास आदि (जीवनचरित्र) के पढ़ने सुननेमें मन लगावे तो सन्तान इन्हीं गुणोंसे विशिष्ट उत्पन्न होगी और अच्छे रूपवान् धर्मिष्ठ विद्वान् पुरुषोंके चित्र देखना और उनके गुणोंका मनन करना गर्भवतीका मुख्य कर्त्तव्य है। जिस रूप और गुणका चिन्तन गर्भवती करेगी, उसके वैसी ही सन्तान उत्पन्न होगी इसमें सन्देह नहीं। इसलिये प्रत्येक गर्भवती स्त्रीको गर्भधारणके समयसे अपने मनमें उत्तम उच्च श्रेणीका चिन्तन करना उचित है। मनकी एकाग्रताका लक्षण शास्त्रकारोंने इस प्रकार कहा है—

"युगपत्ज्ञानानुत्पत्तिर्मनसो लिंगम्।"

अर्थात् एक समयमें दो प्रकारके ज्ञानकी उत्पत्ति न होना, यही मनका चिन्ह है। गर्भवती स्त्रीको उचित है कि जैसी सन्तान उत्पन्न करना चाहे वैसे ही पदार्थको अपने मनका लक्ष्य बनाकर हर समय उसीका चिन्तन मनमें रक्खे और यह बात अभ्याससिद्ध है। कहा भी है—"एकतत्त्वाभ्यासः"। अन्य विचारोंको त्याग कर एक ही तत्त्वका अभ्यास करनेसे

उसपर मनकी वृत्ति स्थिर हो जाती है। स्त्रीकी मनोवृत्ति स्थिर होनेसे गर्भस्थ बालकपर वैसा ही असर पड़ता है और इससे बालक उसी रूप गुणसे विशिष्ट उत्पन्न होता है जिसका कि चिन्तन किया गया है।

मनोवृत्तिकी प्रखरतासे पश्चिमी लोगोंने अनेक नये नये आविष्कार किये हैं। यदि विचारदृष्टिसे देखा जाय तो संसारमें मनुष्य अनेक आश्चर्यमय काम करता है—जैसे अनेक शास्त्रोंकी युक्तिपूर्वक रचना, कलादि यंत्रोंका निर्माण, विद्युत्, जल, पवन और अग्निसे काम लेना, खगोल—भूगोलादिका ज्ञान प्राप्त करना अथवा अनेक प्रकारके यंत्र, जलयुद्धके लिये अनेक प्रकारके यान वा स्थलयुद्धके लिये आकाशमें उड़नेवाले गुब्बारे निर्माण करता है। ये सब मनोवृत्तिके बलसे ही करता है और भविष्यमें भी इसीके सहारे करेगा। इसके सिवा जितने प्राचीन वा नूतन कार्य्य मनुष्योंके किये हुए इस संसारमें दिखाई देते हैं, वे सब मनोवृत्तिकी रचना हैं। इसी प्रकार गुणी और रूपवान् संतान उत्पन्न करना स्त्री-पुरुषकी मनोवृत्ति के अधीन है। नवीन खोज करनेवालोंने कितने ही प्रमाण इस विषयमें दिये हैं। उन लोगोंका कहना है कि अवयवविशेष या रूपविशेषके उत्पन्न होनेके मूल कारणमें मनकी विशेष गुप्त-शक्ति प्रधान है। कितने ही जीवजन्तु और पशुओंको विचार-पूर्वक देखते हैं तो ज्ञात होता है कि उनके आकार और बना-वटकी रचना मनोवृत्तिके असरसे उत्पन्न हुई है। जैसे कि एक व्याघ्र या रीछको लीजिये, तो उनके पंजे या मुखके दाँत एक प्रकारसे विकराल रूपवाले शस्त्र हैं, जिनसे अन्य पशुओंको

फाड़कर वे खा जाते हैं। यदि इनके शरीरकी रचना ऐसी न होती तो अरण्यमें इनका निर्वाह नहीं हो सकता था। ऐसे चीर-फाड़वाले अंगोंकी उत्पात्ति उनकी क्रूर और हिंसक मनोवृत्तिके कारण ही हुई है।

दूसरे पशु जैसे मृग, बकरा, गौ, शशा ये अपना जीवन शान्त वृत्तिसे व्यतीत करते हैं। इनकी क्रूरवृत्ति नहीं है, इसलिये इनके शरीरमें किसी भयंकर शस्त्रकी उत्पत्ति नहीं देखी जाती है। जंगलमें रहनेवाले अनेक पशुओंने अपनी मनोवृत्तिके असरसे बड़े बड़े सींगोंकी उत्पत्ति की है। इससे यही प्रकट होता है कि उन्होंने अपने ऊपर आक्रमण करनेवाले शत्रुओंसे बचनेके लिये अपने मनकी वृत्तियोंको चिरकालतक अपने शरीरमें बचावरूपी शस्त्र उत्पन्न करनेके लिये लगाया है। और यह बात भी समझनेके योग्य है कि पालतू गौओंकी अपेक्षा जंगली गौ भैंस आदि पशुओंके सींग विशेष लम्बे, मजबूत और तीव्र होते हैं। इसके प्रमाणके लिये आफ्रिकाके जंगली पशुओंके सींग देखना चाहिये। पालतू पशुओंके बड़े और तीव्र सींग होनेकी आवश्यकता नहीं है, क्योंकि उनके रक्षक मनुष्य हैं। कदाचित् पालतू पशुओंको जंगलमें रक्खा जाय तो दो चार पुश्तमें उनके सींग जंगली पशुओंके समान बड़े हो सकते हैं। एक प्रकारकी सब्ज रंगकी तितली पंखी होती है, इसके परोंकी बनावट बिलकुल वनस्पतिके पत्तोंके समान होती है। जैसी नसें वनस्पतिके पत्तोंमें होती हैं, उसी प्रकारकी नसें इसके परोंकी होती हैं। यह तितली वनस्पतिके पत्तोंपर बिलकुल अज्ञात रहती है। शिकारी

जानवर इसको देख नहीं सकते। इसने अपने बचावके लिये ऐसी आकृति और रंगत अपनी मनोवृत्तिकी धारणासे की है। इसका कारण शिकारी पक्षियोंसे बचनेके उपायका विचार ही है। परंतु जो पक्षी इसका शिकार करते हैं उन्होंने अपनी नेत्र-दृष्टिको इतना तेज किया है कि इसको खोजकर शिकार कर सकें। एक सर्प बिलकुल सब्ज रंगका होता है और वह वृक्षोंके पत्तोंमें छिप जाता है। उसने अपनी सब्ज रंगत मनोवृत्ति-की धारणासे बनाई है जिससे वह अपने दुश्मनोंसे बचनेको वनस्पतिके पत्रोंमें छिप सके। कितने ही पक्षियों वा मधुमक्खि-योंने पुष्पोंका रस चूसनेको चोंच लम्बी बनाई है। इसी प्रकार मधुमक्खीने अपनी जिह्वा लम्बी की है, जिससे कि मधुको जिह्वासे खींचकर पुष्पोंमेंसे लावे और अपने छत्तेके मधुकोशमें एकत्र करे। इसी तरह मधुकोशकी रक्षाके लिये उसने जहरीला डंक अपनी दुममें उत्पन्न किया है कि कोई शत्रु उसके मधुको खाने वा लूटनेको आवे तो विषैले डंकसे उसकी रक्षा कर सके। यह रचना मनोवृत्तिसे ही हुई है। शुक (सुआ) जातिके पक्षीने अपनी चोंचकी वक्रता फल कुतरनेकी मनो-वृत्तिसे की है। मांसाहारी पक्षियों (काक, चील, बाज, गि-द्धादि) ने अपने पंजों और चोंचको मांस नोचने और कतरनेके लिये उसी कामके योग्य किया है। बगुला, जलमुर्ग और दूसरे मीनभक्षी पक्षियोंने अपनी चोंचकी आकृति लम्बी की है। इसका कारण यही है कि ये पक्षी जलजन्तु मछली आदिका शिकार करते हैं; इससे इन्होंने अपनी मनोवृत्तिके आधारसे लम्बी चोंचकी रचना की है। प्राणियोंको जिस जिस अवयव-

की आवश्यकता पड़ती है अथवा जिस किसी अवयवके न्यूनाधिक करनेकी आवश्यकता पड़ती है, वह अवयव मनोवृत्तिकी चिन्तनक्रियाके अनुसार कुछ समयमें वैसा ही उत्पन्न होने लगता है। एक डाक्टर लिखता है कि जिस जानवरको जिस अवस्थामें उत्तम रीतिसे जीवन व्यतीत करनेके लिये जिस जिस अवयवकी जरूरत पड़ी है, अथवा जो जो अवयव निरर्थक समझकर निकालनेकी जरूरत पड़ी है, उसको मनोवृत्तिकी चिन्तनशक्तिको काममें लानेसे कुछ कालमें वैसे ही अवयव उत्पन्न होने लगे हैं। एक डाक्टर महाशय लिखते हैं कि इन प्रमाणोंसे मालूम पड़ता है कि मनकी इच्छा और कार्य्यसे ही शारीरिक अवयवोंकी (अङ्गोपाङ्ग की) रचना उत्पन्न हुई है। यह सिद्धान्त अनीश्वरवादी या अनात्मवादियोंका है। आस्तिक लोग सबका कर्ता हर्ता ईश्वरको ही समझते हैं।

बालककी उत्पत्ति करनेवाले अवयव मनके असरसे ही अपना कार्य्य करते हैं। इस विषयमें यूरोपियन डा० क्लाउस्टन इस प्रकारसे लिखता है कि बालककी उत्पत्तिमें सम्पूर्ण कार्य अथवा जितने कार्य्य शरीरकी रचनाके लिये आवश्यक हैं उतने सब मनसे सम्बन्ध रखते हैं। इस विषयमें जितने अवयव शरीरकी वृद्धिके साथ बालकसे सम्बन्ध रखते हैं, उतने ही मस्तिष्क तथा मनके साथ सम्बन्ध रखते हैं। डाक्टर स्कोफील्ड लिखता है कि गर्भसम्बन्धी व्याधियाँ जैसे कि मांसरजका जमाव होना और अधूरे गर्भका स्राव या पात होना अथवा पूरे महीनोंमें या पोषण पाकर बालकका उत्पन्न न होना—ये सब बातें मनके असरसे सम्बन्ध रखती हैं।

डाक्टर ट्रालने अपनी एक पुस्तकमें लिखा है कि बालकके प्रसव-समयकी क्रिया जो गर्भाशयमें होती है, बड़ी कठिन है। मनकी प्रेरणा-बुद्धि इसके होनेमें प्रधान समझी जाती है। प्रसव-क्रियाके समय जितना फेरफार बालककी गतिमें होता है वह सब स्त्रीके मनके असरकी प्रेरणासे होता है। स्त्रीके मनकी प्रेरणाका असर बालकके मनपर पहुँचता है, जिससे बालक गर्भाशयसे बाहर आता है। उस समय निर्गमन द्वारमें जितनी गति होती है वह सब माताके मनके असरसे होती है—माताके मनका पूर्ण असर बालककी प्रसवगति पर पड़ता है।

एक यूरोपियन डाक्टर लिखता है कि मनुष्यके शरीरमें मन ईश्वरीय अंशसे बना हुआ है। मन प्रत्येक रचनामें परिवर्तन करके योग्य और उपयोगी शरीरकी रचना कर सकता है। मनकी गति अपार है। इसी कारण आर्य्य ऋषियों-ने कितने ही सहस्र वर्ष पूर्व यह निश्चय कर लिया था कि बन्ध और मोक्षका कारण मन है। इस समय यूरोपके विद्वानोंने भी इस प्राचीन विद्याकी विशेष छान-बीन करके लिखा है कि मनके विचारका असर केवल गर्भिणी स्त्रीके शरीरपर ही नहीं, किन्तु इससे आगे बढ़कर गर्भस्थ बालक-पर भी पूर्ण रूपसे पड़ता है और इससे माताके मनकी छाप गर्भस्थ बालकपर यथार्थ रीतिसे पड़ जाती है। डाक्टर ओर-मेरोडने अपनी पुस्तकमें लिखा है कि एक गर्भवती स्त्रीके हाथकी उँगलियोंको कुछ हानि पहुँची थी। जब उसके बालक-का जन्म हुआ बात उस बालकके हाथकी दो उंगलियाँ

असम्पूर्ण उत्पन्न हुई देखी गई । एक गर्भवती स्त्रीने गर्भ रहनेके अनन्तर किसीकी एक हाथसे हीन मूर्ति देखी । उस मूर्त्तिका स्मरण स्त्रीके चित्तपर बहुत समय पर्य्यन्त रहा । जब उसके बालकका जन्म हुआ तो वह एक हाथसे हीन था । इसी प्रकार मिस्टर चार्ल्सके जीवनचरित्रको देखनेसे मालूम होता है कि जब चार्ल्स अपनी माताके गर्भमें थे, उस समय माताका ऐसा विचार हुआ कि संसारके लोभ, लालच और तृष्णाको त्याग कर एकान्तवास करना चाहिए और उसने ऐसा ही किया । वह नगर त्यागकर एक छोटेसे ग्राम हेवनशायरमें रहने लगी और परमात्माकी सृष्टिरचना तथा ईश्वरकी महान् शक्तिका विचार करने लगी । इसका परिणाम यह हुआ कि उसका बालक उत्पन्न होकर जब वह (चार्ल्स) जवान हुआ तो संसार-त्यागी हो गया और उस दशामें उसने परमात्माकी महिमाकी एक उत्तम पुस्तक लिखी और वह लोगोंका धर्माचार्य्य बना । यदुवंशी क्षत्री वासुदेव और उनकी भार्य्या देवकी दोनों कंस राजाके बन्दीगृहमें कैद थे । उस समय जो सन्तान देवकी माताके गर्भसे उत्पन्न होती थी, उसको कंसराजा मरवा डालते थे । इस सन्तानहत्याके दुःखको देखकर वासुदेव और देवकी-के क्रोधकी कुछ सीमा नहीं थी । दम्पतिके मनपर हर समय ऐसा विचार रहने लगा कि कोई ऐसा वीर पुरुष होता जो इस अन्यायी शिशुघातक कंस राजाको नष्ट करके हमको बन्दी-गृहसे छुड़ाता । दम्पतिकी इस मनोवृत्तिके चिन्तनका यह फल हुआ कि देवकी माताके गर्भसे भारतपूज्य श्रीकृष्णचन्द्रका जन्म हुआ जो कि चौदह विद्याके भण्डार थे । बाल्यावस्थामें

ही कृष्णचन्द्रने कंसको मारकर मातापिताको कारागारसे मुक्त किया और हजारों राक्षस-प्रकृतिके मनुष्योंको यमालयमें भेज-कर भारतवासियोंके मनमें ऐसा प्रभुत्व जमा दिया कि यह कोई दैवी प्रकृति परमात्माका अवतार है। शायद उस समय कैदियोंको काले वस्त्र पहननेको दिये जाते हों और बन्दीगृह भी कालेरंगका ही हो, इसी कारणसे श्रीकृष्णचन्द्र महाराजका श्याम वर्ण था। श्रीकृष्णचन्द्र महाराजके जीवनकालके काम किसी भारतसन्तानसे छिपे नहीं हैं। उनका उल्लेख करना निरर्थक है। इस स्थलमें मैं एक कथाका उल्लेख महाभारत और पुराणोंके आधारपर करता हूँ। किसी समय क्षत्री और ब्राह्मणों-का कारणवशात् अति तीव्र विद्वेष बढ़ गया और क्षत्री लोगोंका अत्याचार यहाँतक बढ़ गया कि वे ब्राह्मणोंको अपनी सवारी-तकमें जोतते थे और यदि ब्राह्मण कुछ भी आनाकानी करते तो उनका वध कर डालते थे। क्षत्रियोंके इस अत्याचारसे ब्राह्मण वंश नष्ट होने लगा और अपने वंशको नष्ट होते हुए देखकर जमदग्नि ऋषि और उनकी भार्य्या रेणुकाको क्रोध हुआ कि दिनरात अरण्यमें निवास करते हुए यही विचार करने लगे कि कोई ऐसा शूरवीर ब्राह्मण उत्पन्न हो जो इन ब्रह्मघातक क्षत्रियोंको दण्ड दे जिससे ब्राह्मण-वंशकी रक्षा हो। उनके इस विचारका परिणाम यह हुआ कि रेणुका गर्भवती हुई और जो विचार उनकी मनोवृत्तिमें जमा हुआ था उसकी छाप गर्भस्थ बालकपर पड़ी। परिणाम यह हुआ कि उनके गर्भसे क्षत्रीविद्वेषी वीर ब्राह्मण श्रीपरशुरामका जन्म हुआ। उन्होंने तरुणावस्थाका आरम्भ होते ही क्षत्रियवंशको

नष्ट करना आरम्भ कर दिया। सबसे प्रथम हिमालयके तालजंघ क्षत्रियवंशको नष्ट किया। तालजंघ क्षत्रियोंके रक्तसे ताल नदी बहने लगी। अब तक वह नदी ताल नामसे प्रसिद्ध है जो कि जिला गढ़वालमें है। परशुरामजीके इस पराक्रमकी इतनी महिमा बढ़ी कि भारतवासी उनको दूसरा राम अर्थात् ईश्वरका अवतार मानने लगे। इसी प्रकार राजा कुरुके अनेक सन्तान उत्पन्न होनेसे राजा पाण्डु और कुन्तीके मनमें ईर्षा उत्पन्न हुई और इसी कारण दम्पतिने अपनी मनोवृत्तिकी धारणासे युधिष्ठिर, अर्जुन, सहदेव, भीम और नकुल ये महा-वीर, बुद्धिमान्, विद्वान्, पराक्रमी, रणकुशल पाँच पुत्र उत्पन्न किये जिन्होंने कि कई अक्षौहिणी सेनासहित कुरु वंशको नष्ट कर दिया। अब पाठक विचार कर सकते हैं कि मनकी धार-णाशक्तिसे ही स्त्री-पुरुष मिलकर विद्वान्, वीर, सद्गुणी, रूपवान् और पराक्रमी सन्तान उत्पन्न कर सकते हैं।

एक सुप्रसन्ना और आरोग्यवती युवावस्थाकी स्त्रीको १७ मासका एक पुत्र था। एक दिवस वह स्त्री एक मेलेमें जाने-वाली थी। उसने विचारा कि पुत्रको मेलेमें कहाँ ले जाऊँगी, इसको थोड़ी अफीम खिलाकर घर ही सुला दूँ; नौकर इसकी देखरेख रक्खेगा। उस अभागी स्त्रीको यह मालूम न था कि बालकको अफीमकी कितनी मात्रा दी जाती है, इस कारण अफीम अधिक खिलाकर मकानपर नौकरको छोड़ मेलेमें चली गई। जब वह लौटकर आई, और उसने बालकको गोदीमें उठाया, तब उसकी गर्दन नीचेको लटक गई। ध्यानसे देखा, तो बालक मृतक हो गया था। बालककी गर्दन लटकनेसे

उस मूर्खा स्त्रीने यह अनुमान किया कि इस नौकरने इस बालककी गर्दन तोड़ दी है। उस नौकरको पुलिसके हवाले किया। नौकरने पुलिसमें सब बात खोल दी और बच्चेकी लाशकी परीक्षा डाक्टरसे कराई। डाक्टरने कहा कि इसकी मृत्यु अफीमसे हुई है। तब तो बालककी हत्याका अपराध स्त्रीपर लगा, परन्तु वह स्त्री जज और जूरियोंके विचारसे निर्दोष साबित हुई। क्योंकि उसने मारनेकी इच्छासे बालकको अफीम नहीं दी थी और अफीमकी मात्राका परिमाण भी वह न जानती थी।

इस प्रकार उसके प्राण तो बच गये, किन्तु वह अपने बालकको अपने हाथसे खो बैठी। उस कमनसीबको पुत्र-विछोहका दण्ड कुछ कम न हुआ। स्त्री कोर्ट (न्यायालय) से छूटकर बहुत चिन्तित और शोकातुर रहने लगी। इसी दशामें उसको दूसरा गर्भ रहा। उसका पहला बालक बहुत रूपवान था। अपनी भूलसे उसने उसे अपने हाथसे मार डाला था और कोर्टमें उसकी फजीहत हुई थी, इस बातसे वह बहुत दुःखित रहती थी। इसी दशामें दूसरा पुत्र उत्पन्न हुआ। जब वह २२ मासका हो गया, तब भेजेके रोगके कारण उसे ज्वर उत्पन्न हुआ और उसी रोगसे वह मर गया। माताके दुःखी और शोकापन्न रहनेका असर गर्भमें ही बालकके दिमागपर पहुँचा था, इसी कारण बालकको दिमागका रोग हुआ। इस बालकके मरनेसे स्त्री और भी अधिक शोकाकुल रहने लगी। इतनेमें तीसरा बालक उत्पन्न हुआ। यह दूसरेसे भी निर्बल था। इसलिए दाँत फूटनेके रोगसे मर गया। अब

इन बालकोंके मरनेसे स्त्रीके शोकका कुछ ठिकाना न रहा। उसका मस्तक इतना गर्म रहने लगा कि मस्तकपर शीतल जल डाला करती, अथवा जलका भीगा हुआ कपड़ा मस्तकपर रखती थी। इस कारण चौथा बालक जो उसके गर्भमें था, उसके मस्तकमें जल भरनेके रोगके उत्पन्न होनेका बीज गर्भाशयमें ही जम चुका। जब चौथा बालक उत्पन्न हुआ, तो उसका मस्तक और बालकोंके मस्तकसे बड़ा था। कैसे दुःखकी बात है कि एक सालका होकर वह बालक भी मस्तकके जलोदर रोगसे मर गया। अब इस बातको विचारना चाहिए कि पहला बालक जो बिलकुल तन्दुरुस्त और खूबसूरत था, उस स्त्रीकी भूलसे अकाल मृत्युको प्राप्त हुआ और शेष तीन बालकोंकी मृत्युका कारण वही पहिला बालक हुआ, जिसके बिछोहका शोक उस स्त्रीको दिनरात सताया करता था। अनेक स्त्रियोंकी सन्तान बाल्यावस्थामें ही मृत्युको प्राप्त हो जाती है। इसका कारण गर्भकालमें स्त्रीकी चिन्ता और शोक है। प्रत्येक गर्भवतीको उचित है कि गर्भवती होनेकी हालतमें सदा प्रसन्नचित्त रहे, पिछले शोकको पास न आने दे, मनोरंजक कथायें कहे-सुने, सौन्दर्य्यमय चित्र देखे और सदा शुभ ध्यान रक्खे, तो अवश्यमेव उसका बालक दीर्घजीवी, सुन्दर और रूपवान् होगा। अन्यथा चिन्तित गर्भवती स्त्रीको पुत्रसे भरी पूरी गोदी रखनेकी आशा कदापि न करनी चाहिए।

एक कृषक स्त्री-पुरुषका जोड़ा हिमालयकी तराईके निर्जन जंगलमें रहता था। एक साल अनायास दुर्भिक्ष पड़ गया, इस कारण वह जोड़ा वृक्षोंकी छाल, पत्र तथा कन्द-मूल-फल

खाकर अपने शरीरकी रक्षा करने लगा। इसी हालतमें उसकी स्त्री गर्भवती हो गई। समय पाकर उसे लड़का उत्पन्न हुआ। वह लड़का बहुत ही निर्बल और कृश था। बेचारे दोनों स्त्री-पुरुष उस बच्चेका पोषण करते रहे; परन्तु वह बालक सदैव उदर रोगसे पीड़ित रहने लगा। बालककी इस पीड़ाका कारण चतुर पाठक स्वयं सोच सकते हैं कि मनुष्य जातिके आहारसे भिन्न, पशु जातिके आहारसे उस समय माता-पिताका पोषण होता था, और सदैव माता-पिताको पेटकी ज्वाला निवृत्त करनेकी चिन्ता लगी रहती थी। उस समय उन्हें मनुष्य जातिके विशेष खाद्य पदार्थोंके न मिलनेसे पशुजातिके खाद्य पदार्थों द्वारा क्षुधा-निवृत्ति करनी पड़ती थी। इसी कारण वह बालक कृश, दुर्बल और उदररोगी रहता था। दो सालके पीछे वह स्त्री फिर भी गर्भवती हुई। उस समय उस प्रान्तमें अन्नकी बहुत उपज हुई। उन दोनों स्त्री-पुरुषोंने स्वयं जमीनमें अन्न बोया और बाकी जमीन दूसरे मनुष्योंको देकर उनसे अन्न उत्पन्न कराया। इस प्रकार सैंकड़ों रुपयोंका अन्न बेचकर वे स्त्री-पुरुष सुखपूर्वक रहने लगे। ऐसी ही निश्चिन्ततामें उस (स्त्रीको) दूसरा बालक उत्पन्न हुआ। वह खूब हृष्ट-पुष्ट, आरोग्य और सुन्दर था। यह लड़का बड़ा होनेपर बहुत बुद्धिमान् निकला, यहाँ तक कि उसने उस जंगलमें दूसरे ग्रामोंसे बहुतसे किसानोंको बुलाकर अपने नामपर मोहनपुर नामका ग्राम बसाया।

इन प्रमाणोंसे आप समझ सकते हैं कि माता-पिताके शोक और चिन्ताका असर गर्भस्थ बालकपर कैसा पड़ता है। इस समय भारतके प्रायः सब प्रान्तोंमें दुर्भिक्ष बना रहता है। कुछ आसूदा

और साधारण स्थितिके लोगोंको छोड़कर समस्त भारतके गरीब स्थितिवाले स्त्री-पुरुषोंको दिनरात पेटकी ज्वाला निवृत्त करनेको अन्नकी ही चिन्ता रहती है। ऐसी गरीब स्थितिमें इस समय जो संतान भारतमें उत्पन्न हो रही है, वह प्रायः रोगी, कृश और चिड़चिड़े स्वभाववाली होती है। उसके हाथ-पैर और मुख सूखे तथा पेट निकले हुए दिखते हैं। बड़े होने पर ऐसे निकम्मे बच्चोंसे जाति तथा देशका क्या कल्याण हो सकता है ? यदि भारतवासी अपनी सन्तानकी रक्षा करना जानते, तो यह समय देखनेमें न आता।

बालकके शरीरकी उत्पत्तिमें पिता केवल एक बिन्दु वीर्य्य देकर ही अपना कर्त्तव्य पूर्ण कर देता है; परन्तु माताके समस्त शरीरके तत्त्वोंसे बालकका शरीर बनता है; और इसके लिये मिनट दो मिनट नहीं, पूरे ९ मास १० दिवसपर्यंत माताके शरीरसे पोषण पाकर बालक जन्म लेता है। तब उसका कितना असर पड़ना चाहिए ?

बालकके शरीरमें पिताके एक बूंद वीर्य्यका असर अत्यल्प कालमें ही कितना प्रबल हो जाता है, इसका वर्णन नीचे किया जाता है। एक मनुष्य जातिका क्षत्री था। उसका द्विरागमन अर्थात् मुकलावा होकर आया। विवाहके समयसे एक साल या तीन साल पीछे जो नवीन वधूका आगमन होता है, उसको द्विरागमन, गौना अथवा मुकलावा कहते हैं। युक्तप्रदेश अर्थात् उत्तर भारतमें तथा भारतके अन्य प्रान्तोंमें भी यह एक आधुनिक चाल इस कारणसे चल निकली है कि वर-वधूका विवाह छोटी उमरमें होता है। इसलिये एकसे तीन साल पर्य्यन्त

वधूको विवाह होनेके बाद भी पिताके घरमें रहना होता है। इतने समयमें वर-वधू कुछ पक्क उमरके हो जाते हैं। जो हो, यह रीति आधुनिक है, प्राचीन नहीं। विवाहका उत्तम समय जब १६ वर्षकी कन्या और २५ वर्षका वर हो, तब कहा जाता है। प्राचीन आर्य्योंका नियत किया हुआ यही समय है। उस क्षत्रिय-वधूके ससुरालमें आते ही पुष्पदर्शन हो गया अर्थात् वह रजस्वला हो गई। समयपर स्नान करके निवृत्त हुई। स्त्रीकी अवस्था उस समय १६ सालसे कुछ ऊपर थी। इस क्षत्रीका एक मित्र क्षत्री ही था जो उस ग्रामका जमींदार था। वह मद्य पीनेका बड़ा ही शौकीन था। शराबी मित्रने अपने मित्रसे प्रथम स्त्रीगमनका आनन्द मनानेके लिये कहा कि थोड़ासा मद्यपान करके नववधूसे रमण करो। वह बेचारा कभी मद्यपान न करता था, इस कारण उसने पहले तो मद्य पीनेसे इंकार किया; परन्तु पीछे उस शराबी मित्रने हठपूर्वक उसको मद्यपान करा ही दिया। जब मद्यका उन्माद उत्पन्न हुआ, तब थोड़ीसी और भी पिला दी। परिणाम यह हुआ कि वह मनुष्य थोड़े समयके बाद बकने-झकने और नाचने-कूदने लगा। इसके बाद उसके मित्रने उसको घर भेज दिया। समयकी बात है, उसी रात्रिको उसकी स्त्री गर्भवती हो गई। गर्भकी अवधि पूर्ण होनेपर कन्या उत्पन्न हुई। जब यह कन्या पैरोंसे चलने और बालकोंके साथ खेलने लगी, तो मद्यके उन्मादमें जो चरित्र इसके पिताने किया था, वही वह करने लगी। जब उसके दिलमें उमंग उठती, तब वह पिताके समान नाचने कूदने लगती और निरर्थक शब्द उच्च स्वरसे बोलने

लगती । इस लड़कीका सद्गुणी पिता कदापि मद्य न पीता था; परन्तु दुर्गुणी मित्रने उस दिवस हठपूर्वक उसको मद्य पिला दी । इस कारण वह स्वयं तो थोड़े समय पर्य्यन्त ही उस उन्मादक पदार्थके हर्षमें रहा, परन्तु उसकी कन्या जीवन भर उसी स्थितिमें रही ।

मातापिताके मनमें जो खराब स्थिति गर्भाधानके समय रहती है, वह बालकका जीवनपर्यंत साथ नहीं छोड़ती; इसी कारण उस लड़कीको उन्मादके दौरे (आवेश) की आदत उसकी जिन्दगी पर्य्यन्त रही । मद्य पीनेवाली जातियोंमें प्राय: ऐसा देखा जाता है कि उनके बालक कभी कभी पागलके समान उमङ्गमें आकर अनाप-शनाप .बकने लगते हैं । यह व्यसन उनके कुलको पीढ़ी दर पीढ़ी बिगाड़ता रहता है । मद्यप मनुष्य अपने मनको काबूमें नहीं रख सकता । एक और यूरोपियन डाक्टर प्लूटार्कने सलाह दी है कि जब तक स्त्री-पुरुषकी जोड़ीका मन शान्त, आल्हादित, और व्यसन तथा चिन्तारहित न हो, तब तक सन्तानोत्पत्तिके निमित्त सहवास कदापि न करे । अथवा जिस समय उसने कोई महत् अपराध किया हो, या किसीके साथ छल-कपट अथवा दगाबाजी की हो कि जिससे उसका अन्त:करण तथा मन भयभीत हो, उस समय वह सन्तानोत्पत्तिका बीजारोप कदापि न करे, नहीं तो सन्तानमें भी वे ही लक्षण होंगे । एक मनुष्य जिसका हम नाम नहीं लिखना चाहते, एक बड़ी रियासतमें ओवरसियरके पदपर नौकर था । रियासत भरकी सड़कों, पुलों, मकानों, तालाबों और नहरों आदिका काम

उसके हाथमें था; परन्तु वेतन उसे इतना अल्प मिलता था कि उससे उसके बड़े परिवारका यथोचित भरणपोषण न होता था। इसलिये उसको हर एक काममेंसे चोरी करनी पड़ती थी। वह थोड़े कामको बहुत बताकर सरकारी खजानेसे रुपया लेता था; परन्तु इस चोरी करनेसे उसका मन सदैव दुःखी रहता था। ऐसी ही दशामें उसकी स्त्रीको एक लड़का उत्पन्न हुआ। जब वह सात वर्षकी उमरका हो गया, तब स्कूलमें पढ़नेके लिये बैठाया गया। उस लड़केकी चोरी करनेकी आदत ऐसी प्रबल थी कि जब तक वह स्कूल न जाता था, तब तक घरमें ही जो चीज पाता चोरी करता था। स्कूल जानेपर, दूसरे विद्यार्थियोंकी पुस्तक, पेन्सिल, कागज़, आदि वस्तुएँ चुराकर ले जाता था। इससे स्कूलके तमाम विद्यार्थी और मास्टर लोगोंने तङ्ग होकर उस लड़केको स्कूलसे निकाल दिया। स्कूलका हेडमास्टर उस लड़केको लेकर उसके पिताके पास आया और उससे सब व्यवस्था कह सुनाई। मास्टरकी बात सुनकर ओवरसियरके नेत्रोंमें जल भर आया और वह यह कहने लगा कि मास्टर साहब, यह अपराध इस लड़केका नहीं है। यह अपराध मुझ कमनसीब और अधम कामोंसे भय न माननेवालेका है। आज तक जो अपराध मैंने किया है, उसको इस समयपर्य्यन्त कोई नहीं जानता; परन्तु न्यायकारी परमात्माकी प्रेरणासे मेरे किये हुए पापोंका फल इस बच्चेमें आया है, जिसकी शिक्षा मैं अब ग्रहण करता हूँ। मैंने सारी जिन्दगी ईमानदारीसे व्यतीत की, लेकिन मौका आ जानेसे मुझे गुप्त रूपसे पापकर्म करने पड़े। मेरी ईमानदारीके समयमें उत्पन्न हुआ

बड़ा लड़का बहुत ही योग्य, प्रामाणिक और सुस्वभाववाला है। इस लड़केकी उत्पत्ति मेरे पापके समयमें हुई है, इसी कारण यह दुर्गुण इस बालकमें मेरा ही दिया हुआ है। प्रकृतिकी ओरसे इस समय जो इन्साफ (न्याय) मुझे मिला है, उसको मैं स्वीकार करता हूँ। इस दृष्टान्तसे सब लोग विचार सकते हैं कि माता-पिताके सद्‌गुण और दुर्गुण सन्तानमें उतरकर आते हैं। चाहे वे सद्‌गुण अथवा दुर्गुण प्रकट रूपसे हों, चाहे गुप्त रीतिसे किये हुए हों, लेकिन जिन जिन सद्‌गुणों और दुर्गुणोंका असर स्त्री-पुरुषोंके मनपर होगा, वे अवश्य ही बालकपर उतरेंगे।

एक मनुष्य साधुओंके अखाड़ेमें नौकर था। किसी समय उस अखाड़ेमें चोरी हो गई। चोरीमें बहुतसा रुपया और सोने चाँदीका सामान चला गया। उस समय साधुओंको ऐसा सन्देह हुआ कि इसी नौकरकी मिल्लतसे यह चोरी हुई है। इसलिये उन्होंने उस नौकरको बहुत तंग किया और कहा कि तेरी मिल्लतसे ही इतनी बड़ी चोरी हुई है, तू चोरोंका नाम बतला दे। परन्तु उस गरीबको चोरीका कुछ हाल मालूम न था, इससे वह कुछ भी न बतला सका। निदान उन साधुओंने उस मनुष्यको इतना कष्ट पहुँचाया कि जिसका वर्णन करते कलेजा काँपता है। उसकी उँगलियोंमें कपड़ा लपेटकर तेलमें भिगोकर आग लगा दी और फिर उससे चोरीका हाल पूछने लगे; परंतु उसको चोरीके सम्बन्धमें कुछ भी मालूम न था, बताता कहाँसे ? जो हो, उस गरीबके दोनों हाथोंकी उँगलियाँ जलनेसे नष्ट भ्रष्ट हो चुकीं, तब साधुओंने आग बुझाई। वह

नौकर उन साधुओंकी नौकरी छोड़कर घर चला गया। वहाँ उसकी उँगलियोंकी वेदना बिलकुल निवृत्त नहीं हुई थी कि उसने स्त्रीके साथ सहवास किया, जिससे उसकी स्त्री गर्भवती हो गई। अवधिपर लड़का उत्पन्न हुआ। देखा तो उसके दोनों हाथोंमें उँगलियां न थीं; केवल उँगलियोंके ठिकानेपर कमलके बीज (कमल गट्टे) की आकृतिका मांस निकला हुआ था, और वह चमड़ेकी जिल्द (पर्त) से ढका हुआ था। इस दृष्टान्तसे स्पष्ट हो जाता है कि पिताके कष्ट और अंग-भंग होनेका असर सन्तानमें आता है।

आप लोगोंने भारतके विश्वकर्म्माका नाम सुना होगा। वह कितना प्रसिद्ध कलाकुशल और बुद्धिवाला था। उसकी उत्पत्ति-का हाल तैलङ्ग इतिहासमें इस प्रकार लिखा है—विश्वकर्माका पिता लोहार और बढ़ईका काम करता था। एक समय किसी राजाके किलेमें ऐसी कलोंके निर्माण करनेकी आवश्यकता पड़ी कि जब दुश्मनोंका हमला किलेपर हो, तब मनुष्य किसी पशुकी आकृतिमें छिपकर शत्रुओंको नष्ट कर सकें, और उस पशुकी आकृति भी ऐसी होनी चाहिए कि अन्दर प्रवेश किया हुआ मनुष्य सबको आसानीसे देख सके, शस्त्र चलानेका काम भी कर सके, और वह आकृति दृढ़ भी ऐसी हो कि विप-क्षियोंके शस्त्राघातोंसे टूटने न पावे। किलेके हर एक बुर्जपर ऐसे पशुओंकी चार चार आकृतियाँ इस रीतिसे रक्खी जायँ कि जो किलेसे दूरस्थ अथवा समीपस्थ शत्रुओंका नाश करने-में काम दे सकें, और अवसर पड़ने पर बुर्जके अन्दर भी समा जायँ, अर्थात् किलेके किसी भागमें शत्रुका पैर पड़ते ही,

वे बुर्जके भीतर अन्तर्हित हो जायँ। इसके सिवा प्रत्येक पशु-की आकृतिपर एक मनुष्य सवारकी आकृति ऐसी होनी चाहिए कि जो शत्रुके गोले गोलियोंके आघातसे न टूट सके; परन्तु जिस समय शत्रु समीप आवे और पशुकी आकृति बुर्जमें समा जाय, तो उसी समय मनुष्याकृति उसके ऊपरसे उतरकर फट जाय और फटते ही उसमेंसे अनेक प्रकारके अस्त्र-शस्त्र निकलकर शत्रुओंको नष्ट कर डालें। सम्भव है कि इस कथाको पढ़कर अनेक लोग हास्य करें; परन्तु हँसने अथवा आश्चर्य करनेकी कोई बात नहीं है। तैलंग प्रान्तमें कितने ही प्राचीन किले ऐसे थे कि जिनकी रचना (आकृति) के निशान अब तक मिलते हैं। उनमें गुप्त मार्गके द्वारा किलेसे निकल-कर पहाड़की कन्दराओंमें प्रवेश करनेका सुभीता है, बावड़ी और कूपके द्वारा किलेके अन्दर पहुँचनेके भी मार्ग हैं। लाहौर-डीग और भरतपुरकी तोपोंके समान तोपें बनानेवाले तो क्या इस वक्त उनके चलानेवाले भी भारतमें नहीं हैं। शत्रुकी सेना-को मूर्च्छित करना, अग्निबान-जलबान इत्यादि युद्धप्रक्रियाकी कितनी ही विचित्र कलाएँ भारतमें थीं। चांग और चित्तौड़के किले तथा पहाड़ी रणस्तम्भगढ़ किलेकी रचना प्राचीन युद्ध-विद्याके रणपुङ्गव आर्य्योंकी रणकुशलताका स्मरण कराती है। यद्यपि ये बातें इस समय भूतकालके गर्भमें चली गई हैं, तो भी अभी उनके सुबूत उपस्थित हैं। अब आगे विवेचनीय विषयको सुनिये। राजाज्ञा सुनकर विश्वकर्म्माके पिताने ऐसे यंत्र निर्म्माण करनेका बीड़ा उठाया। पाठक स्वयं विचार सकते हैं कि जिस समय विश्वकर्माके पिताने इस कामको सिद्ध

करना चाहा होगा, उस समय उसने अपने दिल और दिमागसे कितना काम लिया होगा और उसकी विचारशक्ति उस समय कितनी उत्तेजित होगी। उसे विचारना पड़ा होगा कि किलेके बुर्जकी आकृति कैसी होनी चाहिए, वह धातु कैसी धातुओं-से संयुक्त होनी चाहिए कि जिससे निर्मित पशु आकृति-पर शत्रुके गोला गोली तथा शस्त्रोंका अभिघात असर न करे, उस मनुष्याकृतिमें क्या क्या मसाले और शस्त्र होने चाहिएँ, और उनको किस विधिसे रखना चाहिए कि शत्रुओंके समीप आते ही फटकर शत्रुओंका मटिया मैदान कर दें, आदि। जिस समय विश्वकर्माके पिताका इन सब बातोंके विचारके लिये दिमाग और दिल उथल पुथल कर रहा था, उसी समय विश्वकर्माका बीजारोप उसकी माताके गर्भमें हुआ। इसी कारण विश्वकर्मा विचित्र बुद्धिवाला और कला-कौशलमें बाल्यावस्थासे ही निपुण हुआ, जिससे उसका नाम अभीतक भारतके इतिहासोंमें चला आता है।

एक अँगरेजी पुस्तकमें लिखा है कि फिलाडेलफियाके एक लोहारके यहाँ एक बड़ी बुद्धिमती और चतुर लड़कीका जन्म हुआ। उसकी बुद्धिमत्ताका कारण यह लिखा है कि उस छोकरीका पिता लोहार था। वह कुछ दिनोंसे हवाई जहाज बनानेके विचारमें निमग्न रहता था। उसे पानीमें तैरनेवाले जहाजके समान हवाई जहाज निर्माण करनेमें कितना अधिक विचार करना पड़ा होगा, इसका अनुमान सहजमें किया जा सकता है। जिस समय वह इस उधेड़-बुनमें निमग्न था, उसी कालमें उसकी स्त्री गर्भवती हो गई और गर्भकी अवधि

व्यतीत होने पर उसे एक कन्याकी प्राप्ति हुई। वह कन्या संसारमें सुधन्या हुई। उसकी बुद्धि इतनी चमत्कारिणी थी कि बड़े बड़े शिक्षित और कलाकौशलविद् लोगोंके विचारके समान उसके विचार होते थे। उस कन्याके मस्तककी परिधि २३ इंचकी थी।

इन अनेक प्रमाणोंसे स्पष्ट सिद्ध है कि जिस समय पिताके मस्तिष्कमें जिस प्रकारके विचारोंका समावेश रहता है, उस समय यदि उसके वीर्यद्वारा स्त्री गर्भवती हो जाय, तो उससे जो सन्तान (लड़का अथवा लड़की) उत्पन्न होगी, वह उसी प्रकारके (भले अथवा बुरे) विचारोंसे युक्त होगी और युवावस्था पाकर उसकी बुद्धिका पूर्ण विकाश होगा।

इति तृतीय :शाखः।

चतुर्थः शाखः ।

बालकोंमें माता-पितासे उतरी हुई तासीर ।

महर्षि लोगोंका कथन है कि—"आत्मा वै जायते पुत्रः" अर्थात् "पुत्र अपने पिताका ही रूपान्तर है ।"

प्रकृतिका नियम है कि जैसी तासीर बीजकी होती हैं वैसी ही बीजसे उत्पन्न हुए वृक्षकी होती है । जिस प्रकारके वृक्षका बीज होता है, उस बीजसे उत्पन्न हुए वृक्षमें शाखा, पत्र, पुष्प तथा फलादि भी उसी वृक्षके समान होते हैं । विरुद्ध जातिकी वनस्पतिका स्वभाव है कि उसकी बेल दूसरी वनस्पति या अन्य किसी पदार्थके आधारसे ऊपरको चढ़ती है । यही हाल जानवरोंका है । बिल्ली या शेरका छोटा बच्चा भी शिकारपर दौड़ता है । खरगोश (शशा) का बच्चा जन्मसे ही भयभीत होता है । नेवलेका छोटा बच्चा भी सर्पपर आक्रमण करता है । जलमें रहनेवाले मछली-कछुए आदिके बच्चे जन्मसे ही जलमें तैरने लगते हैं। काक स्वभावसे ही चंचल होता है । कबूतर भोला और सीधा होता है । इसी प्रकार परम्परा सम्बन्धसे संतानमें तासीर उतरती चली आती है । उत्तम शिक्षा और विद्याभ्याससे मन और बुद्धिकी वृद्धि होती है, लेकिन साधारण तासीर नहीं बदलती । वह माता-पिताके रज और वीर्य्यके अनुसार ही होती है । जैसे

वृक्षके बीजसे वृक्ष, पक्षीके अंडेसे पक्षी और सर्पके अंडोंसे सर्प ही उत्पन्न होते हैं, उसी प्रकार मनुष्यजातिमें भी मनुष्यके रज-वीर्य्यकी तासीरके समान ही बालक उत्पन्न होते हैं।

इस विषयमें हरबर्ट स्पेन्सर नामका यूरोपियन तत्त्ववेत्ता कहता है कि मनुष्यका वीर्य्य मनुष्याकृति बननेकी स्वाभाविक शक्ति रखता है। बाँसके बीजमें अंकुर उत्पन्न होनेके अन्तर जैसे जैसे उसकी वृद्धि होती है, वैसे वैसे गाँठदार पोई निकलती चली जाती है। बेरके वृक्षका एक काँटा मुड़ा हुआ और एक सीधा उत्पन्न होता है। बबूलके दोनों काँटे सीधे, एक कुछ लम्बा और एक कुछ छोटा होता है। इसी प्रकार मनुष्यबीजकी तासीर समझो। इसी प्रकार डारविन नामका यूरोपियन विद्वान् लिखता है कि अतिशय सूक्ष्म बीजाणुओंमें शरीरकी आकृति छिपी हुई विद्यमान रहती है। वे धीरे धीरे पोषण पाकर मनुष्यकी आकृतिमें परिणत हो जाते हैं और फिर बढ़ते बढ़ते बालक बनकर उत्पन्न होते हैं। बालकोंमें माता-पिताके समस्त गुण-दोष उतरकर आते हैं। अतिशय सूक्ष्म अणु जो दृष्टिगत नहीं होते, समस्त शरीरमें चलते फिरते हैं और यथेष्ट पोषण मिलनेसे स्वयं वृद्धिंगत होते रहते हैं। शरीरकोषकी उत्पत्ति धीरे धीरे होती है। यह सब उत्पत्ति-क्रम बालकमें माता-पितासे उतरता है और बालक अर्थात् सन्तानरूपमें प्रकट होता है। कभी कभी कितने ही गुण या तत्त्व कितनी ही पीढ़ी तक छिपे रहते हैं और फिर वे ही गुण और तत्त्व समय पाकर पाँचवीं अथवा छठी पीढ़ीमें प्रकट हो जाते हैं। शरीरवृद्धिकी हर हालतमें शरीरकोष गुणों और

तत्त्वोंको उत्पन्न करते हैं। वे अणु जो अपनी सूक्ष्मताके कारण दृष्टिगत नहीं होते, वीर्य्यमें एकत्र होनेके स्वाभाविक गुण रखते हैं। जर्मन डाक्टर वीसमेनने भी ऐसा ही लिखा है कि बालककी उत्पत्ति करनेवाला वीर्य्य जीवनरक्षक तथा अतिसूक्ष्म अणु-परमाणुओंसे बना हुआ है। उसमें एक विलक्षणता और है। वह यह कि वे सूक्ष्म परमाणु प्रमाणमें तो समान हैं परंतु पृथक् पृथक् गुणोंसे विशिष्ट हैं और बालकके शरीरके बनानेमें प्रत्येक तत्त्वसे युक्त हैं। यह बीज पदार्थ सूक्ष्म रूपसे मनुष्यकी हर अवस्थामें विद्यमान रहनेपर भी नहीं बनता, जैसे बाल्यावस्थामें तत्त्व रहनेपर भी वीर्य्यजन्तु नहीं बनते, परन्तु पुरुषकी युवावस्था प्राप्त होते ही वीर्य्य-जन्तुओंका बनना आरम्भ हो जाता है। आगे वृद्धावस्था (७० वर्षसे ऊपर) आनेपर वीर्य्य-जन्तुओंका बनना बन्द हो जाता है। परंतु वीर्य्यके तत्त्व सूक्ष्म रूपसे वृद्ध शरीरमें भी विद्यमान रहते हैं। यदि न रहें तो एक धातुके नष्ट होनेसे शरीर ही स्थिर न रह सके। वीर्य्यजन्तु बननेकी शक्ति पितासे पुत्रोंमें और मातासे पुत्रियोंमें पहुँच जाती है और पुश्त दर पुश्त ये तत्त्व माता-पितासे सन्तानोंमें उतरते चले आते हैं। इसी प्रकार मातृज रज और पितृज वीर्य्यमेंसे अनेक प्रकारके गुण अथवा अवगुण सन्तानमें उतरते हैं। जिन गुणोंके तत्त्वोंसे मातृज रज और पितृज वीर्य्य गर्भाधानके समय विशिष्ट हो, वैसी ही प्रकृति सन्तानकी होती है। सन्तान उत्पन्न करनेके अनेक तत्त्व मनुष्यके शरीरमें विद्यमान रहते हैं। जैसे वृक्षलतादि वनस्पतियोंमें अनेक शाखाएँ और पत्र-पुष्प-फल उत्पन्न करनेके

तत्त्व रहते हैं, इसी प्रकार प्रत्येक शरीर जीवजन्तु वा मनुष्यमें समझो; और ये तत्त्व जिस समय स्त्री-पुरुषोंमेंसे निकलकर सन्तानोंके शरीरमें चले आते हैं उस समय सन्तानकी उत्पत्ति होना बन्द हो जाता है। दूसरी किसी व्याधिके कारणसे स्त्री-पुरुषके सन्तान उत्पन्न करनेवाले तत्त्व दूषित हो जायँ अथवा उनकी निर्गत शक्तिमें अन्तर पड़ जाय, तो सन्तान उत्पन्न होना बन्द हो जाता है। प्रत्येक स्त्री-पुरुषके शरीरमें अनेक प्रकारके तत्त्व हैं। उनसे शरीरका पोषण होता है और वेही तत्त्व परिणाम रूपसे सन्तानोत्पत्तिके कारण हैं। सन्तान उत्पन्न करनेकी जो सामर्थ्य माता-पितामें रहती है, वही उनके बालकोंमें चली आती है। जब स्त्री-बीज पदार्थ पुरुष-बीज पदार्थसे मिलता है, तब दोनोंके मिलनेसे बढ़नेकी शक्ति उत्पन्न होती है। बढ़ानेकी शक्ति माताके शरीरके तत्त्वोंकी सहायतासे होती है। प्रथम बीजके दो भाग, फिर चार और चारसे आठ भाग होते हैं। इसी प्रकार क्रमपूर्वक बढ़ता जाता है। ईडस नामका पदार्थ जो कि अतिसूक्ष्म है, बीजमें अधिक होता है और यह पदार्थ मातापिता और दादा परदादासे बराबर उतरता हुआ सन्तानोंमें आता है। इसी कारणसे सन्तानोंके शरीरकी आकृति भी बापदादाओंके समान, उतरती हुई चली आती है। प्रोफेसर वीसमेन कहता है कि बालकके अवयवोंकी समस्त सामग्री पितृवीर्य्य तथा मातृरजमें गुप्त और सूक्ष्म भावसे विद्यमान रहती है और वह मातापिताके रजवीर्य्यके संयोगसे गर्भाशयमें बालककी आकृति बनाकर प्रत्यक्ष रीतिसे दिखने लगती है। H.252.

शारीरिक विद्याके ज्ञाताओंका कथन है कि बालकके शरीरकी बनावट एक इंचके दो सौवें भाग मनुष्यजातिके बीजसे होती है। विचार करनेका स्थल है कि बालकके तमाम शरीरके अवयव तथा परम्परा-सम्बन्धसे उतरती हुई बाप-दादाओंकी तासीर आदि गुणोंका समावेश इस अति सूक्ष्म बीजमें कैसे रहता है? परन्तु यह प्रश्न वट बीजके समक्ष अति तुच्छ है। उस छोटेसे बीजसे कितने भारी वृक्षकी उत्पत्ति होती है। वेदान्तशास्त्रमें वट-बीजको ब्रह्माण्डकी उपमा दी है।

यदि आप एक बार दृष्टि देकर किसी भी देश और जाति-के मनुष्योंको देखेंगे, तो उनका स्वभाव और डीलडौल भी प्रायः मातापिताके समान पावेंगे। अफ्रिकाके सिद्दी लोगोंकी सूरत शकल बेडौल और काली होती है, इस कारण उनके बच्चे भी उन्हींके समान सूरत शकल और रंगके पैदा होते हैं। चीनी लोगोंकी बैठी हुई नाक और ठिंगना कद होता है। यूरोपके लोग लम्बी नाक, कंजी आँख, सुडौल बदन और गौरवर्णवाले तथा अमेरिकाके आदिम निवासी ताम्रवर्णके होते हैं। एतदर्थ उनकी संतति भी उन्हींके समान होती है। काबुली पठान अत्यंत क्रोधी और लड़ाके होते हैं। अँग्रेज अभिमानी होते हैं। जर्मन लोग सत्यवक्ता, चतुर और प्रामा-णिक होते हैं। फ्रेंच लोग परस्पर मेल रखनेवाले और लुब्ध होते हैं। नैपाली गोरखे और पंजाबी सिख सिपहगिरीके फनमें चालाक और लड़ाके होते हैं। जैनी लोग अहिंसक, चालाक और व्यवसायमें चतुर होते हैं। हिन्दू लोग निर्बल, संतोषी और भयभीत होते हैं। यह सब तुख्मकी तासीरका असर है।

हमारे आचार्योंके समान यूरोपियन डाक्टर प्रेगरीका मत है कि माता-पिता प्रथम जन्मको व्यतीत करके सन्तानकारूप धारण करते हैं। उक्त डाक्टर साहब ने परीक्षा द्वारा ऐसा ज्ञान प्राप्त किया है कि किसी बालकमें तो माताकी अधिक खासियत आती है और किसीमें पिताकी। जब आप सूक्ष्म दृष्टिसे मातापिता और संतानके प्रत्येक अङ्ग उपाङ्गको देखेंगे तो विशेष अंशमें मातापिताकी आकृतिसे मिलता हुआ संतानका शरीर भी होगा। यहाँपर हमारा प्रयोजन दम्पतिसे है, जार वा जारिणीके लक्षणोंका मिलना संभव नहीं है। क्योंकि प्रसंगके समय लोकमर्यादाका भय स्त्री-पुरुष दोनोंको रहता है। उसीका असर रजवीर्य्यपर पड़ता है। और उस रजवीर्य्यसे बनी हुई संतान प्रायः डरपोक, स्वल्पबुद्धि और जाहिल होती है।

माता-पिताके शरीर वा अंगविशेषकी आकृति भी संतानमें उतरती है।

एक पुरुषके दाँत मुँहसे बाहर निकले हुए थे। उसके दो लड़के और एक लड़की थी। उनके दाँत भी पिताके समान बाहर निकले थे। एक स्त्री भेंड़ी थी, उसीके समान उसकी कन्या भी भेंड़ी हुई। एक सुनारकी छातीपर काला दाग था, उसके पुत्रके पेटपर भी काला दाग (लहसुन) हुआ। एक बढ़ईके हाथमें ६ उँगलियाँ थीं, उसके पुत्रके हाथमें भी छः उँगलियाँ देखी गईं। जिस जिस बकरीके गलेमें दो स्तन होते हैं, उसके बच्चेके गलेमें भी दो स्तन जन्मसे ही निकले हुए दिखाई देते हैं। जो आदमी मोटा होता है, उसकी संतान

भी प्रायः स्थूल शरीरकी होती है। अनेक पुरुषों तथा स्त्रियोंके शरीरमें अधिक बाल देखे जाते हैं। जब उनकी संतान युवावस्थाको प्राप्त होती है, तो उसके शरीरमें भी अधिक लोम देखनेमें आते हैं। इससे मालूम होता है कि माता-पिताकी विकृतियाँ भी कभी कभी बालकोंमें उतर आती हैं।

माता-पिताके रोगोंका संतानमें उतरना।

दम्पत्योः कुष्ठबाहुल्याद्दुष्टशोणितशुक्रजः।
यदपत्यं तयोर्जातं ज्ञेयं तदपि कुष्ठितम्॥

माता-पिताके रोग संतानमें आते हैं। जिन स्त्रीपुरुषोंको कुष्ठकी विशेषता हो, उनका रक्त और वीर्य्य दूषित होकर विकृत हो जाता है और उनसे उत्पन्न हुई संतान भी कुष्ठरोग युक्त होती है।

इसी प्रकार उपदंश, रक्तविकार, विसर्प, अपस्मार, क्षय, सन्धिवात, नासूर, अर्श, प्रमेहादि रोग भी मातापितासे उतरकर बालकमें आते हैं। कुमारी लड़कियोंमें बालप्रदर रोग माताके दोषसे आता है। इसी प्रकार सहजार्श मातापिता दोनोंके अर्शसे उतरकर आता है। इसलिये पाणिग्रहण (विवाह) संस्कार रोगी वर वा कन्यासे न करना चाहिए। धर्मशास्त्रमें आर्य्य ऋषियोंने भी इसका निषेध किया है—

महान्त्यपि समृद्धानि गोऽजादिधनधान्यतः।
स्त्रीसम्बन्धे दशैतानि कुलानि परिवर्जयेत्॥१॥
हीनक्रियं निष्पुरुषं निश्छन्दो रोमशार्शसम्।
क्षय्यामयाव्यपस्मारिश्वित्रिकुष्ठिकुलानि च॥२॥

नोद्वहेत्कपिलां कन्यां नाऽधिकाङ्गीं न रोगिणीम् ।
नालोमिकां नातिलोमां न वाचाटां न पिङ्गलाम् ॥३॥

अर्थ—नीचे लिखे हुए दश कुल चाहे कितने ही धन-धान्यादि सम्पन्न हों, पर उनके साथ विवाहसम्बन्ध कदापि न करे:— १ जो कुल क्रियाहीन हो, २ जो पुरुषार्थहीन हो, ३ जो वेदज्ञानसे रहित हो, ४ जिसके स्त्री-पुरुषोंके रोम अधिक होते हों, ५ जिसमें अर्श (बवासीर) की बीमारी हो, ६ क्षय (तपेदिक) रोग हो, ७ श्वास रोग हो ८ अपस्मार (मृगी) रोग हो, ९ सफेद कोढ़ हो और १० दूसरे अठारह प्रकारके कोढ़ हों । ऐसे विवाहसम्बन्धसे एक कुलके दूषित होनेसे दूसरा कुल भी दूषित होता है । पीतवर्ण (पण्डुरोग) वाली, अधिकाङ्गी, रोगी, बिलकुल लोमरहित अथवा अधिक लोम-वाली, बकवाद—मिथ्या प्रलाप करनेवाली, भूरे नेत्रोंवाली या विकृत नेत्रोंवाली, कानी, भेंड़ी आदि दोषयुक्त कन्यासे भी कदापि विवाहसम्बन्ध न करे ।

उत्तम सन्तानकी उत्पत्तिके लिये आरोग्य, सोलह* वर्षकी उमरवाली, रूपवती, सरल शरीरवाली, प्रियवचन बोलनेवाली, पठित—आर्य्य आर्ष ग्रन्थोंको पढ़नेवाली, धर्मनिष्ठ और कुलके वृद्धोंमें पूज्यबुद्धि रखनेवाली, सुपात्रा कन्यासे वरका पाणि-

---

* ऊनषोडशवर्षायामप्राप्तः पञ्चविंशतिम् ।
यद्याधत्ते पुमान् गर्भं कुक्षिस्थः स विपद्यते ॥
जातो वा न चिरं जीवेज्जीवेद्वा दुर्बलेन्द्रियः ।
तस्मादत्यन्तबालायां गर्भाधानं न कारयेत् ॥

—सु० शा० अ० १०

ग्रहण करना चाहिए, तब इच्छित, गुणी और रूपवान सन्तान होना सम्भव है। पूर्ण आयु भी मातापिताके रजवीर्य्यसम्बन्ध-से सन्तानमें प्राप्त होती है। जिस कुलके मनुष्य दीर्घजीवी और अति वृद्धावस्था पाकर मृत्युको प्राप्त होते हों, ऐसे कुलके स्त्री-पुरुषोंकी जोड़ी मिलनेसे जो बच्चे उत्पन्न होते हैं, वे दीर्घायु पाते हैं। जो स्वल्पायुवाले कुलके स्त्री-पुरुषकी जोड़ीसे उत्पन्न होते हैं, उनकी स्वल्प आयु होती है।

चौथी, पाँचवीं पीढ़ीसे सन्तानमें उतरती हुई तासीर और रंग-रूप।

गुजराती भाषाकी एक पुस्तकमें हमने पढ़ा था कि एक गौर मातापिताके यहाँ काला बालक उत्पन्न हुआ। बालकका रङ्ग बिलकुल सिद्दीके समान था। बालककी इस रङ्गतको देखकर पिताको अपनी स्त्रीपर सन्देह हुआ कि मेरी स्त्री पतिव्रता नहीं है। स्त्रीके शपथ खानेपर भी पतिका सन्देह निवृत्त नहीं हुआ। परन्तु जब उसने फ्रान्समें अपने बाप दादाओंका पता लगाया, तो मालूम हुआ कि बालकसे पहले छट्ठी पीढ़ीका मनुष्य इस खानदानमें अफ्रिकन था। इससे पाँच पीढ़ीके पीछे काला बालक उत्पन्न हुआ।

एक पुस्तकमें लिखा है कि मिसेस ब्रूग नामकी स्त्रीके बाल लाल रंगके थे; परन्तु उसकी सन्तानके बाल बिलकुल काले थे। परन्तु तीसरी पीढ़ीमें उसके पौत्र (पुत्रके पुत्र) के बाल लाल रंगके हुए। इससे यह बात प्रतिपादित होती है कि पितामह अथवा मातामहीके रूप-रंगकी छाप भी पौत्र अथवा पौत्री

पर पड़ती है, जैसा कि मिसेस ब्रूणके बालोंका रंग उसके पौत्रके बालोंमें आया था। आश्चर्य यह है कि उस बालक (पौत्र) के माता-पिताके बाल काले रंगके थे। कितने मातापिता अपठित होते हैं, परन्तु उनकी सन्तान तीव्रबुद्धि और पढ़नेमें विशेष होशियार होती है। इसका कारण यूरोपवाले यही बतलाते हैं कि उनके पूर्वकी छठी पुश्तमें कोई न कोई तीव्र बुद्धिका पठित मनुष्य अवश्य हुआ होगा। इन प्रमाणोंसे यह सिद्ध होता है कि पीछेकी छठी पुश्ततकके गुण आगामी पीढ़ीमें उतरते हैं और ये गुण गुप्तरीतिसे शरीरमें रहते हैं। छठी पुश्ततक वह गुण और रंग उद्भव हो आता है। डाक्टर फुलरका कथन है कि मातापिताको जानना चाहिए कि हमारी भविष्यकी सन्तानमें हमारे समान रूप-गुण, चालचलन और तासीरका प्रतिबिम्ब आया है कि नहीं। क्योंकि मातापिताकी सब प्रकृति सन्तानमें उतरती है। यदि सन्तानमें सद्गुणोंका लक्षण संघटित होता हो, तो उसकी उन्नति करनेका सदुपदेश उसको दे। यदि दुर्गणोंका समावेश जान पड़े, तो उसको निकालने और सद्गुणोंका बीजारोपण करनेका प्रयत्न करे।

आत्रेय ऋषि और उनके अग्निवेषादि शिष्योंके प्रश्नोत्तर।

शिष्योंने पूछा—

सम्पूर्ण देहः समये सुखं च गर्भः कथं केन च जायते स्त्री।
गर्भं चिराद्विन्दति सप्रजापि भूत्वाथवा नश्यति केन गर्भः॥

(१) गर्भ किस समय पूर्ण देहको प्राप्त होकर सुखपूर्वक

उत्पन्न होता है ? (२) अवन्ध्या स्त्री चिरकाल तक गर्भको क्यों धारण करती है ? (३) गर्भ उत्पन्न होकर भी किस प्रकारसे नष्ट हो जाता है ?

आत्रेय ऋषिने तीनों प्रश्नोंके उत्तर इस प्रकार दिये:—

शुक्रासृगात्मामयकालसम्पद् यस्योपचारश्च हितैस्तथार्थैः ।
गर्भश्च काले च सुखी सुखश्च सञ्जायते सम्परिपूर्णदेहः ॥

अर्थात् जिस गर्भका शुक्र (पुरुषबीज), रक्त, आत्मा, जरायु और काल उत्तम होता है और जिस गर्भकी रक्षा गर्भिणी स्त्री हितपूर्वक करती है, वह गर्भ परिपूर्ण देहवाला होकर सुखपूर्वक नियत समय (९ मास १० दिवस) गर्भाशयमें व्यतीत करके उत्पन्न होता है ।

योनिप्रदोषान्मनसोऽभितापात् शुक्रासृगाहारविहारदोषात् ।
अकालयोगाद्बलसङ्क्षयाच्च गर्भश्चिराद्विन्दति सप्रजापि ॥

अर्थात् योनिदोषसे (योनिमें अथवा गर्भाशय तथा उसके उपाङ्गोंमें किसी प्रकारका रोग होनेसे), मनके अभितापसे, वीर्य्य, रक्त और आहार विहारके दोषोंसे, अकाल योगसे और बलके क्षीण होनेसे अवन्ध्या स्त्री गर्भको बहुत समयपर्यन्त धारण कर लेती है; परन्तु अन्तको वह गर्भ चिरजीवित नहीं रहता ।

असृङ्निरुद्धं पवनेन नार्य्या गर्भं व्यवस्यन्त्यबुधा कदाचित् ।
गर्भस्य रूपं हि करोति तस्यास्तदसृगस्रावि विवर्द्धमानम् ॥
तदग्निसूर्य्यश्रमशोकरोगैरुष्णान्नपानैरथवा प्रवृत्तम् ।
दृष्ट्वा सृगेकेन च गर्भसंज्ञाः केचिन्नरा भूतहृतं वदन्ति ॥

।ओशानामं रजनीचराणामाहारहेतोर्न शरीरमिष्टम् ।
मं हरेयुर्यदि तेन मातुर्लब्धावकाशं न हरेयुरोजः ॥

अर्थात् अज्ञ (मूर्ख) लोग कभी कभी वायुसे अवरोधित ए रक्तको गर्भ मान लेते हैं। वह रक्त न निकलनेके कारण ।र्भका रूप धारण करके बढ़ने लगता है। किन्तु वही रक्त ।ब अग्नि, सूर्य्य या शरीरकी उष्णतासे, परिश्रमसे, शोकसे, ।थवा किसी रोगसे, उष्ण अन्नपान अथवा किसी औषधसे, ;वरूप (पतला) होकर रजोदर्शनके रूपमें अथवा गर्भस्रावके ,पमें बहने लगता है, तब गर्भ रहनेके लक्षण दिखलाई नहीं ;ते। उस समय मूर्ख स्त्री पुरुष कहने लगते हैं कि इस गर्भ-को भूतपिशाच खा गये। परन्तु यह विचार ठीक नहीं। ओज (धातुरसको पुष्ट करनेवाले पदार्थ) का भक्षण करनेवाले ।क्षसोंका गर्भशरीर आहार नहीं है। यदि वे गर्भ हरण करते हैं, तो माताके ओजको क्यों हरण नहीं करते।

इसके पश्चात् शिष्योंने गर्भसम्बन्धी और भी कुछ प्रश्न किये।

कस्मात्प्रजां स्त्रीविकृतां प्रसूते हीनाधिकाङ्गां विकलेन्द्रियाञ्च।
देहात्कथंदेहमुपैति चान्यमात्मा सदा कैरनुबध्यते च।

अर्थात् (१) इसका क्या कारण है कि किसी किसी स्त्री-के प्रसवसे विकृत सन्तान होती है? (२) किस कारणसे सन्तान हीनाङ्ग, अधिकाङ्ग और विकृतेन्द्रिय होती है? (३) आत्मा एक शरीरसे दूसरे शरीरमें किस प्रकार जा सकता है? (४) उस समय आत्माके साथ क्या रहता है?

तब आत्रेयजीने उन सब प्रश्नोंका क्रमसे इस प्रकार उत्तर दिया:—

बीजात्मकर्माशयकालदोषैः मातुस्तथाहारविहारदोषैः ।
कुर्वन्ति दोषा विविधा प्रदुष्टाः संस्थानवर्णेन्द्रियवैकृतानि॥१
वर्षासु काष्ठाश्मघनाम्बुवेगास्तरोः सरितत्स्रोतसि संस्थितस्य
तथैव कुर्युः विकृतिं तथैव गर्भस्य कुक्षौ नियतस्य दोषाः ॥ २
भूतैश्चतुर्भिः सहितः सुसूक्ष्मैः मनोजवो देहमुपैति देहात्
कर्मात्मकत्वान्न तु तस्य दोषं दिव्यं बिना दर्शनमस्ति रूपम्॥३
स सर्वगः सर्वशरीरभृच्च स विश्वकर्म्मा स च विश्वरूपः ।
स चेतनाधातुरतीन्द्रियश्च स नित्ययुक् सानुशयः स एव ॥४
रसात्ममातापितृसम्भवानि भूतानि विद्याद्दशषट् च देहे ।
चत्वारि तत्रात्मनि संश्रितानि स्थितस्तथात्मा च चतुर्षु तेषु ॥
भूतानि मातापितृसम्भवानि रजश्च शुक्रञ्च वदन्ति गर्भे ।
आप्याप्यते शुक्रमसृक् च भूतैर्यैस्तानि भूतानि रसोद्भवानि॥ ६
भूतानि चत्वारि तु कर्मजानि यान्यात्मलीनानि विशन्ति गर्भे ।
स बीजधर्मा ह्यपरापराणि देहान्तराण्यात्मनि याति याति ॥ ७

अर्थात्—पुरुषके बीज-दोषसे, कर्मदोषसे, माताके रज और गर्भाशयके दोषसे, कालदोषसे, तथा माताके आहार विहारादि दोषोंसे शारीरिक दोष कुपित होकर गर्भकी आकृति, वर्ण और इन्द्रियोंमें विकृतता कर देते हैं। जिस प्रकार वर्षा ऋतुमें काष्ठ, पत्थर, मेघ और जलके वेग नदीके प्रवाहपर स्थित वृक्षको विकृत कर देते हैं।

दूसरे प्रश्नका उत्तर—कर्मके वशीभूत होकर मनका वेग सूक्ष्म चतुर्भूतसहित एक शरीरसे दूसरे शरीरमें चला जाता है। बिना दिव्य दृष्टिके उसको देखना कठिन बल्कि असंभव

है। यह आत्मा सर्वगामी, सम्पूर्ण शरीरका भरण करनेवाला, विश्वकर्म्मा, विश्वरूप, चेतनाधातुयुक्त, अतीन्द्रिय, नित्ययुक् (अर्थात् शरीरसे संयोग करनेवाला) और शारीरिक सुखदुःखों-का भोक्ता है।

तीसरे प्रश्नका उत्तर—रस आत्मा अर्थात् मातापितासे उत्पन्न चार भूत, दश इन्द्रियाँ और छः धातु ये बीस तत्त्व हैं। इनमेंसे जो चतुर्भूत हैं. वे आत्माके आश्रित हैं और आत्मा इन चतुर्भूतोंमें स्थित है। अर्थात सूक्ष्म चतुर्भूत और आत्मा अन्योऽन्य एक दूसरेके ऐसे आश्रित हैं कि स्वतंत्र नहीं हो सकते। गर्भमें मातापिताका जो रजवीर्य्य होता है, उसे ही चतुर्भूत कहते हैं। सम्पूर्ण भूत उसी रज और शुक्रसे बने हुए बालकके शरीरका पोषण करते हैं। पोषण करनेवाला पदार्थ आहारके रससे उत्पन्न होता है। आहार भी चतुर्भौतिक पदार्थ है। आत्माके आश्रयभूत होकर जो चारो भूत गर्भमें प्रविष्ट होते हैं, वे ही कर्मज हैं और वे ही बीजस्वरूप होकर देहान्तरों-में चले जाते हैं।

बुद्धिका पूर्व जन्मसे सम्बन्ध।

सुश्रुतमें कहा है:—

भाविताः पूर्वदेहेषु सततं शास्त्रबुद्धयः।
भवन्ति सत्वभूयिष्ठा पूर्वजातिस्मरा नराः॥

अर्थ—पूर्वजन्ममें जिन मनुष्योंने निरन्तर शास्त्राभ्यास किया है, वे दूसरे जन्ममें अतिशय सतोगुणी होते हैं और उन्हींको पूर्वजन्मका स्मरण भी रहता है। इसके कहनेका

तात्पर्य यह है कि पूर्वजन्ममें जिस प्राणीके जैसे जैसे संस्कार होते हैं, वसे ही दूसरे जन्ममें स्वतः आकर उपस्थित हो जाते हैं।

शरीरधारियोंका स्वाभाविक सन्निवेश।

सुश्रुतमें ही कहा है:—

> सन्निवेशः शरीराणां दन्तानां पतनोद्भवौ ।
> तलेष्वसम्भवो यश्च रोम्णामेतत्स्वभावतः ॥

अर्थात्—शरीरके अवयवोंकी रचना, दाँतोंका गिरना और फिर उगना, हथेली और पैरके तलुओंमें रोमोंका न जमना ये सब बातें मातापितासे उतरकर स्वाभाविक हुआ करती हैं।

इति चतुर्थः शाखः।

पञ्चमः शाखः ।

बालककी उत्पत्ति, स्त्रीवीर्य्यजन्तु तथा पुरुष-वीर्य्यजन्तुओंका वर्णन ।

शुद्ध शुक्र और शुद्ध आर्त्तवके लक्षण ।

स्फटिकाभं द्रवं स्निग्धं मधुरं मधुगन्धि च ।
शुक्रमिच्छन्ति केचित्तु तैलक्षौद्रनिभं तथा ॥
शशासृक्प्रतिमं यत्तु यद्वा लाक्षारसोपमम् ।
तदार्त्तवं प्रशंसन्ति यद्वासो न विरञ्जयेत् ॥

अर्थ—स्फटिकमणिके समान स्वच्छ, पतला, मीठा और मधुके समान गन्धयुक्त वीर्य शुद्ध होता है । किसी किसीका कथन है कि तैल और मधुके समान शुक्र शुद्ध होता है । ऐसा शुक्र गर्भधारणमें उत्तम समझा जाता है । और जो रज खरगोशके रक्तके समान अथवा लाखके रंगके समान लाल होता है, जिसका दाग साफ़ वस्त्रपर लग जाय और धोनेसे बिलकुल साफ हो जाय उसको शुद्ध आर्त्तव (रज) कहते हैं; और यही शुद्ध आर्त्तव गर्भ-धारणके योग्य समझा जाता है । वीर्य्य और रजका विशेष विवरण आगे लिखा जायगा—

---

१. शुक्र और आर्त्तव यदि दूषित हों, तो गर्भ नहीं रहता । इनके दूषित होनेके कारण, लक्षण तथा चिकित्सा हमारे वन्ध्याकल्पद्रुम ग्रन्थमें देखो । यह ग्रंथ केवल स्त्रीचिकित्साके विषयमें लिखा गया है ।

अब देखना चाहिये कि मनुष्यका वीर्य्य और स्त्रीका रज कौन गुणवाला है और किस पदार्थसे किन किन अवयवोंकी उत्पत्ति होती है।

पुरुषजातिके वीर्य्य और स्त्रीजातिके रजकी परीक्षा सूक्ष्मदर्शक यन्त्रसे करते हैं, तो ज्ञात होता है कि ये दोनों पदार्थ एक समान नहीं हैं। इनकी सूरत शकल पृथक् पृथक् है और गुण भी पृथक् पृथक् हैं। बालककी उत्पत्तिके लिये पुरुषवीर्य्य नर जातिके वृषण (अंडकोष) की दोनों ग्रंथियोंमेंसे उत्पन्न होता है। पुरुषवीर्य्य छोटे छोटे जन्तुओंकी शकलका बना हुआ पदार्थ है। ये वीर्य्यजन्तु जीवित तथा चलते फिरते मालूम पड़ते हैं और इनके मुख तथा पूँछ भी दिखलाई देती है (देखो आकृति नं० १)। पुरुषवीर्य्य जब इन जन्तुओंसे भरपूर हो और वीर्य्यजन्तु पक्व हों, तभी वीर्य्यको शुद्ध और गर्भधारणके योग्य समझना चाहिये। वीर्य्य जब मज्जा धातुसे बनकर छब्बीससे लेकर छत्तीस घंटे पर्य्यन्त वीर्य्याशयमें रह चुकता है, तब उसमेंके जन्तु पक्व होते हैं। जो पुरुष इससे कम समयमें या दिनरातमें कई बार संभोग करते हैं, उनका वीर्य्य या तो वीर्य्यजन्तुओंसे रहित होता है या उसके वीर्य्यजन्तु अपक्व रहते हैं जोकि गर्भ धारण करनेमें सर्वथा असमर्थ होते हैं। पुरुषकी छोटी उमरमें भी ये वीर्य्यजन्तु पक्व नहीं होते। पुरुषजातिमें ये जन्तु सोलह वर्षकी उमरके उपरान्त पकने लगते हैं; परन्तु पूर्ण रूपसे वे २५ सालकी उमर व्यतीत होनेपर ही पकते हैं।

डाक्टर मोरटन शरीर अवयवकी रचनाकी पुस्तकमें

लिखता है कि पुरुष-वीर्य्यमें कुछ थोड़ेसे प्रवाही पदार्थोंके सिवा विशेष भाग वीर्य्यजन्तु हैं और ये जन्तु जीवित होते हैं तथा हिलते चलते मालूम होते हैं। डाक्टर कोलीकरके कथनानुसार ये जन्तु बहुत बारीक होते हैं; यहाँ तक कि उन्हें हम विशेष साधनोंके बिना खाली नेत्रोंसे देख नहीं सकते। डाक्टर प्रोसेट—जिसने इन वीर्य्यजन्तुओंकी परीक्षा करनेका विशेष अभ्यास चिरकालपर्य्यन्त किया था—लिखता है कि इन वीर्य्यजन्तुओंमें अपूर्ण मस्तक, गला और चमड़ा मालूम होता है। इससे जान पड़ता है कि इनमें प्रत्येक अवयव विद्यमान है और ये चलते फिरते भी हैं। इनमें मांसरज्जु तथा ज्ञानतन्तु भी होने चाहिये। इत्यादि विचार करनेसे यह अनुमान होता है कि इन जीवित जन्तुओंके शरीरमें भविष्यके बालकरूप शरीरके बनानेकी समस्त सामग्री है। क्योंकि—

कारणगुणपूर्वकः कार्य्यगुणो दृष्टः।

अर्थात् जो गुण कार्य्यमें होते हैं, वे ही उसके कारणमें पूर्वसे ही विद्यमान् रहते हैं। डाक्टर फाउलर अपनी पुस्तकमें लिखता है कि गर्भकी वृद्धिके काममें आनेवाले सम्पूर्ण अवयवोंके साँचे गर्भमें उत्पन्न होते हैं। उनके मूल कारण पिताकी प्रयोग शालारूप वृषण (अंडकोश) या वीर्य्याशयमें तैयार होकर माताके गर्भाशयमें दाखिल होते हैं। अर्थात् पुरुषपक्षसे जिस पदार्थकी आवश्यकता सन्तानके शरीरके निमित्त होनी चाहिये, वह सब वीर्य्याशयमें से तैयार होकर गर्भाशयमें पहुँचता है। वीर्य्यजन्तुओंकी परीक्षा करनेके लिये रतिविलासके अनन्तर उसी समय जो द्रवरूप पदार्थ स्त्रीके गुह्य अवयवसे बाहर

निकल आता है, उसको किसी स्वच्छ काँचकी रिकाबीमें लेकर सूक्ष्मदर्शक यंत्रसे देखोगे, तो नम्बर १ की आकृतिके वीर्य्यजन्तु दिखाई पड़ेंगे ।

स्त्रीके आर्त्तवजन्तु ।

जिस प्रकार बालककी उत्पत्तिके लिये पुरुषके वीर्य्यजन्तु वृषणकी ग्रन्थिके आधारसे पक्क होते हैं, उसी प्रकार स्त्रीके रज अर्थात् आर्त्तवजन्तु भी स्त्री-अण्डमें पक्क होकर प्रत्येक मासमें तैयार होते हैं । ये स्त्रीअण्ड गर्भाशयकी दाहिनी और बाईं ओर रहते हैं । स्त्री आर्त्तव जन्तुकी आकृति नम्बर २ में देखो । गोल आकारके अणुमय पदार्थसे स्त्री-अण्ड भरपूर रहता है, जिसमेंका एक अणु नम्बर २ की आकृतिमें दिखलाया है । ये अणु स्त्री-आर्त्तवजन्तु सूक्ष्मदर्शक यन्त्रसे दिख सकते हैं * । अण्डेको फोड़नेसे उसके भीतरका जैसा दृश्य दिखलाई देता है, वैसा ही आकार इस एक अणुका होता है । जिस प्रकारसे अंडेमें लाली और सफेदी होती है, वैसे ही इस कोषमें भी मुख्य दो भाग मालूम होते हैं । स्त्रीके आर्त्तवमें अनेक जन्तु रहते हैं । यदि स्त्रीका अन्तःफल योग्य रीतिसे प्रफुल्लित हुआ हो, तो उसमें नियमित रीतिसे स्त्रीवीर्य्यजन्तु उत्पन्न होते हैं और फलवाहिनी शिराके द्वारा गर्भाशयके अभ्यन्तर पिण्डमें पहुँचते हैं और स्त्री-अण्डमें, जिसको संस्कृतमें अन्तः-फल कहते हैं, अनेक स्त्रीबीज (तरुणावस्थावाली स्त्रीके अन्तः

---

* जीवो वसति सर्वस्मिन् देहे तत्र विशेषतः ।
वीर्ये रक्ते मले यस्मिन् क्षीणे याति क्षयं क्षणात् ॥

फलमें) प्रति समय रहते हैं। कितने ही आर्त्तवजन्तु पक्क होते हैं और कितने अपक्क होते हैं।

प्रत्येक स्त्रीबीज जैसे जैसे पक्क होता है, वैसे वैसे उसके जन्तु अन्तःफलके मध्यमेंसे बाहरकी ओर आते हैं। प्रत्येक मासमें एक एक बीजजंतु पूर्णावस्थाको पहुँचकर अन्तःफलकी सपाटीपर आता है। उस समय अन्तःफल, फलवाहिनी शिरा और गर्भाशय इत्यादि स्त्रीके गुह्यावयव रक्तसे भरपूर होते हैं और गुह्यावयवमेंसे रक्तप्रवाह चलता रहता है। इसी प्रकार चार दिवस हर महीनेमें रक्तप्रवाह चलकर बन्द हो जाता है। ऋतु बन्द होनेके दिवससे अथवा दूसरे दिवससे स्त्रीके पक्क बीजजन्तु अन्तःफलकी सपाटीपरसे फलवाहिनी नाड़ीके सिरेके द्वारा गर्भाशयमें प्रवेश करते हैं। कितने ही डाक्टरोंका ऐसा मन्तव्य है कि ऋतुधर्म होनेके एक दो दिवस प्रथम ही स्त्री-बीजजन्तु गर्भाशयमें दाखिल हो जाते हैं। परन्तु इस सिद्धान्त-में यह दूषण आता है कि ऋतु-स्रावसे प्रथम गर्भाशयमें प्राप्त हुए जन्तुओंका ऋतुस्रावके रक्तप्रवाहके साथ बाहर निकल जाना संभव है। यदि स्त्रीवीर्यजन्तु गर्भाशयमें विद्यमान नहीं है, तो पुरुषवीर्य्यजन्तुओंसे स्त्रीवीर्य्यजन्तुओंका संयोग न होनेसे गर्भकी स्थिति कदापि नहीं हो सकती। जब कि स्त्री-वीर्य्यजन्तु गर्भाशयमें विद्यमान हों और पुरुषवीर्य्यजन्तुओंका संयोग गर्भाशयमें पहुँचकर हो, तभी गर्भ रहना संभव है। स्त्रीके वीर्य्यके विषयमें यूरोपके डाक्टरमंडलमें अभी तक एकमत नहीं है। कितने ही डाक्टरोंका यह कथन है कि स्त्री का वीर्य्य गर्भाशयमें बालककी उत्पत्ति नहीं करता; किन्तु

पुरुषवीर्य्यजन्तु ही यथार्थमें बालककी उत्पत्तिका प्रधान कारण है और इसका रक्षण तथा पोषण करनेका काम स्त्रीपदार्थ देता है। जैसे खेतकी मिट्टी, जल, वायु और धूपका संयोग होनेसे वनस्पतिके बीजमें जो अंकुर निकलनेकी शक्ति है वह स्वयं उद्भवरूप होकर वृक्षाकृतिमें परिणत होने लगती है, उसी प्रकार पुरुषवीर्य्य बालककी आकृतिमें स्त्रीपदार्थकी सहायता पाकर बनने और बढ़ने लगता है। दूसरे पक्षवाले डाक्टर कहते हैं कि स्त्री और पुरुष दोनोंके रजवीर्य्य बालककी उत्पत्तिके काममें आते हैं और स्त्री पुरुष दोनोंका वीर्य्य यथार्थ रीतिसे मिलना चाहिए, तभी गर्भकी उत्पत्ति होती है।

भारतवर्षीय प्राचीन वैद्योंका मत इस दूसरे पक्षसे मिलता हुआ है। वे सन्तानकी उत्पत्ति स्त्रीरज और पुरुषवीर्य दोनोंसे मानते हैं। उन्होंने तो यह भी बतला दिया है कि सन्तानके भिन्न भिन्न अंग उपांग किस किस पदार्थसे उत्पन्न होते हैं। यथा-

"गर्भस्य केशश्मश्रुलोमास्थिनखदन्तशिरास्नायुधमनीरेतः प्रभृतीनि स्थिराणि पितृजानि। मांसशोणितमेदोमज्जाहृन्नाभियकृत्प्लीहान्त्रगुदप्रभृतीनि मृदूनि मातृजानि।

अर्थात्—गर्भमें बालकके केश, डाढ़ी, मूँछ, लोम, हड्डियाँ, नख, दाँत, शिरा, स्नायु, धमनी और वीर्य्य इत्यादि स्थिर द्रव्य पिताके अंशसे और मांस, रुधिर, मेदा, मज्जा, हृदय, नाभि, यकृत, प्लीहा, आँत, गुदा इत्यादि कोमल पदार्थ माताके अंशसे उत्पन्न होते हैं। और—

नं० १.
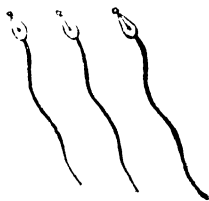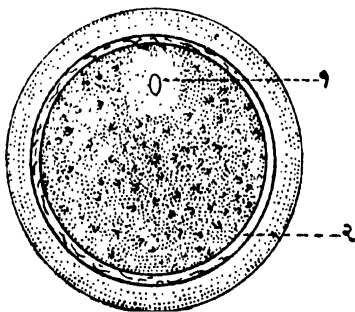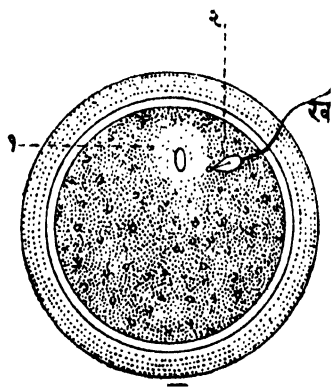
नं० ४.
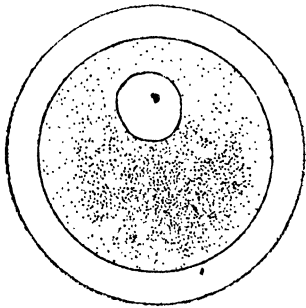
नं० ५.
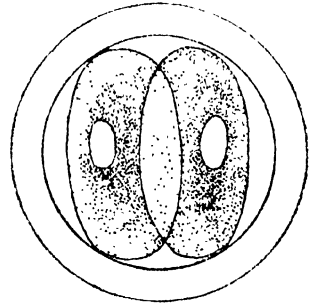
नं० ६.
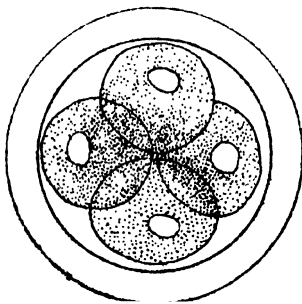
नं० ७.
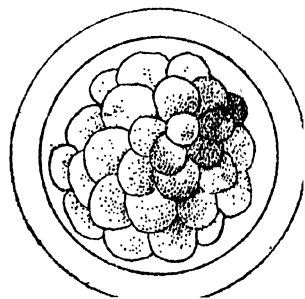
शरीरोपचयो बलं वर्णः स्थितिर्हानिश्च रसजानि ।

और शरीरका बढ़ना, बल, वर्ण, स्थिति और हानि ये सब कार्य्य रससे उत्पन्न होते हैं ।

वीर्य्यमारोग्यं बलवर्णौ मेधा च सात्म्यजानि ।

वीर्य्य, आरोग्यता, बल, वर्ण, बुद्धि ये सात्म्य अर्थात् आत्माकी अनुकूलतासे होते हैं ।

बालककी उत्पत्तिके लिये पुरुषवीर्य्यजन्तु और स्त्रीके आर्त्तवजन्तु गर्भाशयमें एक साथ मिलते हैं। उस समय पुरुष-वीर्य्यजन्तु और स्त्री-आर्त्तवजन्तु अनेक होते हैं । परन्तु वे सारेके सारे काममें नहीं आते । स्त्रीका एक आर्त्तवजन्तु एक पुरुषवीर्य्यजन्तुसे मिलकर ही गर्भोत्पादन करता है । इससे मालूम होता कि संतानोत्पत्तिके काममें स्त्रीके समस्त आर्त्तव-जन्तु तथा पुरुषके वीर्य्यजन्तु नहीं आते । जितना पदार्थ परस्पर मिल जाता है, वही बालककी शरीराकृतिका हेतु है, बाकीका पदार्थ व्यर्थ जाता है । इसकी संयोगस्थिति आकृति नं० ३ में देखो । जब ये दोनों पक्षके पदार्थ परस्पर मिलकर स्त्रीके गर्भाशयमें स्थिर हो जाते हैं, तभी गर्भकी स्थिति होती है। गर्भाशयमें ९ मास १० दिवसका पोषण पाकर बालक उत्पन्न होता है। यदि ये दोनों पदार्थ मिलकर गर्भाशयमें स्थिर न हों, तो गर्भकी स्थिति न होगी । गर्भ न रहनेके कारण प्रायः ये हैं:—गर्भाशयके अन्तर्पिण्डमें कोई व्याधि अथवा अधिक तरी हो, शोथ, क्षत या छाले वगैरहके कारणसे श्वेत स्राव होता हो, स्वाभाविक श्वेत स्राव अधिक होता हो, अथवा वह

इतना अम्ल होता हो कि उसके संयोगसे पुरुषवीर्य्य जंतु मर जायँ। इन कारणोंके होनेसे गर्भ नहीं रहता*।

ऊपर लिख चुके हैं कि गर्भकी उत्पत्तिके लिये जितना वीर्य्य आवश्यक होता है, वह अति सूक्ष्म अर्थात् एक इंचके २०० वें भागमेंसे १ भागके समान होता है। ऊपर नं० ३ की आकृतिमें पुरुषवीर्य्यजन्तुओं और स्त्रीआर्त्तवजन्तुओंके संयोगका होना बतलाया है। इन दोनोंका परस्पर संयोग होकर गर्भ रहता है। उसके अनन्तर किस किस स्थितिमें क्या क्या रूपान्तर होते हैं और किस प्रकारसे गर्भकी वृद्धि होती है, सो नीचे दिखलाते हैं:—

नम्बर ४ की आकृतिमें देखो। यह स्वरूप उभय पक्षके रजवीर्य्यके संयोगसे होता है। फिर इस स्वरूपको त्यागकर नं० ५ की आकृतिके समान एकसे दो स्वरूप हो जाते हैं। इसके अनन्तर नं० ६ की आकृतिके समान २ से ४ स्वरूप हो जाते हैं। इसके पीछे नं० ७ की आकृतिके स्वरूपके समान बढ़ता है।

प्रो० ट्रॉलके कथनानुसार गर्भ रहनेके १६ दिवस बाद गर्भके बीजका वजन १ ग्रेनके † लगभग होता है और तीसरे अठवाड़ेके बाद उसकी आकृति जूँके समान अथवा बाजरेके दानेके समान हो जाती है। तीस दिवसके उपरांत मस्तक तथा पैरके भागकी तरफ उत्पन्न होनेवाले अवयवोंकीसी शकल

---

* यदि इन सब व्याधियोंका उपाय देखना हो, तो मेरे बनाये हुए बन्ध्याकल्पद्रुममें देखो।

† २ ग्रेनकी १ रत्ती होती है।

जान पड़ती है। इस समय लम्बाई ¼ इंचके समान होती है। फिर ४० दिवसके उपरान्त बालकका आकार उत्पन्न होने लगता है, जिसमें शरीरके भागकी आकृतिसे मस्तकका भाग कुछ मोटा होता है, और हाथपैरकी शाखायें मालूम होने लगती हैं। परन्तु हाथ पैरोंके कुछ विशेष अवयव उस समय तक नहीं दिखते—केवल हाथ, पैर, नाक, कान और मुख इनके अति सूक्ष्म चिह्न दिखाई पड़ते हैं। बालककी लम्बाई इस समय १ इंचके करीब हो जाती है। दूसरे महीनेके अनन्तर सब शरीरके उपाङ्ग प्रगट होते दिखाई पड़ते हैं। नेत्रकी आकृति बराबर दिखती है। नासिका बाहर निकलती है। मुख बड़ा होता जान पड़ता है। हाथ पैरोंके पंजे और उँगलियोंकी आकृति उत्पन्न हुई जान पड़ती है। तीसरे महीनेके अनन्तर नेत्रकी पलकें वगैरह तैयार हो जाती हैं, लेकिन परस्पर चिपटी हुई रहती हैं। नासिकाके छिद्र और ओष्ठ दिखाई देने लगते हैं, परन्तु मुख बन्द मालूम पड़ता है। इस महीनेमें बालकके उत्पत्ति-कर्मके अवयवसे अथवा मूत्र अवयवकी बनावटसे यह कन्या है अथवा कुमार, ज्ञात हो जाता है। कुछ भेजा भी उत्पन्न हुआ जान पड़ता है। परन्तु बहुत ही नर्म मावेके समान होता है और कमरके भागमें भी मावे जैसा पदार्थ होता है। फुफ्फुस (फेफड़े) की उत्पत्ति तो इस महीनेमें नहीं होती; परन्तु कलेजेकी उत्पत्ति मालूम होती है। हृदयकी क्रिया भी सूक्ष्म रूपमें चलती मालूम होती है। हाथ पैर पूर्ण रूपसे मालूम होते हैं। इस समय बालकका आकार ३ इंचके लगभग लम्बा और वजनमें २॥ औंस अर्थात् ६। तोलेके करीब

होता है। चतुर्थ मासमें मस्तक और कलेजा दूसरे अवयवोंकी अपेक्षा कम बढ़ती है। उस समय समस्त मांसरज्जु बराबर दिखती है और थोड़ी कुलबुलाहट मालूम पड़ती है। गर्भके साढ़े चार महीने पूरे होनेपर बालकके शरीरपिण्डकी लम्बाई ५ वा ६ इंचकी हो जाती है और वजनमें चारसे पाँच औंस तक हो जाती है। पाँचवें महीनेमें समस्त मांस-रज्जु यथार्थ रूपमें दिखने लगती है, गर्भाशयमें बालककी फड़कन मालूम होती है, मस्तक शरीरसे कुछ बड़ा मालूम होता है और उसके ऊपर केश जम जाते हैं; पर वे बहुत सूक्ष्म रूपमें दिखलाई देते हैं। बालकका शरीर इस समय ७ से लेकर ९ इंच तक लम्बा हो जाता है और वजन १५ तोलेसे लेकर १८ तोले तक हो जाता है। छठे महीनेमें बालकके शरीरपर चमड़ेकी दो जिल्दें (पर्तें) बराबर दिखने लगती हैं। उस समय चमड़ेका रंग सुर्ख होता है, लेकिन चमड़ा बहुत कोमल और चिकना होता है। बालककी उँगलियोंमें नख उगते हुए मालूम होते हैं। लम्बाईमें बालकका शरीर १० से लेकर १२ इंच पर्य्यन्त होता है और शरीरका वजन लगभग २ रतल हो जाता है। कदाचित् इस महीनेमें किसी कारण विशेषसे बालकका जन्म हो जा तो थोड़े समय पर्य्यन्त श्वास प्रश्वास लेकर मृत्यु हो जाती है। इस समय बालक जीवित नहीं रह सकता। सातवें महीनेमें बालकके शरीरके सम्पूर्ण अङ्गोपाङ्ग बराबर हो जाते हैं। बालकका मस्तक इस समय कमल-मुखके अंदर ऊपर (अर्थात् बाहर निकलनेके दरवाजेके समीप) रहता है, पैर माताकी छाती की तरफ रहते हैं और नेत्रकी पलकें खुली हुई

मालूम होती हैं। परन्तु यथार्थमें वे खुली हुई नहीं रहतीं, क्योंकि उनके ऊपर जरायुका पर्त्त ढका रहता है। इस समय बालकके शरीरमें चर्बीके बढ़नेसे शरीरका आकार गोल दिखता है, शरीरकी लम्बाई लगभग १४ इंचके हो जाती है और वजनमें २ रतलके करीब होता है। आठवें महीनेमें बालककी लम्बाई तथा चौड़ाई बराबर बढ़ती है। इस महीनेमें बालकमें चैतन्यता आ जाती है। नख, पसली, हाथ पैर सम्पूर्ण रूपमें दिखाई देने लगते हैं। परंतु नख उँगलीके पोरेसे ऊपरकी ओर थोड़े दबे हुए रहते हैं। बालकके शरीरकी लम्बाई इस समय लगभग १६ इंचके और वजन दो सेरसे ऊपर सवा दो सेर तक होता है। गर्भमें बालकके पोषण होनेकी ठीक अवधि ९ मास १० दिवस है। २८० दिवस माताके गर्भमें पोषण पाकर बालक उत्पन्न होता है। यह प्राकृतिक नियम है;। परन्तु कभी कभी किसी किसी स्त्रीको १०—५ रोज आगे पीछे भी होता है। पूर्ण नव मास व्यतीत होनेपर बालकके शरीरकी लम्बाई १८ से लेकर २० इंच पर्य्यन्त हो जाती है और वजन तीनसे चार सेर पर्य्यन्त होता है। माताके गर्भमें बालकको उत्तम पोषण मिले, तो वह वजनमें चार सेरसे कम नहीं होता। लेकिन पोषण कम मिलनेसे किसी किसी बालकका वजन कम होता है। गर्भाशयमें ६ माससे पूर्व बालकका मस्तक ऊपरकी तरफ माताकी छातीकी ओर रहता है और पैर नीचे कमलके अन्तर्मुखकी ओर रहते हैं। लेकिन छठे महीनेमें बालकके मस्तकका वजन भारी हो जाता है। अतएव थैलीमें गर्भके जलके कारण मस्तक नीचेको और पैर ऊपरको

हो जाते हैं। यह स्वाभाविक नियम है कि जलमें डालनेसे भारी चीज पेंदेमें बैठ जाती है।

अब आगे प्राचीन आर्य वैद्योंके मतानुसार यह बतलाया जाता है कि गर्भस्थ बालकके शरीरपर कौन महीनेमें कैसा कैसा प्रभाव पड़ता है और उसमें क्या क्या परिवर्तन होता है:—

तत्र प्रथमे मासि कललं जायते। द्वितीये शीतोष्मानिलैः प्रपच्यमानानां महाभूतानां संघातो घनः सञ्जायते। यदि पिण्डः पुमान् स्त्रीचेत् पेशी नपुंसकश्चेदर्बुदमिति।

चतुरस्रा भवेत्पेशी वृत्तः पिण्डो घनः स्मृतः।
शाल्मलीमुकुलाकारमर्बुदं परिचक्षते।

तृतीये हस्तपादशिरसां पञ्चपिण्डका निर्वर्त्तन्तेऽङ्गप्रत्यङ्गविभागश्च सूक्ष्मो भवति। चतुर्थे सर्वाङ्गप्रत्यङ्गविभागः प्रव्यक्ततरो भवति। गर्भहृदयप्रव्यक्तभावाच्चेनाधातुरभिव्यक्तो भवति। कस्मात् तत्स्थानत्वात्तस्माद्गर्भश्चतुर्थे मास्यभिप्रायमिन्द्रियार्थेषु करोति। द्विहृदयाञ्च नारीं दौहृदिनीमाचक्षते। दौहृदविमाननात्कुब्जं कुणिं खञ्जं जडं वामनं विकृताक्षमनक्षं वा नारी सुतं जनयति। तस्मात्सा यद्यदिच्छेत् तत्तस्यै दापयेत्। लब्धदौहृदा हि वीर्य्यवन्तं चिरायुषं च पुत्रं जनयति।

इन्द्रियार्थांस्तु यान्यान् सा भोक्तुमिच्छति गर्भिणी।
गर्भाबाधभयात्तांस्तान् भिषगाहृत्य दापयेत्॥
सा प्राप्तदौहृदा पुत्रं जनयेत गुणान्वितम्।
अलब्धदौहृदा गर्भं लभेतात्मनि वा भयम्॥
येषु येष्विन्द्रियार्थेषु दौहृदे वै विमानना।
प्रजायते सुतस्यार्त्तिस्तस्मिंस्तस्मिंस्तथेन्द्रिये॥
राजसंदर्शने यस्या दौहृदं जायते स्त्रियाः।

अर्थवन्तं महाभागं कुमारं सा प्रसूयते ॥
दुकूलपट्टकौशेयभूषणादिषु दौहृदात् ।
अलङ्कारेषिणं पुत्रं ललितं सा प्रसूयते ॥
आश्रमे संयतात्मानं धर्मशीलं प्रसूयते ।
दर्शने व्यालजातीनां हिंसाशीलं प्रसूयते ॥
गोधामांसाऽशने पुत्रं सुषुप्सुं धारणात्मकम् ।
गवां मांसे च बलिनं सर्वक्लेशसहं तथा ॥
माहिषे दौहृदाच्छूरं रक्ताक्षं लोभसंयुतम् ।
वराहमांसात्स्वप्नालुं शूरं सञ्जनयेत् सुतम् ॥
मार्गाद्विक्रान्तजङ्घालं सदा वनचरं सुतम् ।
सृमराद्विग्नमनसं नित्यभीतं च तैत्तिरात् ॥
अतोऽनुक्तेषु यन्नारी याभिध्याति दौहृदम् ।
शरीराचारशीलैः सा समानं जनयिष्यति ॥

चतुर्थे मासि स्थिरत्वमापद्यते गर्भस्तस्मात्तदा गर्भिणी गुरुगात्रत्वमधिकमापद्यते विशेषेण । पञ्चमे मासि गर्भस्य मांसशोणितोपचयो भवत्यधिकमन्येभ्यो मासेभ्यस्तस्मात्तदा-गर्भिणी कार्श्यमाद्यते विशेषेण । षष्ठे मासि गर्भस्य बलवर्णो-पचयो भवत्यधिकमन्येभ्यो मासेभ्यस्तस्मात्तदा गर्भिणी बल-वर्णहानिमापद्यते विशेषेण । सप्तमे मासि गर्भः सर्वभावैरा-प्यायतेऽस्याः । तस्मात् तदा गर्भिणी सर्वकारैः क्लान्ततमा भवति । अष्टमे मासि गर्भश्च मातृतो गर्भतश्च माता रसवाहि-नीभिः संवाहिनीभिर्मुहुर्मुहुरोजः परस्परत आददाते । गर्भस्य सम्पूर्णत्वात् तस्मात्तदा गर्भिणी मुहुर्मुदायुक्ता भवति मुहुर्मुहु-श्चग्लाना तथाच गर्भास्तस्मात्तदा गर्भस्य जन्म व्यापद्भवत्यो-जसोऽनवस्थितत्वात् । तत्रैवमभिसमीक्ष्याष्टमं मासमगण्य-मित्याचक्षते कुशलाः । तस्मिन्नेकदिवसाक्रान्तेऽपि नवमं

मासमुपादाय प्रसवकालमित्याहुरादशमान्मासदेतावान् कालो वैकारिकमतः परं कुक्षौ स्थानं गर्भस्य एवमनुपूर्व्याभिनिर्वर्तते कुक्षौ। मात्रादीनां तु खलु गर्भकराणां भावानां सम्पदस्तथावृत्तस्य सौष्ठवान्मातृतश्चैवोपस्नेहोपस्वेदाभ्यां कालपरिणामात्स्वभावसंसिद्धेश्च कुक्षौ वृद्धिं प्राप्नोति। मात्रादीनान्तु खलु गर्भकराणां भावानां व्यापत्तिनिमित्तमस्याजन्म भवति। येत्वस्य कुक्षौ वृद्धिहेतुसमाख्याता भावास्तेषां विपर्ययादुदरे विनाशमापद्यतेऽथवाप्यचिरजातः स्यात्।

सर्वाङ्गप्रत्यङ्गानि सम्भवन्तीत्याह धन्वन्तरिः। गर्भस्य सूक्ष्मत्वान्नोपलभ्यन्ते वंशाङ्कुरवच्चूतफलवच्च। तद्यथा। चूतफले परिपक्वे केशमांसास्थिमज्जानः पृथग्दृश्यन्ते। कालप्रकर्षात्तान्येव तरुणे नोपलभ्यन्ते सूक्ष्मत्वात्तेषां सूक्ष्माणां केशरादीनां कालः प्रव्यक्ततां करोति। एतेनैव वंशांकुरोऽपि व्याख्यातः। एवं गर्भस्य तारुण्ये सर्वेष्वङ्गप्रत्यङ्गेषु सत्स्वपि सौक्ष्म्यादनुपलब्धिः। तान्येव कालप्रकर्षात् प्रव्यक्तानि भवन्ति।

भावार्थ—प्रथम मासमें शुक्र और शोणितके परस्पर मिलनेसे अर्थात् स्त्री बीजजन्तु और पुरुष वीर्य्यजन्तु दोनोंका संयोग होनेसे उसकी कलल संज्ञा होती है। दूसरे महीनेमें कफ, वात-पित्त इनके स्वभाविक गुणसे पक्व हुए जो पृथ्वी आदि पंच महाभूत* (रजवीर्य्यमें पांचों भूत सूक्ष्म रूपसे विद्यमान हैं) इनके मिलकर एक होजानेसे कलल कुछ कठिन हो जाता है। गर्भाशयमें स्थित शुक्रशोणित जो कि कलल-

---

* विस्रता द्रवता रागः स्पन्दनं लघुता तथा।
भूम्यादीनां गुणाह्येते दृश्यन्ते चात्र शोणिते॥

—सु. सूत्र, अ. १४.

रूपसे कठिन रूप हो गया है, वह यदि गोलाकृतिमें हो तो पुत्र, लम्बी मांशपेशीके समान हो तो कन्या और गोलार्द्धके समान हो तो नपुंसक सन्तान होती है। (यहाँपर गया-दास वैद्यका कथन है कि पेशी चतुष्कोण होती है-और पिण्ड गोल-घनरूप-और सेमरकी कलीके समान होती है।) तीसरे महीनेमें गर्भकी आकृतिमें दो हाथ, दो पैर और एक सिर ये पाँचों चिह्न पृथक् पृथक् बन जाते हैं। इनके सिवा हृदय, पीठ, छाती, उदरादि अङ्ग और ठोढ़ी, मुख, नासिका, ओष्ठ, कान, एड़ी उँगलियोंकी आकृति इत्यादि प्रत्यंग सूक्ष्म रूपसे बन जाते हैं। चौथे महीनेमें सब अङ्ग प्रत्यङ्गोंके विभाग पृथक पृथक् बन जाते हैं और गर्भका हृदय उत्पन्न हो जानेसे चेतना धातु भी प्रगट हो जाती है। क्योंकि हृदय ही चेतना-धातुका स्थान है। (इसीसे वैद्य लोग दिल और दिमागको ज्ञान-का स्थान और मुख्य अङ्ग समझते हैं और स्वभाववादी लोग स्वच्छ हृदयस्थानको ही जीव समझते हैं। क्योंकि हाथ पैरआदि उपाङ्गोंके कटने या टूटनेसे मनुष्यकी मृत्यु नहीं होती, परन्तु हृदयमें एक सुईका अभिघात पहुँचे तो मनुष्यकी मृत्यु हो जाती है। अतएव हृदय स्थान ही जीव है) इसी कारणसे चौथे महीनेमें जो इन्द्रियोंके विषय (रूप-रस-स्पर्श-शब्द आदि) हैं, उनके भोगनेकी इच्छा होती है। चौथे महीनेमें जब स्त्रीके गर्भमें बालकका हृदय उत्पन्न हो जाता है, तब उसको दौहृदिनी कहते हैं। इसका कारण यह है कि उस समय स्त्रीके एक हृदय अपना और दूसरा बालकका होता है। इस दौहृदकी हालतमें जिस वस्तुपर स्त्रीका मन चले और वह उसे न मिले तो सन्तान कुबड़ी,

टोंटी, खंज, बौनी, कानी, भेंडी अथवा नेत्रहीन होती है। इससे उचित है कि जिस वस्तुपर उसकी इच्छा हो, वह वस्तु गर्भवतीको अवश्य देनी चाहिये। जिन स्त्रियोंका इच्छित पदार्थ मिल जाता है, वे ही स्त्रियाँ वीर्य्यवान् और दीर्घजीवी पुत्रोंको उत्पन्न करती हैं। गर्भिणी स्त्री जिन जिन भोगोंके भोगनेकी इच्छा करे, उसको वे पदार्थ अवश्य मिलना चाहिये। क्योंकि इच्छित वस्तु गर्भवतीको न देनेसे गर्भस्थ बालकके शरीरको बाधा पहुँचती है और इच्छित पदार्थोंके मिलनेसे वह गुणवान् पुत्र उत्पन्न करती है। जिन स्त्रियोंको इस हालतमें इच्छित पदार्थ नहीं मिल सकते, उनके गर्भस्थ बालकोंके शरीरमें विकृति होनेका भय रहता है। दौहृदकी हालतमें गर्भवतीको यदि किसी इन्द्रियका इच्छित भोग प्राप्त नहीं होता, तो उसके सन्तानकी वही इन्द्रिय विकृत या उस विषयसे रहित होती है। जैसे गर्भवती स्त्रीकी इच्छा उत्तम उत्तम सुगन्धित पदार्थ सूंघनेकी हो और वह पदार्थ स्त्रीको न मिले, तो वह बालक नासिका इन्द्रियके विषयसे रहित होगा और उसको पीनसादि नासा रोग सदैव पीड़ित करते रहेंगे। इसी प्रकार चक्षु इन्द्रियको उत्तम रूपादिके देखनेकी इच्छा हुई हो और वह प्राप्त न हो तो उसके बालकके नेत्र भेंड वा ऐंचाताने होंगे अथवा वह नेत्ररोगसे पीड़ित रहेगा। इसी प्रकार गर्भवतीको अन्येच्छित द्रव्योंके न मिलनेसे भी हानि होती है।

दौहृद विशेषसे सन्तानके अन्य गुण भी देखे जाते हैं। जिस स्त्रीकी इच्छा राजा अथवा अन्य ऐश्वर्य्यवान् पुरुषके देखनेकी हो, उसकी सन्तान धनवान् पुण्यवान् होगी। इसी

प्रकार किसी रणकुशल वीर पुरुषके देखनेकी हो, तो उसकी सन्तान शूरवीर और पराक्रमी होगी। यदि गर्भवती स्त्रीकी इच्छा उत्तम उत्तम रेशमी वस्त्र और आभूषणोंसे अपने शरीरको अलंकृत करनेको हो, तो उसकी सन्तान भी अलंकृत शरीर करनेकी इच्छावाली और रूपवती होगी। जिस स्त्रीकी इच्छा महात्मा, मुनिजन, धर्म्मात्मा विद्वानोंके आश्रम देखनेकी हो, उसकी सन्तान धर्मात्मा, विद्वान् और परोपकारी होती है। इसी प्रकार अनिष्ट दौहृदके गुण भी समझो। जिस स्त्रीको सर्प व्याघ्रादि हिंसक जीवोंके देखनेकी इच्छा हो, उसकी सन्तान हिंसक होती है। जिस गर्भवतीकी इच्छा गोह जानवरके मांस खानेकी हो, उसकी सन्तान अत्यन्त निद्रालु और धारणशील होती है। जिस गर्भवतीकी इच्छा गौमांस खानेकी हो, उसका बालक बलिष्ठ और सम्पूर्ण कष्टोंको सहन करनेवाला होता है। शूकरका मांस खानेकी इच्छा जिस गर्भवतीकी हो, उसका पुत्र निद्रालु और शूरवीर होता है। इसी प्रकार जिसे भैंसेका मांस खानेकी इच्छा हो, उसका पुत्र महाशूरवीर, तेजस्वी और पराक्रमी होता है। जिस गर्भवतीकी इच्छा मार्ग चलनेकी हो, उसका बालक बड़ी बड़ी जंघावाला वेगवान और वनचारी होता है। जिस गर्भवतीकी इच्छा मृगका मांस खानेकी हो अथवा जंगली अन्य पशु शूकर सिंहादिके मांसको खानेकी हो, उसका बालक उद्योगी, दौड़नेवाला और उद्विग्न मनवाला होता है। जिस गर्भवतीकी इच्छा तीतर बटेरादि पक्षियोंका मांस खानेकी हो, उसका बालक भयभीत होता है। किसी किसी

वैद्यका ऐसा सिद्धान्त भी है कि वह शीलवान् होता है। इसी प्रकार अनुक्त दौहृदका (जो यहाँ नहीं कहा है, उसका) लक्षण भी समझ लेना चाहिये। स्त्रीकी इच्छा जिस प्रकारके पदार्थपर होती है, उसके सन्तानके आचारण, शीलादि गुण तथा शीतल उष्ण प्रकृति भी उसीके अनुसार होती है। जैसे कि किसी स्त्रीका मन रुक्ष-गर्म पदार्थोंपर चले, तो उसकी सन्तान कठोर स्वभाववाली होगी और जिस गर्भवतीकी इच्छा मिट्टी, ठीकरी, कोयला वगैरह खानेकी हो, उसका बालक उदररोगी, कृमिरोगी, पाण्डुरोगी और निरन्तर दरिद्र रहेगा।

इस चतुर्थ मासमें गर्भके स्थिर हो जानेसे गर्भिणीका शरीर भारी हो जाता है। पाँचवें महीनेमें और महीनोंकी अपेक्षा गर्भका मांस और रक्त अधिक पुष्ट हो जाता है। इस कारण इस महीनेमें गर्भिणीका शरीर कुछ विशेष कृश दिखने लगता है। छठे महीनेमें पीछेके महीनोंकी अपेक्षा गर्भस्थ बालकका बल-वर्ण अधिक बढ़ जाता है। इसी कारण इस महीनेमें गर्भिणी स्त्रीके बल-वर्णकी विशेष हीनता देख पड़ती है। सातवें महीनेमें गर्भ सब तरहसे परिपूर्ण अङ्गोपाङ्गवाला हो जाता है। इसलिये गर्भिणी स्त्री उस महीनेमें सब तरहसे मन मलीन हो जाती है। आठवें महीनेमें गर्भस्थ बालकके परिपूर्ण हो जानेसे रसवाहिनी नाड़ियोंके द्वारा बालकसे माता और मातासे बालक बारम्बार ओज (बल) को ग्रहण करता रहता है। इस कारणसे इस महीनेमें गर्भिणी कभी प्रफुल्लित और कभी ग्लानियुक्त हो जाती है। यही दशा गर्भस्थ बालककी भी होती रहती है। क्योंकि इस

समय ओज स्थिर रहता है। इससे बालकके जन्ममें भी उप-द्रवकी शंका रहती है। इसी लिये स्त्रीचिकित्सक लोग इस समय गर्भवतीको विशेष सावधानीसे रहनेकी आज्ञा देते हैं। नवम मासके प्रथम दिवससे लेकर दसवें महीनेके अन्तपर्यंत प्रसवकाल कथन किया जाता है। बालककी उत्पत्तिका स्थान कूंख अर्थात् गर्भाशय है। इसीको कुक्षि भी कहते हैं। गर्भके आदिकालसे माताके उपस्नेह (चिकना पोषण) और उपस्वेद (गर्भजलथैलीके) योग द्वारा काल-परिणाम और स्वभावसिद्धिसे बालक कुक्षि अर्थात् गर्भाशयमें वृद्धिको प्राप्त होता है, और उन्हींके दोषयुक्त होनेसे बालकका जन्म नहीं होता। अर्थात गर्भ शुष्क हो जाता है और कुक्षिमें गर्भकी वृद्धिके जो कारण कथन किये गये हैं उनमें विपरीत भाव होनेसे गर्भस्थ बालक या तो नष्ट हो जाता है अथवा प्रसवके नियत समयका व्यति-क्रम करके अधिक समयमें उत्पन्न होता है।

ऊपर गर्भस्थ बालककी वृद्धिके विषयमें जो कुछ कथन किया गया है, उसको धन्वन्तरि वैद्य अपनी युक्तिसे नीचे लिखे प्रमाणसे सिद्ध करते हैं;—सम्पूर्ण अङ्ग प्रत्यङ्ग एक साथ ही उत्पन्न हो जाते हैं; परन्तु वे अति सूक्ष्म होनेसे दिखाई नहीं देते। जैसे बाँसका अंकुर और आमका फल उत्पन्न होते ही उसमें छिलका, गूदा, गुठलीके सब तन्तु एक साथ ही उत्पन्न होते हैं, परन्तु बहुत सूक्ष्म होनेसे दिखते नहीं हैं। परन्तु जब वह फल पक जाता है, तब छिलका, गूदा, गुठली, तन्तु सब पृथक् दिखने लगते हैं। इसी प्रकार बाँसके अंकुरको भी जानो। इसी दृष्टान्तके अनुसार गर्भाशयमें गर्भकी स्थिति होनेपर

सब अङ्गप्रत्यङ्ग (अव्यक्तः प्रथमे मासि सप्ताहात् कललो भवेत्) अव्यक्त आकृतिसे संयुक्त और कलीलाके समान गर्भमें भी विद्यमान रहते हैं। परन्तु अति सूक्ष्म होनेके कारण पृथक् पृथक् नहीं देख पड़ते और समयपर ये ही सब पृथक् पृथक् दिखते हैं।

ऊपर लिख चुके हैं कि बालककी उत्पत्ति अणुमात्र पुरुष बीजसे होती है। परंतु किन कारणोंसे बालक गर्भमें पोषण पाकर बड़ा होता है, इसका प्रमाण नीचे लिखा जाता है—

गर्भो रुणद्धि स्रोतांसि रसरक्तवहानि वै।
रक्ताज्जरायुर्भवति नाडी चैव रसात्मिका॥
सा नाडी गर्भमाप्नोति तथा गर्भस्य वर्त्तनम्।
यद्यदश्नाति मातास्य भोजनं हि चतुर्विधम्॥
तस्मादन्नाद्रसीभूतं वीर्य्यंत्रिधा प्रवर्तते।
भागः शरीरं पुष्णाति स्तन्यं भागेन वर्द्धते॥
गर्भः पुष्यति भागेन वर्द्धते च यथा क्रमम्।
गर्भं कुल्येव केदारं नाडी प्रीणाति तर्पिता॥

अर्थ—गर्भाशयमें गर्भका बीजारोप होते ही माताके रस-वाही स्रोत बन्द हो जाते हैं, * और उसी रक्तसे वह झिल्ली अथवा जरायु जिसमें बालक लिपटा रहता है, बनती है। और उसीसे वह नाल भी उत्पन्न होता है, जिसका सम्बन्ध बालककी नाभि और फूलसे रहता है। इस फूलका सम्बन्ध माताकी रस-वाहिनी तथा रक्तवाहिनी नाड़ियोंसे है और इसी सम्बन्धसे नाल द्वारा गर्भस्थ बालकका पोषण माताके आहार किये हुए

* लेकिन ऐसे बन्द नहीं होते कि माताके शरीरको पोषण न पहुँच सके।

पदार्थोंसे होता है। अर्थात् माता जिन भक्ष्य, भोज्य, चोष्य, लेह्यादि पदार्थोंका आहार करती है, उन्हींका पाचन होकर जो रस-रक्तादि बनते हैं वे तीन भागोंमें बँट जाते हैं। उनमेंसे एक भागद्वारा माताके सम्पूर्ण शरीरका पोषण होता है, दूसरे भागसे पोषण कोषको अर्थात् दूध उत्पन्न करनेवाली शिराओंको उत्तेजन मिलता है जिससे प्रसव कालके अनन्तर बालकका पोषण होता है और तीसरे भागसे गर्भस्थ बालकका पोषण नालद्वारा होता है, इसीसे बालकके शरीरकी वृद्धि क्रमपूर्वक होती है। जैसे क्यारियोंमें बहता हुआ जल खेतको हरा भरा रखता और बढ़ाता है, उसी प्रकार नालके द्वारा गर्भकी वृद्धि होती है। यही सिद्धान्त वाग्भट्टका भी है,—

गर्भस्य नाभौ मातुश्च हृदि नाडी निबध्यते।
यया स पुष्टिमाप्नोति केदार इव कुल्यया॥

अर्थात्—एक ही नाड़ी गर्भस्थ बालककी नाभि और माताके हृदयसे बँधी हुई रहती है जिसके द्वारा गर्भस्थ बालकको पोषण द्रव्य पहुँचता है--जैसे पानीकी नालियोंके द्वारा खेतका सिंचन होकर अन्न उत्पन्न होता है। विशेष व्यवस्था इसकी इस प्रकार है कि बालकके पोषणके लिये बालकके साथ ही दो वस्तुओंके बनानेका आरम्भ होता है। एक तो नालका और दूसरा फूलनालका। फूलनाल प्रायः बालककी लम्बाईके समान ही होता है। उसका एक शिरा बालककी नाभिसे लगा रहता है और दूसरा सिरा फूल अर्थात् ओरसे लगा रहता है। इसीके द्वारा बालकको माताके शरीरमेंसे पोषण पहुँचता है। फूल वा

और कोमल स्पंजके समान होता है। इसका आकार गोल होता है, व्यास लगभग छः इंच होता है और बीचके भागकी मुटाई १ से १॥ इंच तक होती है। इस (फूल) का वजन लगभग आध सेर होता है। यह गर्भाशयके किसी भागसे चिपटी रहती है। इस ओर वा फूलका स्वभाविक धर्म्म स्त्रीके शरीरसे सार भागको खींचकर नालके द्वारा गर्भस्थ बालको पोषण पहुँचाना है। जैसे वृक्षकी जड़ पृथ्वीसे जल और पार्थिव भागको खींचकर वृक्षका पोषण करती है उसी तरह ओर या फूल माताके शरीरसे सार भागको खींचकर गर्भका पोषण करता है। फूलकी रचना गर्भ रहनेसे दो महीनेतक होती है। नालमें दो तन्तु सफेद नसोंके और एक साधारण नसोंके समान होता है। इन्हीं तीनों नसोंसे नाल अपनी जगहपर स्थिर रहता है माताके रस और रक्तका भाग फूलमेंसे साधारण नसके द्वार बालकके शरीरमें पहुँचता है और दूसरी दो सफेद नसें फुप्फुस और नासिकाके छिद्रोंके समान बालकके शररिका काम करती हैं। क्योंकि इन नसोंके द्वारा बालकके शरीरका दूषित भाग फिरकर फूलकी तरफ लौटता है। जैसे मनुष्यके शरीरका संचित रक्त फेफड़ेके द्वारा श्वास-प्रश्वासप्राक्रियाकी गतिसे साफ होता है, ठीक वैसे ही बालकके शरीरकी रक्तसंचालन-क्रिया उक्त स्वेत तन्तुवाली नसें करती हैं जो कि नालमें विद्यमान् रहकर फूल और बालककी नाभिसे जुड़ी रहती हैं। इस प्रक्रियासे बालक और माताका रक्त फिरता है। श्वास-प्रश्वास-की बराबर गतिसे ही शरीरका रक्त साफ होता है और रक्त साफ होनेका यंत्र फुप्फुस है। गर्भवती स्त्रीको उचित है

कि वह श्वासप्रश्वासक्रियामें व्याघात न पहुँचने दे, इसके लिये उसे शान्त परिश्रम करना चाहिये। आलस्यग्रस्त होकर पड़ी रहनेकी अपेक्षा किसी साधारण कामके करते रहनेसे श्वासप्रश्वासकी गति अच्छी होती है। इसके सिवा गर्भवतीको ढीले कपड़े पहनना चाहिये,—लहँगा, पायजामेका नाला, साड़ी आदि बहुत खेंचकर न बाँधना चाहिये। कहनेका तात्पर्य यह है कि इतने तंग कपड़े न पहनना चाहिये जिससे रक्तसंचालनमें रुकावट हो।

माताके दूषित रक्त-जन्य विकृतावयव।

दोषोंको कुपित करनेवाले पदार्थोंका सेवन करनेसे शरीरका रक्त दूषित हो जाता है। ऐसी स्थितिमें गर्भस्थ बालकके मातृजादि अवयवोंमेंसे एक अथवा अनेक अवयव दूषित या विकृत हो जाते हैं। जब स्त्रीका रक्त और गर्भोत्पादक बीज भाग दूषित हो जाता है तब वंध्यादोषयुक्त कन्या उत्पन्न होती है। जब शोणितमें गर्भको उत्पन्न करनेवाला बीजभाग दूषित हो जाता है तब सड़ी हुई विसर्प व्रणादि रोग विशिष्ट संतान पैदा होती है। जब स्त्रीके शोणितमें गर्भाकारक बीजभाग तथा स्त्रीकारक बीजभाग दूषित हो जाता है तब स्त्रीचिन्ह विहीन लड़की पैदा होती है। ऐसी संतानको वार्त्ता या स्त्रीव्यापत् भी कहते हैं।

पिताके दूषित शुक्र-जन्य विकृतावयव।

जब पिताके बीजभागमें दोष उत्पन्न होता है तब पितृजादि अवयवोंमें विकार पैदा होता है। जब पिताका संतान-

कारक बीजभाग दूषित होता है तब दुर्गन्धयुक्त संतान पैदा होती है; जब पुरुषकारक बीजभाग दूषित हो जाता है, तब पुरुष-चिह्नरहित बालक पैदा होता है। ऐसी संतानको तृणपूळि या पुरुष-व्यापत् कहते हैं।

इति पंचमः शाखः

षष्ठः शाखः ।

सन्तानके रूप-गुणों पर दाम्पत्य प्रेमका प्रभाव।

रूपवान् सन्तानकी उत्पत्तिमें स्त्री पुरुषका पारस्परिक प्रेम बहुत बड़ा कारण है। यह प्रेम सच्चा और निर्दोष होना चाहिये। यह सच्चा प्रेम रंगरूपकी अपेक्षा नहीं रखता। अर्थात् ऐसा नहीं है कि स्त्री सुन्दर हो, तभी उसपर उसके पतिका प्रेम हो अथवा पुरुष सुन्दर हो, तभी उससे उसकी स्त्री स्नेह करे। जो प्रेम रंगरूपकी अपेक्षा रखता है, उसे हम सच्चा प्रेम नहीं कह सकते; ऐसे प्रेमके भीतर स्वार्थ मिला हुआ होता है। प्रेम प्रेमके ही लिये किया जाता है—उसका और कोई उद्देश्य नहीं होता। सच्चा प्रेम स्त्री और पुरुषके मनको एक कर देता है, विचारोंको एक कर देता है और शरीरको एक करनेका प्रयत्न करता है। जब दम्पतिके चित्तपर इस प्रकारका प्रेम अपना अधिकार जमाता है, तभी वे रूपवान् और गुणवान् सन्तान उत्पन्न करनेमें समर्थ होते हैं। गर्भाधान क्रियाके समय बीजपर उसी प्रेमका प्रभाव पड़ता है और यही प्रेम रूपवान और गुणवान् सन्तान उत्पन्न करनेका कारण है। उपर्युक्त कथनसे पाठक समझ गये होंगे कि रूपवान् सन्तान उत्पन्न करनेमें दम्पतिका पारस्पारिक प्रेम बहुत बड़ा कारण है, माता पिताका सुन्दर तथा रूपवान् होना ही उसका वास्तविक कारण नहीं है। नीचे इस विषयका दृष्टान्त लिखते हैं—

एक बार डॉ० फुलर नामक एक यूरोपियन सज्जन अपनी स्त्रीके साथ टहलनेके लिये शहरसे बाहर जा रहे थे। रास्तेमें उनकी स्त्रीकी नज़र दो खूबसूरत बालकोंपर पड़ी। उन बालकोंकी सुन्दरता, शान्त वृत्ति और प्रसन्न मुखकांतिको देखकर डा० फुलरकी स्त्रीके मनमें यह कल्पना उठी कि जिनके बच्चे इतने सुन्दर हैं उनके मातापिता भी अवश्य सुन्दर होंगे। लेडी साहबाने उन बालकोंके माता-पिताको देखनेकी इच्छा प्रकट की। उन बालकोंके माँ-बापका नाम पूछकर उनकी खोज की गई। जब लेडी साहबाने उन बच्चोंके माँ-बापको देखा तो वे किसी अंशमें भी सुन्दर न थे। परन्तु जब उनके सम्बन्धकी और बातें पूछी गईं तब मालूम हुआ कि उन दोनोंका पारस्परिक प्रेम बहुत ही प्रशंसनीय है। उन्होंने एक दूसरेसे कभी स्वप्नमें भी कटु वचन नहीं कहे, दोनों सदैव हिल मिलकर बड़े प्रेमसे दो शरीर एक प्राण बनकर रहते हैं। इस उदाहरणसे सिद्ध होता है कि रूपवान् बच्चे उत्पन्न होनेका प्रधान कारण माता पिताकी शारीरिक सुन्दरता नहीं, प्रत्युत् उन दोनोंका पारस्परिक प्रेम है। अब प्रेम क्या है और वह कहाँ रहता या उत्पन्न होता है, इस विषयका संक्षेपसे वर्णन किया जाता है।

प्रेम मनकी एक शक्ति है और इसका विशेष सम्बन्ध मस्तिष्कसे है। यह शक्ति मस्तिष्कमें कैसे और कहाँ पैदा होती है, इस विषयमें शरीर-शास्त्रके जाननेवाले विद्वानों-(physiologists) ने निश्चय किया है कि मस्तिष्कके जुदे जुदे मांस-रज्जुओं और अवयवोंपर प्रत्येक वस्तुका प्रभाव

पड़ता है। क्योंकि समस्त शरीरके स्नायु और शिराओंका सम्बन्ध मस्तिष्कसे है। शरीरके किसी भाग द्वारा स्पर्श, पीड़ा, अभिघात अथवा देखने सुनने आदिका जो प्रभाव पड़ता है वह तुरंत ही मस्तिष्कमें विदित होता है। ललाटका ऊपरी भाग—जहाँसे केश-भूमि प्रारंभ होती है, वह भाग—बुद्धिबलसे सम्बन्ध रखनेवाला है। इस भागमें प्रत्येक विषयके निश्चय, तर्कवितर्क और कारण खोजनेकी शक्ति रहती है। इसके ऊपर-का जो भाग है वह सब प्रकारके सगुद्गुणों, धार्मिक विश्वासों और भक्तिभाव आदिका उद्गमस्थान है। इसी भागमें सब तरहके प्रेम जैसे माता, पिता, पुत्र, स्त्री या देशादिसे संबंध रखनेवाले प्रेमकी ग्रन्थियाँ रहती हैं। ऊपर यह बतलाया जा चुका है कि भेजेका अग्रभाग बुद्धिका और उसके पीछेका भाग प्रेम-शक्तिके रहनेका है; अब इस स्थलपर प्रेम कैसे उत्पन्न होता है, इस बातका विचार किया जाता है।

मनुष्य जब किसी ऐसी वस्तुको देखता है जो उसे सुन्दर मालूम पड़ती है, अथवा वह वस्तु उसे पसंद आती है, तब उस वस्तुके रूपका अक्स उसके मन पर पड़ता है। नेत्रोंके ज्ञान-तंतु मनको प्रेरणा करके मस्तिष्कके ज्ञान-तंतुओंको उसके रागकी सूचना देते हैं। उस सूचनाको पाकर ज्ञानतंतु हर्षित या प्रफुल्लित होते हैं और इसी कारण उस जगह प्रेम उत्पन्न होता है। जिस वस्तुको देखने या मनके द्वारा अनुभव करने-से प्रेम उत्पन्न होता है उस इच्छित वस्तुके प्राप्त होनेसे हमें सुख प्राप्त होता है। अब यह देखना है कि प्रेम क्या है? प्रेम मनकी एक शक्ति है। प्रत्येक मानसिक-शक्तिको बल कह

सकते हैं। यह प्रेमशक्ति दो तरहकी होती है, एक सद्गुणविशिष्ट और दूसरी दुर्गुणविशिष्ट। सद्गुणविशिष्ट प्रेमशक्तिका प्रवाह पति-पत्नी, सन्तान, कुटुम्बी, सम्बन्धी, मित्र, सज्जन और सत्कृत्योंकी ओर होता है। इसे सतोगुणी प्रेम कहते हैं और यह संसारके प्रत्येक कार्य्यमें हितकारी होता है। परंतु जो प्रेम दुर्गुण-विशिष्ट होता है उसका प्रवाह स्वजनों और सत्कृत्यों-की ओर न जाकर दुर्जनों और बुरे कामोंकी ओर जाता है। ऐसा प्रेम सदैव दुःखदायक होता है और उसे तमोगुणी प्रेम कहते हैं। प्रेम कैसा ही हो, पर उसकी शक्ति बड़ी प्रबल होती है। जिन स्त्रीपुरुषोंमें पवित्र प्रेमकी जितनी अधिक मात्रा रहती है, उनकी संतान उतनी ही सुन्दर, सद्गुणी और स्वस्थ हुआ करती है। इस प्रेम-शक्तिके बलसे दम्पतिके शरीरके मानसिक गुण बालकके शरीरमें उतर आते हैं। दम्पतिमें परस्पर पूर्ण प्रेम होनेसेही संतान सद्गुणी और रूपवान् हो सकती है, केवल एक पक्षके प्रेमसे स्वास्थ्य और गुणोंकी पूर्णता उनमें नहीं आ सकती।

डाक्टर फुलरने लिखा है कि एक खूबसूरत और तन-दुरुस्त दम्पतिके जितने बच्चे हुए वे सब सुस्त और बुद्धिहीन निकले। दरियाफ्त करनेपर मालूम हुआ कि उन दोनों स्त्री-पुरुषोंका प्रायः आपसमें सदा मन-मुटाव रहा करता था, अतएव माता-पिताके स्वस्थ और गुणी रहने पर भी संतान आलसी और बुद्धिहीन हुई। दम्पतिके विरोधसे संतानपर जो बुरा प्रभाव पड़ता है, उसका एक दृष्टान्त और लिखा जाता है। एक स्त्री किसी डाक्टरके पास अपनी १५ वर्षकी

लड़कीको लेकर उसकी परीक्षा करानेके लिये पहुँची। उस लड़कीका ध्यान कभी किसी कार्य्यकी ओर न लगता था! वह जब देखो तब रोती ही रहती थी और रोनेसे छुट्टी पानेपर एकान्तमें बैठकर प्रायः बाइबिल पढ़ा करती थी। डाक्टरने लड़कीकी माँकी ओर देखा तो वह सबल और स्वस्थ दिखाई दी। तब डाक्टरने स्त्रीसे कहा कि इस लड़कीके गर्भमें आनेके दिनसे उत्पन्न होने तककी तुम अपनी सब हालत कहो, तब मैं इस लड़कीकी परीक्षा करूँगा। स्त्री कहने लगी—"मैंने ऐसे पतिके साथ विवाह किया था जो अत्यंत क्रोधी और विरोधी है। पहले मैंने उसके स्वभावकी परीक्षा न करके उसके साथ विवाह कर लिया और अब मैं नित्य पश्चात्ताप करती और अपने भाग्यको धिक्कारती हूँ। जिस दिन यह बालिका गर्भमें आई थी, उसके तीन चार दिवस पीछे मेरे पतिकी कोई वस्तु मेरे समीपसे खो गई, और वह नहीं मिली। मैंने यह बात बहुत दिवस तक छिपा रक्खी, लेकिन जब उस वस्तुकी जरूरत पड़ी और मुझसे माँगी गई तो मैंने कह दिया, कि वह वस्तु मेरे पाससे खो गई है। इस बातपर उसने मुझे अत्यन्त क्रुद्ध होकर और पीटकर घरसे बाहर कर दिया। तब मैं ससुरके पास रहने लगी। मेरा ससुर नाविक नौकरी करता था, अतः जब वह कई महीनेकी मुसाफिरी पर चला जाता, तब मैं अकेली रहती थी। उस समय मुझे दिनरात रोने और बाइबिलकी पुस्तक पढ़नेके सिवाय दूसरा काम नहीं रहता था। पीछे यह लड़की उत्पन्न हुई और मैं इसका पालन करने लगी। जब यह चार पाँच वर्षकी हो गई तब मैंने इसको पढ़ने

लिखना सिखाया। ७ वर्षकी उमरसे यह बाइबिलकी पुस्तक अपने आप पढ़ने लगी। अब मैं पढ़नेके सिवा और किसी काम करनेको कहती हूँ तो यह रोने लगती है। हर समय बाइबिल इसके हाथमें अथवा सिरहाने रहती है, और उसीको छाती पर रखकर सो रहती है।"

वह डाक्टर मस्तिष्ककी परीक्षामें चतुर था। उसने लड़कीके मस्तककी परीक्षा की, तो मालूम हुआ कि इसके मस्तकमें दृढ़ता–स्नेह–उत्साह और विचारशक्ति नहीं है। ज्ञानतन्तुओंमें एकदम शिथिलता है। अतः उसने उस स्त्रीको ऐसा ही उत्तर देकर बिदा कर दिया। इस प्रमाणसे यह समझ पड़ता है कि जिन बालकोंका स्वभाव बिना कारण और बगैर ताड़ना दिये रोने और अपराध करनेका होता है, समझना चाहिये कि उनके माता–पितामें मानसिक प्रेम–शक्ति बिलकुल नहीं होगी और उनमें परस्पर विरोध रहता होगा। इस उदाहरणसे दम्पतिको यह शिक्षा लेनी चाहिये कि परस्पर अत्यन्त प्रेमपूर्वक रहकर सन्तानोत्पत्ति करें और कभी लड़ाई, क्रोध या विरोध न करें।

माता-पिताके मनकी जुदा जुदा स्थिति भी बालकके ऊपर असर करती है। यदि कोई गर्भवती स्त्री गर्भके समयमें दुःखित अथवा चिन्तित रहे तो उसके गर्भसे पैदा हुए बालकके मस्तकमें एक विशेष तरहका (Dropsy of the brain) रोग उत्पन्न हो जाता है। जिस बालकको यह रोग होता है उसके मस्तकमें पानी भर जाता है और वह बड़ा हो जाता है। ऐसे बालककी मानसिक शक्ति बहुत निर्बल हुआ करती

है। यदि चार वर्षके बालकके मस्तककी परिधि बीस इंचसे अधिक हो तो समझना चाहिये कि उसमें पानी भरा हुआ है। ऐसे बालककी एक और पहिचान है। उसका मस्तक गोल नहीं होता, वरन् उसके कई भाग उठे हुए रहते हैं। जो भाग सबसे अधिक उठा हो उसी भागमें जल भरा हुआ समझना चाहिये। सोते समय ऐसे बालकके सिरसे अधिक पसीना निकला करता है। क्योंकि प्रकृतिके नियमानुसार शरीरके भीतरकी विकृत या बे-काम वस्तुएँ सदैव बाहर निकलनेकी चेष्टा किया करती हैं। जिस बालकके सिरमें पानी रहता है वह कदापि स्वस्थ और बुद्धिमान् नहीं हो सकता। डा० फुलरका कथन है कि ऐसे हजारों बालकोंकी परीक्षा करनेके उपरान्त मेरा यही निश्चय हुआ है कि ऐसे बालकोंकी माताएँ गर्भकालमें अवश्य चिन्तित तथा शोकग्रस्त रही हैं। स्त्रियोंके मनपर ऐसे दुःख या शोक कई कारणोंसे आ जाते हैं। उनमें किसी स्वजनकी मृत्यु, किसी भयंकर रोगका उत्पन्न होना, किसी प्रिय वस्तुका नष्ट हो जाना अथवा किसी अचानक आपत्तिका आ जाना मुख्य हैं। ऐसे कारणोंसे गर्भिणी स्त्रीके मनपर जो शोक या दुःखकी छाया पड़ती है वह गर्भस्थ बालकके शरीरमें विकृति उत्पन्न करती है। स्त्री जब किसी बड़े शोक, दुःख या चिन्तामें मग्न होती है तब उसका मस्तक ऊष्मासे गरम हो जाता है। ऐसे अवसर पर अनेक स्त्रियाँ शीतल-जल या बर्फसे मस्तकको ठंडा करती हैं; परन्तु ऐसा करना उनके और उनके गर्भस्थ बालकके लिये विशेष हानिकारक है। भारतवर्षीय प्राचीन महर्षियोंने गर्भवती स्त्रीके

वर्ज्य कर्म्मोंके विषयमें जो कुछ लिखा है, उसका सारांश नीचे लिखा जाता है:—

"गर्भवती स्त्रियोंको अति मैथुन, अति परिश्रम, भार उठाना, मार्ग-चलना, अधिक सोना और जागना, कठोर बिस्तरपर सोना, कठोर विषम आसन पर बैठना, शोक, दु:ख, क्रोध, भय, अथवा उद्वेगसे चञ्चल होना, मल-मूत्र आदिके वेगोंको रोकना, अतिगर्म, तीक्ष्ण, भारी, कब्ज करनेवाले पदार्थोंका भोजन करना, कुएँमें झाँकना, शून्य वा भयानक स्थानमें जाना, फसद खुलवाना, वमन विरेचनादि करनेवाले शोधन औषध लेना, बस्तिकर्म और अपनी इच्छाके विरुद्ध कोई भी काम न करना चाहिये।"

कहनेका तात्पर्य्य यह है कि जो स्त्रियाँ स्वस्थ, नीरोग, सुन्दर, आज्ञाकारी, बुद्धिमान् और वंशका मुख उज्ज्वल करनेवाली संतानकी इच्छा रखती हों उन्हें चाहिये कि वे वैर-विरोध और दुश्चिन्ताओंको त्यागकर परम प्रीति और आनंदके साथ रहें। सच्चे प्रेम या योगके बिना मन-वाञ्छित संतानका होना कठिन ही नहीं वरन् असंभव है। चित्तकी वृत्तियोंका विरोध होकर एक स्थलपर मन स्थिर हो जानेका नाम ही सच्चा प्रेम या योग है। पति-पत्नीमें ऐसे प्रेमके होनेकी आवश्यकता है। कोई चित्रकार जब किसीका चित्र खींचता है तो उस समय उसके मनका लक्ष्य उस आकृति पर ही रहता है। यदि उसकी चित्तवृत्ति उस आकृतिपर स्थिर न हो तो वह आकृति यथार्थ रूपवाली न बनेगा। इसी तरह यदि गर्भिणी स्त्रीकी मानसिक शक्तिका योग ठीक आदर्श पर न

हो तो उसका असर उसके गर्भस्थ बालक पर अवश्य पड़ेगा और वह संतान उसी गुण-बलको लेकर उत्पन्न होगी। उपर्युक्त कथनसे यह सिद्ध हो चुका कि दम्पतिके शुद्ध प्रेम और उत्तम संकल्पोंके होनेसे ही रूपवान् और सद्गुणी संतान पैदा हो सकती है।

इति षष्ठः शास्त्रः।

सप्तमः शाखः ।

गर्भिणी स्त्रीके शरीर और मनका बच्चोंपर प्रभाव ।

गर्भवती स्त्रीके शरीर और मनका बच्चों पर क्या प्रभाव पड़ता है, इस प्रकरणमें इसी विषयके प्रमाण लिखे जायँगे। गर्भस्थ बालकोंपर माताके शुभ और अशुभ, इष्ट और अनिष्ट कामों तथा विचारोंके जो प्रभाव पड़ता है वह उनके जन्म-भरके सुख या दुःखका करण बन जाता है। इसलिये आयुर्वेदके ज्ञाताओंने स्त्रियोंके ऋतुमती होनेके दिनसे ही उनके लिये ऐसे नियम बतलाये हैं जिनके अनुसार चलनेसे गर्भिणी और उसके बच्चेको किसी तरहके अनिष्टकी आशंका नहीं रह जाती। उनमेंसे कुछ बातें संक्षेपसे नीचे लिखी जाती हैं।

स्त्री जिस दिनसे रजस्वला हो उसी दिनसे उसे मैथुन, क्रोध और हिंसा न करनी चाहिये, कुशाके आसन या चटाईपर सोना चाहिये और ऋतुसमय तक पतिका मुख नहीं देखना चाहिये। रोना, नखोंका काटना, शरीरमें तैलादिका मर्दन करना, उबटन, सुरमा और चन्दनादि सुगंधित वस्तुओंका लगाना भी वर्जित है। इसी तरह दिनको सोना और जहाँ अधिक वायु लगती हो ऐसे स्थानपर अधिक समय तक बैठना भी हानिकारक है। जो स्त्री प्रमाद या अज्ञानसे इन नियमोंके

विरुद्धाचरण करती है, आगे पैदा होनेवाली उसकी संतानमें वही दोष आ जाते हैं। जैसे, जो स्त्री रजस्वला होनेकी हालतमें किसी कारणसे रोदन करती है उसकी संतान नेत्ररोगवाली होती है; जो नख काटती है उसके बच्चेके नख विकृत हो जाते हैं; जो तेलका मर्दन करती है उसकी संतान बहुधा कुष्ट रोग-वाली हुआ करती है; काजल, सुरमा आदि लगानेसे संतान अंधी या नेत्ररोगवाली होती है; दिनको सोनेसे बालक आलसी और निद्रालु और उच्च स्वर या भयंकर शब्द सुननेसे बधिर होता है।

ऋतुस्नान करनेके दिन ऋतु-स्नाता स्त्री पहले जैसे पुरुषका दर्शन करती है, प्रायः उसीके अनुरूप संतान होती है। यही कारण है कि स्त्रियाँ ऋतुस्नाता होकर अपने पतिका दर्शन करती हैं। पति यदि कुरूप हो तो उनको अपने पुत्रको देखना चाहिये। अथवा पुत्र न हो तो किसी रूपवान् बालक या उसकी तसबीरको अपना पुत्र समझकर देखना उचित है। ऋतुकालके पश्चात् पहले चार दिवस छोड़कर सोलहवीं रात्रिपर्यंत (१२ रात्रियोंमें) संभोग करनेसे गर्भस्थिति होती है।

गर्भवती स्त्रीके मन और शरीपर किसी प्रकारके दुःख, शोक अथवा भयङ्कर और मनोरञ्जक दृश्योंका असर बहुत शीघ्र पड़ता है और वह असर गर्भस्थ बालकपर भी पड़े बिना नहीं रहता।

एक मुसलमान स्त्रीको हमने जम्बू प्रान्तमें देखा था। उसके दाहिने हाथकी बाँहपर बकरीके पैरकी खुर समेत आकृति थी और उसके ऊपर कुछ कुछ सफ़ेद बाल भी जमे हुए थे।

स्त्रीकी उमर १७ सालकी थी। उस आकृतिके अन्दर हड्डी थी लेकिन उसका स्त्रीकी बाँहकी हड्डीसे सम्बन्ध नहीं था, किन्तु उसकी बाँहकी मोटी मोटी नसें उस बकरीके पैरके ऊपर अपनी शाखा फैलाये हुए थीं। इस आकृतिको देखकर हमें बहुत विस्मित होना पड़ा। दर्याफ़्त करनेसे जाना गया कि यह उसके जन्मसे ही है। हमको उसकी मातासे सब हाल जाननेके लिये गाँवमें जाना पड़ा, तो मालूम हुआ कि जब वह लड़की गर्भमें थी, तब उसकी माताको फकीरोंके खिलानेके लिये कई बकरे काटने पड़े थे। कारण समझमें आ गया। यही कारण है कि हमारे वैद्यक ग्रंथोंमें गर्भवतीको हिंसा करनेके लिये निषेध किया है।

जिला देहरादूनके भोगपुर ग्रामके समीप, एक राहगीर स्त्रीकी गोदमे एक लड़का देखनेमें आया, जिसकी उमर डेढ़ सालके लगभग होगी। उसके बाएँ हाथकी पहली उंगली हथेलीकी सन्धिसे पृथक् लटकती थी, केवल चमड़ेके संयोगसे जुड़ी हुई थी। उस बच्चेकी मातासे दर्याप्त किया, तो मालूम हुआ कि जब वह गर्भवती थी, तब लकड़ी काटनेके समय उसके बाएँ हाथकी उंगली कट गई थी और उसीके असरसे बालककी उंगली लटकती हुई उत्पन्न हुई थी। डाक्टर ओरमेरोडने लिखा है कि एक गर्भवती स्त्रीके दाहिने हाथकी दो उंगलियोंको विशेष हानि पहुँची थी, इससे उसके जो बालक उत्पन्न हुआ, उसके दाहिने हाथकी दो उंगलियाँ असम्पूर्ण थीं।

एक डाक्टरने लिखा है कि बोस्टन नामक नगरमें एक

स्त्रीके बालक हुआ था जिसकी सूरत बिल्कुल बन्दरके समान थी। इसका कारण उसने यह लिखा है कि वह बालक जब गर्भावस्थामें था तब उसकी माता पर एक बन्दरने आक्रमण किया था, जिसके भयसे स्त्रीके मनपर बन्दर की आकृतिका असर पड़ा और इसी कारण उसके बालककी सूरत बंदरके समान हुई।

इटली देशके रावेना शहरमें ईस्वी सन् १५६९ के लगभग एक स्त्रीके एक विचित्र बालक उत्पन्न हुआ था। उसके हाथोंके स्थानमें पक्षियोंके समान पर थे। इसका कारण यह मालूम होता है कि या तो उस बालककी माताका मन किसी पक्षीमें लगा होगा—वह किसी पक्षी पर बहुत प्रेम रखती होगी या उसने कोई ऐसा चित्र देखा होगा जिसमें किसी पक्षी या पर लगे हुए मनुष्यकी आकृति अंकित होगी और वह उसको बहुत पसंद आई होगी।

एक यूरोपियन डाक्टरने अपनी पुस्तकमें लिखा है कि मैंने एक स्त्रीके छः बच्चे अलग अलग प्रकृतिके देखे। जब उस स्त्रीसे दर्याफ्त किया तब उसने कहा कि मैं पहले पतिके साथ चार साल रही, उस हालतमें मेरा प्रथम पुत्र हुआ। उस समय मुझे सब प्रकारके सुख थे और वह पति भी अच्छे लक्षणोंवाला था, इससे मेरा पहला लड़का बहुत उत्तम स्वभावका है। वह पढ़ने-लिखने और हर एक काममें होशियार है। उसके बाद मेरा पति मर गया और एक फौजी मनुष्य मेरे पास आने लगा। वह बहुत ही झूठ बोलनेवाला, छली और कपटी था; इससे मेरा स्वभाव भी बिगड़ गया और उस मनुष्यसे

दूसरा गर्भ रहा जिसका फल यह दुसरा लड़का बड़ा ही छली, कपटी और धोखेबाज हुआ। इसके बाद मेरे पास एक शराबी आने लगा। उस समय तक मैं शराब कभी नहीं पीती थी, लेकिन वह शराबी मेरे पास एक दो बोतल शराब सदैव रख जाता था, जिसे मैं कभी कभी पी लिया करती थी। फल यह हुआ कि मुझे भी शराबकी आदत पड़ गई और इसके बाद मेरे जो एक लड़की उत्पन्न हुई, वह जन्मसेही शराबकी व्यसनी है। जिस वक्त इसका जन्म हुआ था, यह आठ दिन तक बराबर रोती रही। जब डाक्टरको दिखलाया तो उसने कहा कि इसे थोड़ीसी शराब दिया करो। १० घूँट शराब लड़कीको पिलाई, उसी वक्त उसको नींद आ गई। तबसे इस लड़कीको शराब पीनेका व्यसन पड़ गया है। मेरा यह शराबी आदमी जहाजका कप्तान था, इस कारण कुछ दिनोंमें जहाज-के चले जानेसे वह बाहर चला गया। उसके चले जानेसे मेरी शराबकी आदत तो छूट गई, परन्तु यह लड़की शराबकी आदतको लेकर पैदा हुई है, इस कारण इसकी शराब नहीं छुटी। इसके बाद मेरे पास एक खेल-तमाशे और नाटकोंका शौकीन आदमी आने लगा। उसकी संगतिसे मुझे खेल-तमाशों और नाटकोंका शौक लग गया। जिस समय उस व्यक्तिसे मुझे गर्भ रहा, उस समय मेरा मन खेल-तमाशों और नाटकों-में ही लगा रहता था। इस चौथे लड़केकी तासीर वैसेही खेल-तमाशेकी पड़ गई है। यह मेरा चौथा पति जर्मनी गया और वहाँ चेचक निकलनेसे मर गया। इसके बाद एक पुर्तगीज साहब मेरे पास आने लगा, वह बड़ा जुआरी था। उसके

साथ मुझे भी जुआ खेलनका व्यसन लग गया। समयपर उस-से मुझे पाँचवाँ गर्भ रहा, और लड़का पैदा हुआ। देखती हूँ कि वह भी छुटपनसे जुआरी है। जब इस साहबके साथ जुएमें सब पैसा चल गया, तब मैं तङ्ग आ गई और साहब भी न मालूम कहाँ चलागया। इस हालतमें मैं बहुत दुःखी हो गई। इसके बाद एक फौजी आदमी जो पेंशन पाता था, मेरे पास आने लगा। इससे मुझे खानेको तो मिलने लगा, परन्तु नादान बच्चोंका पालन करना कठिन हो गया। इसलिये और सब बच्चोंको तो एक देशोपकारी स्कूलमें भर्ती कर दिया, केवल सबसे छोटा बच्चा मैंने अपने पास रक्खा। मेरे इस छठे बूढ़े पतिसे भी मुझे छठा गर्भ रहा। उस समय गरीबीकी हालतमें मेरा मन भी बहुत खराब और चिन्तातुर रहा, इससे यह छठी लड़की भी निरन्तर उदास और चिन्तातुर रहती है। माताके मानसिक तथा शारीरिक कृत्योंका संतान पर क्या प्रभाव पड़ता है, इसका स्पष्टीकरण करनेके लिये ही उपर्युक्त उदाहरण लिखा गया है। स्त्रीको एकसे अधिक पति करना बुरा है या भला, इस बातका यहाँ पर प्रश्न नहीं है। सारांश यह है कि गर्भकालमें स्त्रीके मनपर जो छाप अंकित हो जाती है, जो भाव जम जाते हैं, उन्हीं भावोंको लेकर बालक जन्मता है। इसलिये यह जरूरी है कि गर्भवती स्त्रियाँ अपनी आदतों और स्वभावोंको जहाँ तक हो, अच्छा रक्खें, अंगभंग मूर्त्तियों तथा भयानक दृश्योंको न देखें और न मनमें कोई ऐसा विचार आने दें कि जिनसे उनका मन कलुषित हो।

क्रोधी मातापिताका उनकी संतान पर कैसा प्रभाव पड़ता

है, इस बातको भली भाँति समझानेके लिये इस स्थलपर हम आँखों देखा एक उदाहरण लिखते हैं। हरियाना कैथलनिवासी पं० बस्तीरामजी, कनखलकी एक पाठशालामें अध्यापक थे। उस पाठशालामें दिल्लीके समीपवर्ती किसी ग्रामका रहनेवाला एक विद्यार्थी पढ़ता था। वह बड़ा क्रोधी था। उसके क्रोधका परिचय घड़ी घड़ी पर मिलता था। हम भी उस पाठशालामें बहुधा बैठनेको जाया करते थे। एक दिन हमने पण्डितजीसे उस क्रोधी लड़केके विषयमें पूछा तो उन्होंने कहा—

"यह विद्यार्थी मेरे दूरके रिश्तेदारोंमेंसे है। गदरके समय अर्थात् सन् ५७के बलवेमें यह माताके गर्भमें था। उस समय दिल्लीकी तरफसे बागी (सरकारके द्रोही) सिपाही इनके गाँवमें पहुँचे और लूटने लगे। इसके घर भी कई सिपाही आये। इसके माता-पिताने पहले तो उनसे बहुत बिनती की, और उनके सामने दूध-दही-घी-गुड़ जो अच्छे पदार्थ थे वे सब रख दिये, और कहा कि इन्हें तुम खाओ, परन्तु हमारा घर न लूटो। लेकिन उन्मत्त सिपाही लोग न माने, घरमें घुस गये। तब तो इसकी माता और पिताको इतना क्रोध आया कि ये दोनों उनको मारनेको तैयार हो गये। पहले माताने मूसल उठाकर सिपाहियोंको दोनों हाथों-से ठोकना शुरू कर दिया और तब अपनी स्त्रीको क्रुद्ध देखकर इसका पिता भी कुल्हाड़ी लेकर सिपाही लोगों पर टूट पड़ा। कई सिपाही घायल किये, और कई सिपाहियोंकी कुल्हाड़ी और मूसलकी मारसे कपालकी हड्डियाँ टूट गईं और वे वहीं मर गये। इसी कारण यह बालक छुटपनसे ही ऐसा

क्रोधी है। इसकी माता तो जिन्दा है, लेकिन पिता मर गया है। गाँवके सब आदमी इससे हैरान हैं। इसकी माता मेरे पास जब यह १६ वर्षकी उमरका था, तब छोड़ गई थी। यदि इसको क्रोध न होता, तो यह व्याकरणका अद्वितीय विद्वान् होता। परन्तु जब इसको क्रोध आता है, तब सब भूल जाता है। जब यह छोटा था, तब भी हाथ-पैरोंको माताके शरीर पर मारता था, और जो कोई इसको गोदमें उठाता था, उसको मारने लगता था। सोते रहने पर भी पैर और हाथ पटकता रहता था। जब इससे माता या पिता कुछ कहते, तो यह उन्हें दोनों हाथोंसे मारने लगता था। अब भी इसकी यही आदत है कि जब किसीको मारता है, तो दोनों हाथोंसे मारता है।" अतएव गर्भवती स्त्रियोंको क्रोध करना उचित नहीं है। मास्तिष्क विद्याके जाननेवाले एक डाक्टर साहब कहते हैं कि जिन लोगोंका स्वभाव क्रोधी होता है, उनके कानके पीछेका स्थान विशेष प्रफुल्लित होता है।

गर्भवती स्त्रीको उचित है, कि इतना परिश्रम कदापि न करे, जिससे उसका शरीर थक जाय। गर्भवती स्त्रीके अधिक परिश्रम करने और शरीरके थक जानेसे बालक निर्बल और सुस्त शरीरवाला होता है; और सदैव उसका शरीर सूखा हुआ देख पड़ता है। गर्भवती स्त्रीको किसी रोगी मनुष्यकी सेवाशुश्रूषामें (जहाँतक संभव हो) रहना भी ठीक नहीं है। कारण कि रोगी मनुष्य दूसरे आरोग्य मनुष्यकी प्राणशक्तिको आकर्षण करता है और अपनी रोगशक्तिको दूसरेके शरीरमें प्रवेश करता है। एक स्त्रीके दो बच्चे थे, एक

लड़का और दूसरी लड़की। लड़का अति कृश-शरीर और नाजुक प्रकृतिका था; उसका मन सदैव उदास रहता था और वह सदा रोगीके समान दीखता था। वह एक दिन उस लड़केको लेकर हमारे समीप आई। साथमें उसकी लड़की भी थी। स्त्री कहने लगी कि—"यह लड़का बड़ा ही दुर्बल रहता है, न मालूम इसको क्या दर्द है?" लड़केकी उमर १५ सालकी थी और लड़कीकी १२ सालकी। लड़का, लड़कीसे उमरमें ३ साल बड़ा था, परंतु उसकी आकृति १०-११ सालके माफिक थी। हमने उसकी परीक्षा की, परंतु उसके शरीरमें ऐसी कोई व्याधि नहीं मालूम हुई जिसको उसकी कृशता और निर्बलताका कारण ठहरा सकें। जब उस स्त्रीसे पूछा कि यह लड़का इस लड़कीसे उमरमें कितना छोटा है, तब स्त्री कहने लगी, महाराज, लड़कीसे तो ३ साल बड़ा है, लड़की की उम्र १२ सालकी है, और यह १५ सालका है। लड़की देखनेमें खूब हृष्ट पुष्ट और तनदुरुस्त थी। हमने पूछा कि जब आपके गर्भमें यह लड़का था तब क्या आप रोगी रही थीं? स्त्रीने कहा—नहीं मैं तो रोगी नहीं थी, परन्तु जब यह गर्भमें था, तब जूनागढ़में मेरी सास बहुत बीमार थी और मैं ६ महीने तक बराबर उनकी सेवामें रही, अंतको वह मर गई। इसके साढ़े तीन महीने पीछे यह लड़का उत्पन्न हुआ। सासकी बीमारीके कारण मेरे शरीरको उस समय आराम नहीं मिलता था और मैं रातदिन चिन्तातुर रहा करती थी। स्त्रीके मुँहसे इतना वृत्तान्त सुनके मैंने उससे कहा—लड़केको कोई बीमारी नहीं है। केवल आपको इसकी गर्भकी हालतमें कष्ट

रहा है, इससे आरोग्यताके परमाणु उस समय आपके शरीर-से निकलकर सासके शरीरमें पहुँचते रहे और रोगके पर-माणु सासके शरीरसे निकलकर आपके शरीरमें प्रवेश करते रहे। उन्हीं परमाणुओंका असर गर्भस्थ बालकपर पड़ा है। जब लड़की आपके गर्भमें थी तब आप प्रसन्नचित्त और आरोग्य मनुष्योंके साथमें रही होंगी, इससे लड़की तन्दुरुस्त है। इस स्त्रीके दोनों गर्भोंकी स्थितिका विचार करनेसे मालूम होता है कि गर्भवती स्त्रीके रोगीके समीप रहनेसे गर्भस्थ बालकको हानि पहुँचती है।

गर्भवती स्त्री अपने मनकी उत्तम शक्तिसे श्रेष्ठ, सद्गुणी और बुद्धिमान् सन्तान कैसे उत्पन्न कर सकती है, इसकी साधना नीचे लिखी जाती है। जिस गर्भवती स्त्रीको विद्वान और पंडित संतानकी इच्छा हो, उसे बड़े बड़े ऋषियों तथा विद्वानोंके श्रेष्ठ वाक्योंको पढ़ना, सुनना तथा उनके उच्च श्रेणीके चरित्रोंका स्मरण करना चाहिये; जिन पुस्तकोंमें सदाचारी देशोपकारी ऋषीश्वरोंकी कथा-कहानियाँ लिखी हों, उनको पढ़नेका अभ्यास रखना उचित है। यदि स्त्रीकी इच्छा वीर सन्तान उत्पन्न करनेकी हो तो वह भीष्म, राम, कृष्ण, अर्जुन, युधिष्ठिर, अभिमन्यु आदि पराक्रमी पुरुषोंके चरित्र सुने और उनका स्मरण रक्खे।

इस तरह स्त्रियाँ अपने इच्छानुसार विद्वान्, वीर, व्यापारी आदि मनचाही संतान पैदा कर सकती हैं। लखनऊ-की रहनेवाली एक स्त्री-पुरुषकी जोड़ी गायनविद्यामें बड़ी चतुर थी। उनकी ९ सालकी कन्या जिस गीतको एक बार

सुन लेती थी उसे फिर नहीं भूलती थी; जब चाहो तब उससे वह गीत सुन लो। हमने उसकी परीक्षा करनेके लिये पुस्तकोंमेंसे कई पद-राग-भैरवी-ठुमरी वगैरह गाकर बतला दिये, और कई दिवस पीछे उससे पूछे तो बराबर उसने उसी तरह गाकर सुना दिये। एक गुजराती वैश्य जातिकी स्त्री जो मांडवी कन्या पाठशालामें अध्यापिका है, हिसाबमें बड़ी निपुण है। उसकी पुत्रीकी उमर १० सालकी है। आप चाहे जैसा टेढ़ा सीधा हिसाब उसके आगे रख दीजिये, वह बराबर उसको हल कर देगी। वह गुण उसकी माताकी मानसिक वृत्तिसे उतरकर उसमें आया है। अम्बाबाई नामकी एक स्त्री जो जातिकी स्वर्णकार थी, कपड़ोंपर कसीदा काढ़नेमें बड़ी निपुण थी। उसकी एक कन्या इस विषयमें उससे भी बढ़कर हुई। उसका नाम जीवाबाई है। उस लड़कीकी उमर जिस समय ७ सालकी थी, उस समय जिस पत्र, पुष्प, झाड़, बेल-बूटे तथा पक्षी आदिकी आकृति उसके सामने रख दो, वह उसकी नकल कपड़े पर ज्यों की त्यों उतार देती थी। वस्तुतः ये सब गुण मातासे उतरकर सन्तानमें आते हैं और बाल्यावस्थामें ही विकास पाने लगते हैं। एक गुजराती पुरुष जो कि जर्मन सिलवरके बर्तनोंका व्यापार करता था, अकस्मात् प्लेगसे मर गया। उस समय उसकी स्त्रीकी उमर १८ सालकी थी और वह गर्भवती भी थी। वह औवल दर्जेकी मूर्ख और मोटी बुद्धिकी थी। उसके पतिने उसके पढ़ानेके लिये अनेक प्रयत्न किये, परन्तु उसने पढ़नेमें चित्त नहीं लगाया। जब पति मर गया तब उसको बड़ी फिकर हुई। उसे यह भी

नहीं मालूम था कि मेरे पतिकी कितनी पूँजी है, और कितना बाजारके व्यापारियोंसे लेना-देना है। वह सोचने लगी कि नौकरोंका क्या भरोसा है, अगर मैं पढ़ी लिखी होती तो इस समय अब हिसाब वगैरह समझ सकती। अब जमुनाबाईने 'बीती ताहि बिसार दे आगेकी सुधि लेय' के अनुसार एक पाठिकाको उसी समय बुलाया और कहा कि आप मुझे पढ़ना लिखना सिखा दें। बस फिर क्या था, उसी दिनसे पठन-कार्य शुरू होगया। गर्भकी हालतमें ही उसने गुजरातीकी तीन पुस्तकें पढ़ लीं। कुछ दिनोंके बाद जमुनाबाईके गर्भसे पुत्रका जन्म हुआ। वह जब चार सालका हुआ, तभीसे उसकी रुचि पढ़ने लिखनेकी ओर होने लगी। उस समय माता उसके मुखसे स्वरों और व्यञ्जनोंका उच्चारण कराने लगी। अपने पड़ोसके लड़कोंको पाठशालामें पढ़नेके लिये जाते देखकर वह चार सालका लड़का उनके साथ जानेको बहुत रोता था परंतु माता उसकी छोटी उमर होनेके कारण पाठशालामें नहीं भेजती थी; वह उसे घर पर ही पढ़ाया करती थी। वह अक्षर गिनती आदि घर पर ही सीख गया। जब उसकी उमर पाँच सालकी हो गई तब वह पाठशालामें जाने लगा। इस समय उस बालककी उमर ११ वर्षकी है तो भी वह सब तरहके व्यवसायसम्बन्धी हिसाब किताब कर लेता है। माताने गर्भावस्थामें पढ़ना आरम्भ किया, उसीका असर इस बालक पर पड़ा। अब यहाँपर एतद्देशीय उदाहरणोंके सिवा हम कुछ विदेशी उदाहरण भी देना उचित समझते हैं।

जगत्प्रसिद्ध वीरशिरोमणि **नेपोलियन बोनापार्ट** ज

कि युद्धविद्यामें अति निपुण था, और अपनी युद्धविद्याकी कुशलतासे दुनिया भरको जीतकर, अपने अधीन करनेकी इच्छा रखता था, उसकी उत्पत्तिके विषयमें एक पुस्तकमें लिखा है, कि जब नेपोलियनकी माता यूनानी वीरोंकी कहानियाँ और युद्धका इतिहास पढ़ा करती थी उस समय नेपोलियन माताके गर्भमें था। इसीके असरसे नेपोलियन बोनापार्ट महान् पराक्रमी और युद्धचतुर हुआ। **डाक्टर फुलर** कहते हैं कि नेपोलियन जिस समय अपनी माताके गर्भमें था, उस समय वह एक मजबूत घोड़े पर सवार होकर घूमती थी, और उसके पतिकी अधीनतामें जितने मनुष्य रहते थे, उनके ऊपर हुकूमतका रोब रखती थी। माताका यही गुण पुत्रमें विकाश पाकर इतना बढ़ गया कि वह सारी दुनियाँ पर अपनी हुकूमत जमानेकी इच्छा रखने लगा। **मिस एमसी** नामकी एक स्त्री गर्भकालमें नेपोलियनकी लड़ाईकी पुस्तक पढ़ा करती थी और युद्धस्थलकी भूमिका चित्र देखा करती थी। नेपोलियनकी विजयका वृत्तान्त पढ़कर वह प्रसन्न होती थी। उसके घरमें चारों ओर नेपोलियनके विविध युद्धप्रसंगोंके चित्र लगे हुए थे। फलतः इस स्त्रीका लड़का सब प्रकारकी युद्धविद्या और राजनीतिमें निपुण हुआ।

एक **अंगरेज़ स्त्री** लन्दन मेडिकल कालेजसे निकलनेवाले समाचारपत्रोंको पढ़ा करती थी। उन समाचारोंमेंसे इच्छित सन्तान उत्पन्न करनेका समाचार पढ़ते पढ़ते उसके मनमें ऐसी इच्छा उत्पन्न हुई कि एक सन्तान तो मेरे उत्पन्न

हो चुका है, अब बाकी सन्तान जितनी उत्पन्न करूँगी, अपनी इच्छाके अनुसार करूँगी। वह स्त्री अपने चार बालकोंकी उत्पत्तिका हाल इस प्रकार लिखती है। प्रथम बालक जब मेरे उत्पन्न हुआ, उस समय विद्यापर मेरी रुचि पूर्ण रूपसे नहीं थी, इससे मेरे मनका पूर्ण असर बालकपर नहीं हुआ। इसी कारण मेरा पहला लड़का साधारण बुद्धिवाला हुआ। जब दूसरा लड़का गर्भमें आया, उस समय मेरा विचार हुआ कि मैं उत्तम भाषण करनेवाला, वाक्पटु और विद्वान् बालक उत्पन्न करूँगी। इसलिये मैं उस समय यूरोपके प्रसिद्ध वक्ताओंका व्याख्यान श्रवण करने जाया करती थी। समाचारपत्रोंमें नामी नामी लेखकोंके लेख पढ़ती और प्रसिद्ध कवियोंकी कविता पढ़नेमें ही अपना अधिक समय व्यतीत करती थी। जब किसी विषयके निर्णयके लिये विद्वानोंका परस्पर वादानुवाद (शास्त्रार्थ) होता, या समाचारपत्रोंमें उस विषयके लेख निकलते थे तब उनको मैं खूब मन लगाकर पढ़ती थी। इस रीतिसे यह दूसरा लड़का उत्तम वाक्पटु और विद्वान् उत्पन्न हुआ। मैंने गर्भ कालमें जिन जिन विषयोंका अध्ययन वा मनन किया था, यह बालक उन्हीं उन्हीं विषयोंमें बहुत प्रवीण निकला। जब तीसरा बालक मेरे गर्भमें आया, तब मेरा विचार हुआ कि इस लड़केको नामी चित्रकार और कारीगर बनाऊँगी। तदनुसार मैं अमेरिका और यूरोपके उन शहरोंमें गई जहाँ नामी नामी चित्रकार रहते थे। मैंने उनकी चित्रशालाओंमें रहकर चित्रविद्याका अभ्यास किया, कल कारखानोंमें जाकर एकाग्र मनसे कला-कौशलके कामोंको देखा और

रात्रिके समय इन विषयोंकी पुस्तकोंको बाँचकर उनका ज्ञान प्राप्त किया। इससे वह तीसरा लड़का चित्र-लेखन और कला-कौशलके काममें बहुत प्रवीण निकला। चौथा लड़का जब गर्भमें आया तब मेरी इच्छा हुई कि इस बार मैं ऐसा लड़का उत्पन्न करूँ कि जो शूरवीर, युद्धविद्यामें निपुण और शत्रुओं-को पराजित करनेवाला हो। उस समय मैं नैपोलियनका जीवनचरित और उसके युद्धोंके इतिहास तथा अन्यान्य शूर-वीरोंके युद्धचरित पढ़ती थी। मैंने कई वीर पुरुषोंके चित्र अपने मकानमें लगा रक्खे थे। उस समय लड़ाईके समाचार भी अखबारोंमें विशेष छपते थे। उन अखबारोंमेंसे कभी कभी शूरवीरोंके साहसकी बात पढ़कर मुझे जोश आ जाता था। इस प्रकारकी धारणा और अभ्याससे यह चौथा पुत्र उत्पन्न हुआ। इसीसे यह चौथा लड़का फौजी ड्रेस पसन्द करता है, और अन्य बालकोंके साथ लड़ाई करने, किला बनाने और तोड़नेके खेल खेलनेमें रुचि रखता है। चौथा लड़का होनेके समय मेरी अवस्था ३३ सालकी थी। उस समय मेरे मस्तकमें दर्द रहने लगा था, और शरीर भी कुछ अशक्त हो गया था, इस कारण और सन्तान उत्पन्न करनेका मेरा विचार निवृत्त हो गया था। क्योंकि मेडिकल समाचारपत्रोंमें मैंने पढ़ा था कि यदि रोगी स्त्री गर्भ धारण करती है, तो प्रथम तो सन्तान ही नहीं उत्पन्न होती; और यदि होती भी है तो रोगी और निर्बल होती है। इसीसे मैंने और सन्तान उत्पन्न करनेकी इच्छा त्याग दी। किसी स्त्रीने उस स्त्रीसे प्रश्न किया कि आपका प्रथम लड़का साधारण और तीन लड़के विशेष विद्वान् और जुदा जुदा विषयों

के जानकार हुए, परन्तु इन लड़कोंके बदले लड़की क्यों न हुई ? इसका क्या कारण है ? स्त्रीने उत्तर दिया, कि मैं मेडि-कल समाचारपत्रोंमें एक डाक्टर महाशयकी कई बारकी परीक्षाका समाचार पढ़ चुकी थी, कि जो स्त्री रजोधर्मके दिवससे लेकर चार दिवस त्यागकर आगेके छह दिवसोंमें गर्भ धारण करती है, उसके गर्भसे लड़की उत्पन्न होती है; क्योंकि इन दिनों स्त्रीके गर्भाशयमें रजकी अधिकता रहती है। अतः मैं इस अवधिको व्यतीत करके अर्थात् दसवें दिवसके बाद वीर्य्य ग्रहण करती थी। यदि कभी मुझे पतिके पास जानेकी इच्छा भी होती, तो अपना शौक पूरा करनेको गर्भ धारणकी अवधिके १२ दिवस त्यागकर जाती थी। ऋतुधर्म्म दिखनेके दिवससे लेकर दसवें दिवसके उपरांत स्त्रीबीजजन्तु-का जमाव स्त्रीके गर्भाशयमें कम हो जाता है। इस स्त्रीका कथन है कि जैसे मन अपने मनोविचारोंकी शक्तिसे अपने पुत्र पृथक् पृथक् गुणविशिष्ठ उत्पन्न किये हैं, उसी प्रकार प्रत्येक स्त्री अपनी सन्तानको अपने इच्छानुकूल गुणोंवाली उत्पन्न कर सकती है।

अब यहाँ पर जानने योग्य यह बात है, कि स्त्रीके मन-का असर गर्भस्थ बालकपर कैसे पड़ता है। हम पहले इस बातको लिख चुके हैं कि मनुष्यके समस्त शरीरमें ज्ञान-तन्तु पत्तोंकी नसोंके समान विस्तृत हैं। तदनुसार गर्भाशयके अन्तर-पिण्डसे स्त्रीके ज्ञानतन्तुओंका सम्बन्ध जुड़ा हुआ है; और गर्भाशयके ज्ञानतन्तुओंका सम्बन्ध बालकके शरीर तथा नालसे जुड़ा हुआ रहनेसे स्त्रीके मानसिक विचारोंका असर बालकके

शरीर पर पड़ता है और उन्हीं तत्त्वोंको लेकर उसका शरीर बनता है। जो विचार स्त्रीके मस्तिष्कमें उत्पन्न होते हैं, उनका असर बालकके मस्तिष्क तथा ज्ञानतन्तुओंमें पहुँचता है। शरीरके छोटेसे छोटे भागमें ज्ञानतन्तु विस्तृत हैं। यदि शरीरके किसी छोटेसे छोटे भागमें भी कुछ आघात पहुँचे, तो उसका ज्ञान बराबर दिल और दिमागको होता है। गर्भस्थ बालक जबतक गर्भमें रहता है तबतक वह माताके एक अङ्गके समान रहता है। जैसे माताके शरीरके अन्य अवयव माताके शरीरमें फिरते हुए रक्तसे पोषित होते हैं, वैसे ही गर्भस्थ बालक भी माताके शरीरके रक्तसे पोषित होता है। मनके पृथक् पृथक् विचारोंके असरसे माताके रक्तमें पृथक् पृथक् परिवर्तन होता है। क्रोध, ईर्षा, छल, कपट, शोकातुरता, चिन्ता मानसिक विकारोंसे उत्पन्न हुए दोष रक्तमें विष या विकार उत्पन्न करते हैं। ऐसे दूषित रक्तसे पोषित हुए बालकका शरीर अवश्य ही अपने बीज रूप दोषोंसे युक्त होगा और ज्यों ज्यों उसकी उमर बढ़ती जायगी, त्यों त्यों उन दोषोंका विकास होता जायगा। क्रोध, भय, ईर्षा आदि मानसिक विकारोंका रक्त पर जो प्रभाव पड़ता है, उससे रक्त बहुत दूषित और विषाक्त हो जाता है। नामी डाक्टर ऐसे लोगोंके पसीनेकी जाँच करके बतला सकते हैं कि यह पसीना कैसी प्रकृतिके मनुष्यका है। कोई मनुष्य किसीका खून करना चाहता हो तो यह बात उसके खूनकी रासायनिक परीक्षा करनेसे जानी जा सकती है। क्योंकि ऐसी हालतमें उसके खूनमें एक विलक्षण दोष पैदा हो जाता है। यही कारण है कि

बहुधा अधिक चिन्ता या भयके कारण स्त्रियोंका गर्भस्राव हो जाता है। कहनेका सारांश यह है कि गर्भकालमें माताको इन विकारोंसे सर्वथा दूर रहना चाहिये।

यह पहलेही लिख चुके हैं कि माताके प्रत्येक अवयवमें ज्ञानतंतु रहते हैं और उसीसे संबंध रखनेवाली मनःशक्ति भी रहती है। यही मनःशक्ति गर्भाशयमें बालकके शरीर और प्रकृतिकी रचना करती है। माताके हृदयमें रहनेवाली मनःशक्ति बच्चेके हृदयकी रचनामें सहायक होती है और उसीके अनुसार उसका हृदय बनता है। माताके मस्तिष्कमें रहनेवाली मनःशक्ति बालकके दिमागकी रचना करती है। सारांश, माताके प्रत्येक अवयवके ज्ञानतंतुओंका सम्बन्ध गर्भस्थानके गर्भ-तंतुओंसे रहता है, इसी लिये माताके मस्तिष्क, हृदय, प्रत्येक अवयव तथा मनःशक्तिमें जैसा जैसा परिवर्तन होता है, वैसा वैसा फेरफार बच्चेमें भी होता है। इसी बातको दूसरे शब्दोंमें इस तरह कह सकते हैं कि माताके मनके ज्ञानतंतुओंका और बालकके शरीरका लोह-चम्बुकके समान संबंध है। जैसे लोहेको चुम्बक खींचता है, उसी तरह गर्भस्थ बालक माताके शरीरकी व्यापक शक्तिको खींचता है।

गर्भ रहनेके समयसे ६ महीनेतक बालकका शरीर बनता है और आगेके ३ महीनोंमें उसमें बुद्धि, सद्‌गुण, तर्कशक्ति, विचार-शक्ति, स्मरणशक्ति, आदिके कारणोंकी उत्पत्ति मस्तिष्कमें होती है। जो बालक ७ या ८ मासमें उत्पन्न होकर जीवित रहते हैं उनमें दिमागकी ये शक्तियाँ पूर्ण रूपसे उत्पन्न नहीं होने पाती हैं। एक गुजराती पाटीदार जातिके मनुष्यकी

लड़कीको लेकर उसकी माता हमारे समीप आई, और कहने लगी कि " इस लड़कीको कुछ भी बुद्धि नहीं है, होशियारी इसमें बिलकुल नहीं है। जातिकी ज्यौनारमें जाती है, तो वहाँसे मिठाई वग़ैरह खानेके पदार्थ चुरा लाती है, इससे अपनी आबरू बिगड़ती जाती है। जब किसी कामके लिये कहा जाता है, तब उस समय तो करने लगती है लेकिन पीछे भूल जाती है। बाज़ारसे कोई वस्तु मँगाती हूँ, तो कह जाती है, कि यही वस्तु लाऊँगी, परन्तु दूसरी वस्तु ले आती है। इसकी उमर १७ सालकी है। इसकी शादी छोटी उमरमें कर दी गई थी। अब यह पतिके घर रहती है। भोजन बनानेको बैठती है, परन्तु जिस परिमाणसे प्रत्येक भोजनमें मसाले या जलका संयोग करनेकी विधि है, उससे विपरीत कर देती है। इससे कुछ भी बुरी भली बात कहो, सब सुन लेती है; क्रोध या गुस्सा कभी नहीं आता। थोड़ा बोलती है। जातिकी स्त्रियाँ विवाह वा अन्य मंगल कार्य्योंमें गीत गाती हैं, उस समय यह 'ऐंऐं' तो किया करती है, लेकिन उनके साथमें गा नहीं सकती। इसकी परीक्षा करके कुछ उपाय करो। महाराज ! यह लड़की गुजराती भाषाकी तीन पुस्तकें भी पढ़ चुकी है।" पहले हमने उससे यही प्रश्न किया, कि "तुमने जितना पढ़ा है, उतना याद है कि नहीं ?" लड़कीने जवाब दिया कि "नहीं"। उसकी पढ़ी हुई गुजरातीकी तीनों पुस्तकें दी गई। वह हर एक पुस्तकको पढ़कर उसके पाठका मतलब समझाने लगी। फिर पढ़ना बन्द करवा दिया। एक घण्टेके बाद लड़कीसे पूछा गया कि तुमने इन पुस्तकोंमेंसे कौन कौन

पाठ पढ़कर सुनाये थे ? लड़कीने जवाब दिया, कि मुझे तो याद नहीं, मैं भूल गई। फिर हमने उसको दो शब्द याद कराके घर जानेकी आज्ञा दी, और कह दिया कि इन शब्दोंको भूलना नहीं, कल आकर हमको सुनाना। दूसरे दिवस उसकी माता लेकर आई। लड़कीसे प्रथम दिवसके शब्द पूछे गये, तो जवाब मिला कि मुझे तो याद नहीं है। हमने पूछा, कल तुम यहाँ आई थीं, याद है कि नहीं ? लड़कीने जवाब दिया, मैं यहाँ आई तो हूँ, पर कब आई हूँ, यह याद नहीं आता। उस लड़कीकी मातासे हमने प्रश्न किया कि यह लड़की गर्भमें कितने दिन रही है ? उसने जवाब दिया कि "यह ७ मास १३ दिवस गर्भमें रहकर उत्पन्न हुई है।" लड़कीका मस्तक देखा गया, तो वह पूर्ण रूपसे प्रफुल्लित नहीं था, शिरके ऊपर बीचकी कपालास्थि संकुचित थी, इसी कारण लड़कीके मस्तकमें स्मरण और कारणशक्ति नहीं थी। क्योंकि जो समय दिमागमें सम्पूर्ण शक्तियोंके संचय करनेका है, उसी समय लड़कीका जन्म हो गया।

डाक्टर फुलरने अपनी पुस्तकमें लिखा है कि मेरे समीप एक मनुष्य अपनी बेअक़ल बेवकूफ़ लड़कीको लेकर आया जो बिलकुल पागल मनुष्यके समान थी। चलनेके समय पागलके समान चलती थी। उसकी बातें भी मूर्खतापूर्ण और चित्तभ्रमीके समान थीं। डाक्टर फुलरने उस मनुष्यसे प्रश्न किया कि जिस समय यह लड़की अपनी माताके गर्भमें थी, उस समय इसकी माताकी क्या स्थिति थी ? इसके उत्तरमें लड़कीके पिताने कहा, कि जब यह लड़की अपनी माताके

गर्भमें थी, और छः मास गर्भके व्यतीत हो चुके थे, उस समय मैं और मेरी स्त्री दोनों घोड़े पर सवार हो कर दूसरे ग्रामको जाते थे। मार्गमें वृक्षोंके नीचे एक पागल मनुष्य पड़ा था। उसे देखकर मेरी स्त्री बड़ी भयभीत हुई और कहने लगी, कि अपनी जानकी हिफ़ाजत और सलामतीके लिये इस मार्गको त्यागकर दूसरे मार्गसे चलो। मुझे इस मनुष्य-से बड़ा ही भय मालूम होता है। उस मार्गसे मैं अपनी स्त्रीको शीघ्र निकाल ले गया। परन्तु जबतक यह लड़की उत्पन्न नहीं हुई, तब तक उस मनुष्यका भय उसके मनसे नहीं निकला। तीन महीने तक बराबर मेरी स्त्री भयभीत रही। जब इस लड़कीका जन्म हुआ और लड़की बड़ी होने लगी, तबसे बराबर इसके लक्षण पागलके समान पाये जाते हैं। इसकी बातचीत बिल्कुल बेढँगी और मूर्खोंके समान है।

डाक्टर फुलरने उस लड़कीके मस्तिष्ककी परीक्षा की, तो मालूम हुआ कि उस लड़कीके मस्तिष्कमें अवलोकन करनेकी शक्ति तो पूर्ण रूपसे प्रफुल्लित है, परंतु उसके ऊपरके भागमें जो बालोंका स्थान है, जिसको कपाल कहते हैं, वहाँ दर्याफ्त करनेकी शक्ति और तर्क करनेकी शक्तिका जो स्थान है, वह पूर्ण रूपसे नहीं बना है। कारण, प्रथम छः महीने पर्य्यन्त लड़कीके शरीरकी बनावट बराबर होती रही है, इससे अव-लोकन करनेके भाग बराबर बनकर ठीक तौर पर प्रफुल्लित हुए देख पड़ते हैं; परन्तु छः महीनेके बाद लड़कीकी माताके भयभीत होनेसे बाकीके तीन मासमें जो दर्याफ्त करनेकी तथा

तर्क और विचार करनेकी शक्तिकी तैयारी हो रही थी, वह रुक गई, और इस रुकावटका कारण लड़कीकी माताका भयभीत होना है। इससे लड़कीके दिमागकी बनावटमें त्रुटि रह गई है। इसी कारणसे इसके व्यवहार पागल तथा मूर्खके समान हैं। डाक्टर फुलरने अपनी पुस्तकमें लिखा है कि ६ महीनेके बाद ही गर्भस्थ बालकके दिमागमें बुद्धि, मानसिक शक्ति और विचार करनेकी शक्ति उत्पन्न होती है, इसलिये गर्भवती स्त्रीको उचित है, कि प्रथम गर्भकालके छः मासमें बालकको रूपवान् और आरोग्य बनानेकी कोशिश करे, और पीछेके तीन मासमें बुद्धि, विचारशक्ति, स्मरणशक्ति और मानसिक शक्तिसे परिपूर्ण बनानेका प्रयत्न करे।

बालक आरोग्य उत्पन्न हो, और उत्पन्न होनेके बाद भी आरोग्य रहे, इसके लिये गर्भवती स्त्रीके कर्त्तव्य नीचे लिखे जाते हैं। हम ऊपर लिख ही चुके हैं, कि गर्भस्थ बालकका पोषण माताके शरीरसे होता है। महर्षि चरकने इस विषयमें जो कुछ लिखा उसका सारांश यह है—

कूँखमें गर्भको भूख-प्यास नहीं लगती। गर्भस्थ बालकका आहार परतन्त्र है। बालककी नाभिमें अमरा नामकी एक नाड़ी होती है, जिसको स्त्रियाँ नाल कहती हैं। उस नालका सम्बन्ध गर्भाशयके ज्ञानतन्तु और रक्त पहुँचानेवाली माताके हृदयके स्नायुओंसे रहता है। इसी नालके द्वारा माताके शरीरसे गर्भस्थ बालकको आहार-रस पहुँचता है। यही आहार-रस गर्भस्थ बालकके बलवर्णकी वृद्धि करता है। गर्भवती स्त्री जो कुछ खाती है, उससे तीन प्रकारका रस उत्पन्न होता

है। एक भागसे गर्भवती स्त्रीके शरीरका पोषण होता है, दूसरे भागसे स्तन-कोषमें बालकके लिये दुग्धोत्पत्ति होती है और तीसरे भागसे गर्भकी वृद्धि होती है और इसी कारण गर्भ कूखमें जीवित रहता है। ऊपर लिख चुके हैं कि गर्भावस्थामें बालकका पोषण माताके रक्तसे होता है। इसलिये गर्भवती स्त्रीको बालककी आरोग्यताके लिये अपना रक्त अति स्वच्छ रखना चाहिये। यदि किसी स्त्रीको रक्तविकार अथवा अन्य प्रकारकी व्याधि हो, तो उसे गर्भ धारण करना उचित नहीं है। ऐसी अवस्थामें रोग-निवृत्ति हो जानेके बाद ही गर्भ धारण करना योग्य है। आरोग्य स्त्रीको रक्त शुद्ध रखनेके लिये हलका और पौष्टिक आहार करना चाहिए। उसके भोजनमें विशेष नमक, खटाई और गर्म मसाले आदि रक्तको दूषित करनेवाले पदार्थ न रहने चाहिये। यदि गर्भवतीका मन खटाई खाने पर चले, तो जरिश्क (काली किसमिस) आलूबुखारा, अनार-दाना, नीबू, इन खटाइयोंमेंसे कोई थोड़ा थोड़ा दे सकते हैं। गर्भवती स्त्रीको हँसमुख और प्रसन्नचित्त रहना चाहिये। यह भी रक्तको साफ करनेका उत्तम साधन है। क्लेश, लड़ाई झगड़ा, क्रोध, ईर्षा, परनिन्दा आदिसे रक्त दूषित होता है और कई प्रकारके विषाक्त (जहरीले) तत्त्व रक्तमें उत्पन्न हो जाते हैं। गर्भवती स्त्रीको सदैव प्रसन्नचित्त और मौजकी हालतमें रहना ही हितकारी है। आहार और प्रसन्नताके अतिरिक्त गर्भवती स्त्रीको स्वच्छ जलवायुकी भी आवश्यकता है। हर रोज सायंकाल या प्रात:काल ऋतुके अनुकूल स्वच्छ वायुमें फिरना चाहिये; परंतु इस देशकी परदानशीन स्त्रियोंको स्वच्छ वायुमें

फिरना नसीब नहीं। यह रवाज इस देशमें बहुत ही खराब है। स्वच्छ हवाके सेवनसे रक्त स्वच्छ रहता है और भोजन बराबर पचता है। गर्भवती स्त्रीको दो जीवके लिये श्वास लेनी पड़ती है, इसलिये उसे अधिक और स्वच्छ वायुकी आवश्यकता होती है। माताकी श्वास-प्रश्वासकी गतिके साथ गर्भस्थ बालककी श्वास-प्रश्वासकी गति होती है। गर्भवती स्त्रीको इतना चुस्त कपड़ा न पहनना चाहिये, कि जिसकी तंगीसे बालकके श्वास-प्रश्वासका अवरोध हो। ऐसा अवरोध होनेसे बालककी गर्भमें ही मृत्यु हो जाती है। डाक्टर फुलरने लिखा है कि गर्भमें जो बालक मर जाते हैं उनमेंसे अधिकांश बालकोंके मरनेका कारण तङ्ग कपड़ा पहनना अथवा तङ्ग कमरपट्टा बाँधना है। तंग कपड़ा पहनना वा कमरपट्टा बाँधना गर्भवती स्त्री तथा गर्भस्थ बालक दोनोंके लिये हानिकारक है। हमारे शास्त्रोंमें स्वस्थ रहने और मानसिक शक्ति बढ़ानेके लिये प्राणायामकी विधि लिखी है। प्राणायाम प्रातःकाल और संध्या समय किया जाता है। अंदरकी श्वासको नासिका द्वारा बाहर निकालना और बाहरसे स्वच्छ वायुको धीरे धीरे खींचकर अन्दर थोड़े समय पर्य्यन्त रोकना और पुनः पूर्ववत् बाहर निकाल देना, इसी क्रियाको प्रणायाम कहते हैं। इस प्रक्रियाको करनेसे रक्त उत्तम रीतिसे शरीरकी सम्पूर्ण नसोंमें फिरता है। शरीरके अन्दरसे जहरीले तत्व निकल जाते हैं, शरीर शक्तिशाली होता है, पाचनशक्ति बढ़ती है, फुफ्फुसके रोग निवृत्त होते हैं और स्त्रीके गर्भस्थ बालकको बल पहुँचता है। परंतु इस क्रियाको करते समय इतना ध्यान

रखना चाहिये कि जिस स्थानकी वायु दूषित तथा दुर्गन्धि-युक्त हो, अथवा जिस स्थानकी हवामें सर्दी, जलतत्त्व, धुआँ, धूल आदिके परमाणु हों, अथवा जिस स्थानकी हवाको आने जानेका मार्ग न मिलता हो, वा जिस स्थानमें बहुत मनुष्य सोते बैठते हों, वहाँ बैठकर प्राणायाम क्रिया न करनी चाहिये। जहाँकी जगह खुली और वायु स्वच्छ हो, वहाँ प्राणायाम करना उचित है। प्राणायाम करनेके समय सम्पूर्ण शरीरके वस्त्र ढीले करके पहनना चाहिए। गर्भवती स्त्री यदि इस क्रिया-को करे, तो तीनसे पाँच बार तक साँसको रोके और छोड़े अर्थात् प्राणायाम करे। इस क्रियाके करनेसे गर्भस्थ बालक तन्दुरुस्त होता है।

पाठक सन्देह करेंगे कि गर्भवतीको प्राणायाम करना हानिकारक होगा। इसका समाधान यही है कि ग्रामीण स्त्रियाँ सिरपर भार उठाती हैं, गर्भिणी होनेपर खेतीका काम करती हैं और कूपसे अथवा तालाबसे जल भरकर लाती हैं। उस परिश्रमसे यह परिश्रम सरल और सुख देनेवाला है। प्राणा-यामसे बालक और गर्भवती स्त्री दोनोंको लाभ पहुँचता है। प्राणायामके बाद स्त्रीका मन सात्विक हो जाता है। अतएव उस समय उस आरोग्य, खूबसूरत, सुडौल शरीरवाले बालक की तसबीर देखना चाहिये, जिससे उसके मनपर उपर्युक्त बालककी छाप पड़ जाय। मन पर छाप पड़नेकी यही विधि है कि जिस समय स्त्रीका मन चंचलतारहित और शान्त हो, अर्थात् अन्य वस्तुओंपर न हो, उस समय इच्छित वस्तुकी छाप पड़ती है। प्रातःकाल शयनसे उठकर और रात्रिको शयन

करनेके समय मन विशेष शान्त और विकल्पशून्य रहता है। ऐसे समय स्त्री अपने मन पर जैसी छाप डालना चाहे, वैसी पड़ सकती है। निद्रा आनेके समय जैसे विचारमें मन लगाया जाय, वैसा विचार निद्रावस्थामें भी जमा रहता है और उस विचारका यथेष्ट असर पड़ता है।

इस बातकी परीक्षा प्रत्येक स्वस्थ मनुष्य स्वतः कर सकता है। रातको सोते समय वह अपने मनमें निश्चय करे कि आज मुझे और दिनसे दो घंटे पहले जागना है। ऐसा सोचकर वह तुरंत ही सो जाय तो निश्चित समयपर उसकी निद्रा खुल जायगी। जो विद्यार्थी अपने पढ़े हुए पाठको रात्रिके शयन करनेके समय पढ़ते पढ़ते शयन करते हैं, उनको प्रातःकाल उठनेके समय वह पाठ ज्योंका त्यों कण्ठ रहता है। अतएव प्राणायामके लिये प्रातः और सायंकालका समय अच्छा है। इस समय प्राणायामके बाद गर्भिणी स्त्रियाँ अपने मनमें जो भावना करेंगी उसीके अनुसार उनकी संतान होगी।

गर्भस्थिति होनेके दूसरे महीनेमें गर्भपिंडमें सम्पूर्ण अङ्ग उपाङ्गोंकी आकृति प्रकट होना प्रारंभ हो जाता है। नेत्र, नाक, मुख और हाथ-पैरोंकी उँगलियोंकी आकृति मालूम होने लगती है। इसलिये गर्भवती स्त्रीको दूसरे मासके आरम्भमें ही, बालकके खूबसूरत और सुडौल अंग बनानेके लिये, उत्तम अङ्गोंका चिन्तन करना उचित है। तीसरे महीनेमें नेत्रोंकी आकृतिमें पटल-रचना होती है, नासिकाकी आकृति तथा होंठ देख पड़ते हैं, परन्तु मुख बन्द मालूम पड़ता है। इस-लिये इस महीनेमें इन अङ्गोंकी सुन्दरताका विचार करना

चाहिये। इस महीनेमें एक अत्यन्त महत्त्वकी बात जानने योग्य है। वह यह है, कि इस महीनेमें बच्चेकी जननेंद्रिय बनती है, इसलिये जिस स्त्रीको पुत्रकी इच्छा हो, उसे इस महीनेमें नर जातिकी आकृति का मनन करना चाहिये। कारण कि कन्या और पुत्र उत्पन्न करनेका मुख्य कारण माताका मन है। उसपर कन्या या पुत्रमेंसे जिस आकृतिके विचारकी मजबूत रीतिसे छाप पड़ेगी उसी तरहकी आकृति बनेगी। तीसरे महीनेमें गर्भाशयके अन्दर बालकके हृदयकी संचलन-क्रिया आरम्भ हो जाती है। उस समय मस्तिष्कका पदार्थ मावेके समान नरम मालूम पड़ता है, कमरके कंडराका बन्धेज मालूम पड़ता है, फुप्फुस (फेफड़ा) कलेजा (यकृत) आदि अङ्गोंका बनना आरम्भ हो जाता है। तीन मासके गर्भपावकी आकृति जिन चिकित्सकोंने देखी हो, वे इन लिखे हुए अङ्गोंकी आकृतिकी आरम्भिक अवस्थाको जान सकते हैं। इसलिये इस महीनेमें गर्भवती स्त्री अपने मनके सङ्कल्पको दृढ़ करके, गर्भस्थ बालकके अंगोंकी दृढ़तापर ठहरावे, जिस-से हृष्ट-पुष्ट, खूबसूरत और आरोग्य बालकको उत्पन्न कर सके।

चतुर्थ मासमें बालकके सम्पूर्ण शरीरकी मांसरज्जुयें बरा-बर देख पड़ती हैं और उनमें कुछ क्रिया भी होती है। इस-लिये चतुर्थ या पंचम मासमें गर्भवती स्त्री बालकके शरीरके मांस-रज्जुओंके गोल और पुष्ट होनेकी कल्पना करे, अथवा किसी कसरती आदमीके चित्रको सामने रखकर उसके भरे हुए मांस-रज्जुओंको ध्यानसे देखे।

छठे मासमें त्वचा (चमड़ा) की दो तहें बालकके मांस-

पिण्डपर उत्पन्न होती हैं। इस समय ये बहुत कोमल और स्निग्ध होती हैं। बच्चा सुन्दर और गौरवर्ण होनेके लिये माताको छठे महीनेके कुछ दिन पहलेहीसे उस चित्रकी सफेद और चमकती हुई त्वचाका अवलोकन करना चाहिये। ऐसा करनेसे गर्भस्थ बालककी त्वचा सुन्दर बनती है।

छः महीनेतक गर्भस्थ बालककी शरीर-रचना होती है और पृथक् पृथक् महीनोंमें पृथक पृथक अंगोंकी वृद्धि होती है। इस समय गर्भवती स्त्री अपनी मनोवृत्तिके सहारे बालकके शरीरके अंग प्रत्यंग खूबसूरत और सुडौल बना सकती है।

बच्चोंके अंग प्रत्यंग कुरूप होनेका कारण।

जिस तरह मनकी सद्वृत्ति और शान्तिसे बच्चेके अंग प्रत्यंग सुडौल और सुन्दर बनते हैं, उसी तरह मानसिक दुर्गुणोंके प्रभावसे वे कुरूप और विकृत हो जाते हैं।

जिस महीनेमें गर्भस्थ बालकके जिस अंगकी उत्पत्ति होती है उस समय यदि गर्भवती स्त्रीका मन शान्त न हो, अथवा क्रोधसे वह अपनी नाक-भौंह चढ़ाया करती हो, अथवा किसी खेल-तमाशेमें विकृत शकलोंको देखकर उनकी नकल करती हो, अथवा दुःखी और शोकातुर रहती हो तो इन कारणोंसे उसके गर्भस्थ बालकके शरीरकी बनावटमें विकृति या विपरीतता उत्पन्न होती है। माताके जिन अंगों पर दोषोंका प्रभाव पड़ता है, बालकके वे ही अंग कुरूप या विकृत हो जाते हैं।

एक फरासीसी डाक्टर डुजेने आव वोलोन कहते हैं कि "जो स्त्रियाँ गर्भके दूसरे या तीसरे महीनेमें अपनी चिड़चिड़ी

आदत नहीं छोड़ती हैं और जरा जरासी बातोंपर नाक-भौंह चढ़ाती हैं, उनकी संतानकी नासिकाकी नोक और दोनों होंठोंके मध्यका भाग ऊपरको उभरा हुआ होता है। गर्भावस्थामें माताकी ऐसी चेष्टाएँ गर्भविकृतिकारक होती हैं। इसलिये गर्भवती स्त्रियोंको सदैव प्रसन्न और शान्त चित्तसे रहना उचित है।"

मिसेस चैन्डलर कहती हैं कि "यदि गर्भवती स्त्री इस समयकी आवश्यकताओं और शक्तियोंका स्वरूप समझ जाय और बाहरी दुर्गुणोंसे अपने आपको अपवित्र न करे, अपने गर्भके जीवके लिये अपने आत्माको पवित्र रक्खें तो बहुत जल्दी इन अतिशय घिनौने कुरूप और फूट फैलानेवाले जीवोंका—जो कि मनुष्य जातिके बहुत बड़े भाग पर कलंक लगा रहे हैं—नाम ही मिट जाय।"

हम पहले लिख चुके हैं कि पहले छह महीनोंमें गर्भस्थ बालकके शरीरकी रचना होती है और जुदा जुदा महीनोंमें बच्चेके जुदा जुदा अंग बनते हैं। यदि गर्भवती स्त्री चाहे तो वह अपने मनके असरसे बच्चेके शरीरके अंग प्रत्यंग तनदुरुस्त और खूबसूरत बना सकती है।

बुद्धिमान् बालक पैदा करनेका उपाय।

पहले लिख चुके हैं कि छः मासके बाद बाकीके तीन मासमें बालककी मानसिक शक्ति और मस्तिष्कके भागोंकी रचना होती है। इसलिये अंतके इन तीन महीनोंमें गर्भवती स्त्री अपनी इच्छाके अनुसार बुद्धिमान् संतान उत्पन्न कर सकती है।

गर्भवती स्त्रीको चाहिये कि वह अन्तके ३ महीनोंमें पूर्ण रीति-से अपनी मानसिक शक्तिको तीव्र और विकसित करे। परमात्माने स्त्रीकी मानासिक शक्तिके अद्भुत गुणोंका असर बालकके दिमागपर डालनेके लिये लोहचुम्बकके समान सबन्ध नियतं किया है।

अब गर्भवता स्त्रीके गुणोंका असर बालक पर कैसे पड़ता है, उसे लिखते हैं:-जब छः महीनेका गर्भ हो जाता है और बालकके मस्तिष्कमें प्रत्येक प्रकारकी धारणा-शक्तिके तत्त्व पुष्ट होने लगते हैं, उस समय गर्भवतीको महान्पुरुषों तथा विद्वानोंके जीवनचरितोंको पढ़ना और उनके गुणोंका मनन करना चाहिये। बुद्धिमती कन्या उत्पन्न करनेके लिये प्रसिद्ध प्रसिद्ध स्त्रियोंकी जीवनी पढ़ना और उनके स्त्रीसुलभ गुणोंका मनन करना चाहिये। उन लोगोंके चित्र और उनके कार्योंकी कल्पनाको हृदय पर अंकित करके तद्रूप संतान होनेकी दृढ़ कामना रखनी चाहिये।

इस क्रियासे स्त्रियाँ सद्गुणी और बुद्धिमान् सन्तान उत्पन्न कर सकती हैं। पूर्व कालमें जो महान् पुरुष उत्पन्न हुए हैं, वे सब अपनी माताकी महान् मनशक्तिके बलसे उत्पन्न हुए हैं। आजकल यह विद्या प्रायः लुप्तसी हो गई है।

पूर्वकालमें इस देशमें जैसे विद्वान्, शूरवीर और युद्ध-पटु पुरुष उत्पन्न होते थे वैसे अब क्यों नहीं होते ? इसका यही उत्तर है, कि आर्य जातिकी प्राचीन विद्या नष्ट हो गई है। यूरोपके विद्वानोंने इस समय इस विद्याकी खोज और अनेक प्रकारकी परीक्षायें करके इसकी उन्नति की है। बहुतसे मनुष्यों-

का यह ख्याल है कि मातापिता जन्मके देनेवाले हैं, परन्तु उत्तम भाग्य या कर्मके देनेवाले नहीं हैं। परंतु यह कथन पुरुषार्थहीन और अज्ञानियोंका है; क्योंकि मातापिता कैसे ही दरिद्र क्यों न हों, वे उपर्युक्त रीतिसे बलवान् और गुण-वान् संतान उत्पन्न कर सकते हैं। अच्छी संतान पैदा करनेमें कुछ धन खर्च करनेकी आवश्यकता नहीं है, न सभा सोसाइटी बनानेकी आवश्यकता है और न ज्योतिषियोंसे ग्रहशान्ति या मुहूर्त पूछनेकी आवश्यकता है। आवश्यकता है केवल दम्पतिके परस्पर प्रेम और उत्तम मनोवृत्तिकी। माता जिस गुणका चिन्तवन अपनी मनोवृत्तिसे करेगी, बालकके बड़े होने पर उसकी वृत्ति भी उसी गुणके ग्रहण करने या सीखनेमें लगेगी, और वह उस गुणको शीघ्र ही प्राप्त कर सकेगा। उसी गुणके आश्रयसे संतानका भाग्यवान् या धनवान होना भी सम्भव है।

भारतके प्राचीन महर्षि और महापुरुष माताओंकी मनो-वृत्तियोंके प्रसादसे ही उत्पन्न हुए थे। अब भी यदि भारत-जननी ऐसे नररत्न उत्पन्न करना चाहे, तो कर सकती है। इस पुस्तकका मूल उद्देश्य उत्तम, सुयोग्य संतान उत्पन्न करना है और यह कार्य्य माताकी मनोवृत्तिके अधीन है। माता अपने मनकी वृत्तिको बुद्धिके द्वारा जिस गुणपर स्थिर रखना चाहे, वहाँ रख सकती है। इस विद्यामें माताका मन ही विशेष साधक समझा जाता है। सचमुच मन ही प्रत्येक ज्ञानका कारण है।

पाठकगण इस कथनसे स्वयं समझ सकते हैं, कि नररत्नों-को उत्पन्न करनेका मुख्य कारण गर्भवती माताका मन ही है।

ऊपर लिखा गया है कि गर्भवती स्त्री पहले छः महीनेतक बालकके दृढ़ तथा तन्दुरुस्त शरीर होनेकी चिन्ता करे और शेष ३ महीनोंमें उसकी बुद्धि और सद्‌गुणोंकी वृद्धिके लिये प्रयत्न करे तो उसके मनचाही संतान उत्पन्न हो सकती है।

परमात्माने प्रत्येक शक्ति हर एक जीवधारीको दे रक्खी है, उससे यथार्थ काम लेना मनुष्यमात्रका काम है। जो मनुष्य परमात्माकी दी हुई शक्तिसे काम नहीं लेते, वे सदैव दुःखी और पराधीन रहते हैं।

इति सप्तम्‌शाखः।

अष्टमशाखः ।

गर्भोत्पत्ति ।

प्राचीन आर्य्य वैद्य जीवको शरीरसे पृथक् मानते हैं, साथ ही जीवका पुनर्जन्म भी मानते हैं। उनके मतसे गर्भाशयमें शुक्र, रज और जीवका संयोग होनेसे गर्भोत्पत्ति होती है। स्त्रीके रजमें पुरुषवीर्यका संयोग होनेपर चेतनाशक्तियुक्त जीव आता है; फिर बीजस्वभावके अनुसार हाथ, पैर, मुख आदि अंगोंकी उत्पत्ति होकर शरीरकी वृद्धि होती है। महर्षि आत्रेयका मत है कि गर्भ मातृज, पितृज, आत्मज, सात्म्यज और रसज होता है। एक बार भरद्वाज ऋषिने महर्षि आत्रेयके उक्त कथन पर सन्देह प्रकट करके कहा था कि गर्भको माता, पिता, आत्मा, सात्म्य आदि उत्पन्न नहीं कर सकते हैं और न जीव परलोकसे आकर गर्भमें अवतरित होता है। भरद्वाजकी शंकाका समाधान करनेके लिये महर्षि आत्रेयने जो उत्तर दिया था, उसका सारांश हम यहाँ पर लिखते हैं।

"**गर्भ मातृज होता है**" क्योंकि बिना माताके न गर्भकी उत्पत्ति हो सकती है, और न जरायुजादिकोंका जन्म ही; गर्भमें मातृज अर्थात् मातासे पैदा होनेवाली वस्तुएँ ये हैं—त्वचा, रक्त, माँस, मेदा, नाभि, हृदय, मूत्राशय, यकृत्, प्लीहा, दोनों वृक्कबस्ति, पुरीषाधान, आमाशय, पक्वाशय, उत्तर गुद, अधर-

गुद, क्षुद्रान्त्र, मेद और मेदवाही। **गर्भ पितृज भी होता है**—बिना पिताके गर्भकी उत्पत्ति तथा जरायुजादिका जन्म नहीं हो सकता । केश, दाढ़ी, मूछ, नख, रोम, दाँत, हड्डी, शिरा, स्नायु, धमनी और वीर्य्य ये अवयव पितासे उत्पन्न होते हैं ।

"आत्मासे उत्पन्न गर्भावयव"—गर्भात्मा जिसे जीव कहते हैं, माताके गर्भाशयमें शुक्र तथा रजसे मिलकर गर्भोत्पत्ति करता है । आत्मा नित्य और अनादि होनेसे उसका जन्म लेना संभव नहीं है । अस्तित्ववान् पदार्थका अवस्थान्तरमें गमन मात्र ही जन्म कहलाता है । इसी लिये आत्माको अजात (जन्मरहित) होने पर भी जात कह सकते हैं ।

"गर्भ आत्मज भी है"—आत्मासे गर्भमें आयु, आत्म-ज्ञान, मन, इन्द्रियाँ, प्राण, अपान, प्रेरणा, धारणा, स्वर, वर्ण, सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, चेतनता, बुद्धि, स्मृति और अहंकारादि उत्पन्न होते हैं ।

"सात्म्यसे उत्पन्न गर्भावयव"—गर्भस्थ बालकके जो जो अवयव सात्म्यसे उत्पन्न होते हैं वे ये हैं—आरोग्य, अनालस्य, निर्लोभता, इन्द्रियोंकी प्रफुल्लता, स्वरसम्पत्, बीज-सम्पत्, और हर्षाधिक्य ये सब सात्म्यसे उत्पन्न होते हैं ।

"रससे उत्पन्न होनेवाले गर्भावयव"—गर्भ रसज भी होता है । इसके बिना जब माताके शरीरका पोषण नहीं हो सकता है तब गर्भका कैसे होगा ? गर्भस्थ बालकके समस्त शरीरकी उत्पत्ति, वृद्धि, प्राणानुबन्ध, तृप्ति, पुष्टि और उत्साह रसज हैं ।

आत्रेयऋषिके उपरिलिखित कथनसे जाना जाता है कि बालक मातृजादि गुणोंके समुदायसे बनता है, अर्थात् गर्भस्थ बालक मातृज है, पितृज है, आत्मज है, सात्म्यज है और रसज है। ऊपर भारतवर्षीय आर्ष सिद्धान्तके अनुसार शरीरोत्पत्ति लिखी गई है। अब युरोपीय डाक्टरोंका इस विषयमें क्या मत है, सो भी लिखा जाता है।

इस विषयके ज्ञाता कई यूरोपीय डाक्टरोंका सिद्धान्त है कि बालककी उत्पत्तिका मूल कारण तो पिता है, माता केवल उसका पोषण करनेवाली है। सूक्ष्मदर्शक यंत्रसे पिताके वीर्य्यकी परीक्षा करनेसे उसमें बहुतसे जंतु दिखाई देते हैं। उन्हीं जन्तुओंमेंसे एक जंतु माताके गर्भाशयमें जाकर रजजन्तुओं से मिलकर बढ़ने लगता है। अतएव माताका रज पिताके वीर्य्यका केवल पोषण और रक्षण करनेवाला ही होता है। कोई कोई डाक्टर कहते हैं कि माता तथा पिता दोनोंका वीर्य्य समान रीतिसे संतानोत्पत्तिका कारण है।

डाक्टर फुलर कहते हैं कि माता-पिताके शरीर तथा मनकी पृथक् पृथक् स्थिति, बालकमें उतरकर किस किस प्रकारसे आती है, इसको जानना हो, तो खच्चर जातिकी उत्पत्तिपर ध्यान दो। पिता गदहा और माता घोड़ी इन दोनोंके संयोगसे खच्चर उत्पन्न होता है। खच्चरमें कान, हड्डियाँ, शरीरकी बनावट, चाल, कदम उठाना, आवाज, परिश्रमसे न थकना, हठीला स्वभाव, लात मारनेकी आदत तथा शरीरके आगेके भागका दिखाव और रंग रूप गदहे (पिता) के समान होता है; और खच्चरकी ऊँचाई, लम्बाई और फुर्तीलापन

घोड़ी (माता) के समान होता है । यदि खच्चरकी माता गदही और पिता घोड़ा हो, तो उसकी लम्बाई और ऊँचाई छोटी होती है । लेकिन यदि किसी खच्चरकी माता बड़ी, लम्बी कद्दावर घोड़ी हो, तो उसकी लम्बाई वा ऊँचाई विशेष होती है । कारण यह है कि माता पोषण करनेके पदार्थ अपने शरीर-से बालकके शरीरमें पहुँचाती है । इससे यदि माता बड़े कदकी हो तो बच्चेको पोषण अधिक मिलनेसे बच्चेका शरीर पुष्ट और लम्बे कदका बनता है ।

युरोपियन गोरे पुरुषों और अफ्रिकन काली हबशी जाति-की स्त्रियोंके संयोगसे उत्पन्न हुई संतान माँ बापसे एक जुदा खासियत लेकर पैदा होती है । ऐसे बच्चे बहुत होशियार और बुद्धिमान निकलते हैं । फ्रेड डगलस नामक एक मनुष्य इसी प्रकार आफ्रिकन हबशी स्त्रीसे उत्पन्न हुआ था । वह बुद्धिबल और भाषणशक्तिमें बहुत बढ़ा चढ़ा था। उसके समान रोचक, जोशीला और प्रभावशाली व्याख्यान बहुत कम वक्ता दे सकते थे । ऐसे गोरे बाप और हबशी जातिकी स्त्रीसे उत्पन्न हुए बच्चे बहुत गुणवान् और मानसिक शक्तिमें श्रेष्ठ होते हैं, परन्तु उनका शरीर बहुत दुर्बल होता है, वे अधिक मिहनतके काम नहीं कर सकते । इसका कारण क्या है ? कारण यही है कि बच्चेके शरीरमें मजबूती बापकी ओरसे मिलती है । परन्तु ऐसे बच्चोंकी उत्पत्तिके समय माता-पिताके मनकी स्थितिकी जाँच की जाय तो मालूम होगा कि गोरा बाप हबशी स्त्रीमें कोई खूबसूरती नहीं देखता, यहाँ तक कि वह उसके चेहरेकी ओर भी नहीं देखता है । वह अपनी हवस (कामेच्छा)

मिटानेका दूसरा साधन न देखकर हबशी जातिकी काली स्त्रियोंके साथ संबंध करता है। इसका परिणाम यह होता है कि गर्भाधानके समय बाप अपनी प्रेम-शक्ति स्त्रीको नहीं दे सकता है। प्रेम तो उसके मनमें नामको नहीं होता; केवल बेदिली और अपनी हवस पूरी करनेकी इच्छा मात्र उसके मनमें जाग्रत रहती है। इस कारण बापकी ओरसे जो मजबूती बच्चेको मिलनी चाहिये वह नहीं मिलती।

प्रो० फुलर लिखते हैं कि बाप बच्चेको शरीरकी गठन, हड्डियाँ, मांसरज्जु, मन और विचारशक्ति देता है। गोरे बाप और हबशिन मातासे उत्पन्न हुए बच्चेका शरीर निर्बल होता है, इसका कारण ऊपर लिख चुके हैं। अब यह प्रश्न उठता है कि काली हबशिनका बच्चा बुद्धिमान क्यों होता है? आगे बतलाया गया है कि माताकी ओरसे बच्चेको सद्गुण, ज्ञान, उत्तम स्वभाव, विवेचनाशक्ति और बुद्धि मिलती है। एक काली हबशिनको गोरे खूबसूरत पुरुषसे सहवास करनेका मौका मिलनेसे उसका मन हर्ष और प्रेमसे भर जाता है। माताके मनकी स्थिति हर्ष और प्रेममय होनेके कारण ऊपर सिद्ध किये सिद्धान्तके अनुसार माताकी सारी मनःशक्ति बच्चे-को मिलती है। इसी कारण वह मनःशक्तिसे बहुत प्रवीण और बुद्धिमान् होता है। ऊपर लिखे दृष्टान्तसे जाना जाता है कि माँ-बापमें परस्पर प्यार न होनेसे उनकी ओरसे जो जो गुण बच्चोंमें उतरने चाहिये, वे नहीं उतरते। इसी कारण कभी कभी विद्वान् माता-पितासे उत्पन्न हुई संतान भी महामूर्ख हुआ करती है। जिस दम्पतिका तन मन प्रेमसे एक हो जाता है

उसीकी संतान उत्तम गुणवान् और ताकतवर होती है। संतान-को वक्तृता-शक्ति भी माताकी तरफसे मिलती है। प्रसिद्ध वक्ता पेट्रिक हेनरीको अपनी वक्तृता-शक्ति माताकी तरफ-से मिली थी। इससे हमारे उक्त कथनकी पुष्टि होती है।

पवित्रता भी बच्चोंमें माताकी ओरसे आती है। कारण कि स्त्रियोंको लुटपनसे अपना जीवन पवित्रासे व्यतीत करना पड़ता है। यदि वे पवित्रता न रक्खें तो उनको भविष्य बिगड़ जाय और कोई उनके साथ बिवाह न करे। इसलिये उन्हें पवित्रतासे ही रहना पड़ता है। और यह बात बतलाती है कि बच्चोंको सद्गुण माताकी तरफ़से मिलते हैं। जितने बड़े बड़े धर्मगुरु हुए हैं वे सब अपनी अपनी माताके सद्गुणोंके आभारी हैं। जो माताएँ बच्चोंको ऐसे सद्गुण देती हैं, वे यदि शिक्षिता हों तो बच्चे कैसे सद्गुणी और विद्वान् हो सकते हैं, इसका विचार पाठक स्वयं कर सकते हैं। और इसीसे कहा जा सकता है कि स्त्रियोंको नीतिकी शिक्षा देना कितना जरूरी और महत्त्वका कार्य है। स्त्री, पुरुषसे एक जीवकी जीवनी-शक्तिके प्रारंभिक तत्त्व ग्रहण करके बच्चेको नौ महीने तक पेटमें रखती है और उसकी उत्पत्तिमें बहुत भाग लेती है। इसलिये उसको पढ़ने लिखने, मानासिक शक्ति बढ़ाने और विशेष करके बाल-बच्चोंसे सम्बन्ध रखनेवाली शिक्षा अवश्य देनी चाहिये। इस बातके फिरसे दुहरानेकी आवश्यकता नहीं है कि माता बच्चोंकी उत्पत्तिमें अधिक समयतक भाग लेती है, पर उसका पति कुछ मिनिटमें ही बच्चा पैदा करनेके कार्य्यको पूरा कर देता है। परन्तु इन थोड़े मिनिटोंके काममें

वह बच्चेको भाग्यमान् या अभागा बना सकता है। पुरुष बच्चे-के पैदा होनेमें बहुत थोड़ा भाग लेता है, पर उसके उस थोड़े कार्यका फल बहुत बड़ा है। जैसे बंदूक चलानेमें विलम्ब नहीं लगता, पर उसके चलते ही वह अपना बल दिखाती है, उसी तरह बच्चेके उत्पन्न करनेमें पिताका बल होता है।

अतएव पति और स्त्री दोनोंको अपने कामकी जिम्मेदारी समझनी चाहिये। दोनोंको इस पवित्र कार्यमें जितना हो सके, अपने उत्तम गुणोंका उपयोग करना चाहिये। परस्पर अत्यन्त प्यार और उत्तम सन्तान होनेकी भावना रखनी चाहिये।

मनुष्य-जातिकी उन्नतिके लिये स्त्रीजाति प्रधान कारण है। पुरुष-जातिकी भलाईका अधिक काम उसीके हाथोंसे सम्पन्न होता है। गर्भ धारण करनेके दिवससे बच्चोंके बड़े होने तक उनका रक्षण, पालन, पोषण और शिक्षण स्त्रियोंके द्वारा ही होता है। जिस तरह चतुर माली बीजके अंकुरित होनेपर समय समय पर पानी, खाद्य आदि देकर वा कूड़ा करकट साफकर उसे सँभालता है, उस प्रकार मनुष्य-जातिकी भलाईके लिये स्त्री अनेकों कष्ट सहकर निरन्तर उद्योग किया करती है। परन्तु खेद है कि जो स्त्रियाँ मनुष्यकी भाग्यविधाता हैं, उनको सुशि-क्षित और सुयोग्य बनानेके लिये इस देशमें ध्यान ही नहीं दिया जाता। सबसे पहले स्त्रियोंकी शिक्षाका समुचित प्रबन्ध होना अत्यावश्यक है। इस देशमें उनका पहलेके समान आदर सन्मान भी नहीं रहा है। स्त्रियोंकी मान-मर्यादा और उनके अधिकारोंकी रक्षा करना मनुष्यमात्रका कर्त्तव्य है। हमें स्त्री मात्रको शिक्षिता बनानेकी कोशिश करनी चाहिये। जब तक

स्त्रियाँ पढ़ी लिखी और गुणवती न होंगी, तब तक उनसे उत्तम संतान पैदा नहीं हो सकती।

प्राचीन भारतमें स्त्रियोंका बड़ा आदर था। वेदोंमें उनके पढ़ाने लिखानेका उल्लेख मिलता है *। वे सुशिक्षिता और गुणवती होती थीं। यही कारण है कि उनकी संतान संसारमें प्रसिद्ध हुई। आजकल यूरोपमें भी स्त्रियोंका बड़ा मान किया जाता है। इसका कारण यह है कि वे स्त्रीजातिके अनन्त उपकारोंको मानते हैं। स्त्रियाँ ९ महीने तक गर्भको पेटमें रखकर और अनेक कष्टोंको सहकर बालक प्रसव करती हैं। राजा, महाराज, योगी, ऋषि, मुनि, वीर, योद्धा, विद्वान्, कवि, ज्ञानी और शिल्पी इत्यादिका जन्म अपनी अपनी माताके गर्भसे ही हुआ है, अब भी होता है और भविष्यमें भी होगा। इत्यादि बातोंका विचार करके पुरुषोंको स्त्रीजातिकी मान-मर्यादा स्थिर रखना उचित है। स्त्रीजातिको इस संसारमें महान् कार्य्य करनेके लिये प्रकृतिने उत्पन्न किया है; उसको सत्कार और आदर-

---

* यजुर्वेदके २६ वें अध्यायमें लिखा है—

"यथेमां वाचं कल्याणी मावदानि जनेभ्यः। ब्रह्म राजन्याभ्या शूद्राय चार्याय च स्वाय चादरणी य।"

भावार्थ—जैसे मैं सम्पूर्ण मनुष्योंके लिये इस संसारका सुख देनेवाली तथा मुक्ति देनेवाली वाणीका उपदेश करता हूं वैसेही तुम लोग भी ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र चारों जातियोंके प्रत्येक स्त्रीपुरुषके लिये विद्याका उपदेश दो और पढ़ाओ।

अथर्व वेद—कां० ११ प्र० २४ अ० ३ मं० १८ में लिखा है—

"ब्रह्मचर्य्येण कन्या ३ युवानं विन्दते पतिम्"

भावार्थ—कन्याएँ ब्रह्मचर्य्यसे रहकर विद्याभ्यास करें और युवावस्थामें अपने योग्य और सदृश गुणवाले पतिसे विवाह करें।

की दृष्टिसे देखना हमारा धर्म है। स्त्रीजातिमें माता, भगिनी, वधू, पुत्री, भार्य्या आदि सभी शामिल हैं। सद्गृहस्थोंको इनका अपमान वा तिरस्कार कदापि न करना चाहिये । हम लोगोंको जन्म देकर स्त्रीजातिने हमपर बड़ा उपकार किया है। हमें उचित है कि हम उसकी सेवा-शुश्रुषा करके उसके ऋणसे उऋण हों। कई आदमी सन्तान उत्पन्न होना या न होना कर्मस्वाधीन समझते हैं; परन्तु यह उनकी भूल है। परमात्माने जब स्त्रियोंके शरीरमें सन्तानोत्पत्तिके साधन स्वरूप अंग प्रत्यंग दिये हैं, तब कोई कैसे कह सकता है कि उनमें संतानोत्पादनकी शक्ति नहीं है? तुम अपने शरीर और आत्माकी सम्पूर्ण शक्तिको उत्तम संतान उत्पन्न करनेके लिये परमात्माकी प्राकृतिक सामर्थ्यमें सम्मिलित करके लगा दो। अपने करनेके कामको कर्म और भगवानके ऊपर न छोड़ो। भगवानने मनुष्यजातिको जो बुद्धि और सामर्थ्य दी है, उससे काम लो और इस भूमिमें पुनरपि राम, कृष्ण, अर्जुन, भीष्म, द्रोण, प्रताप, शिवाजी आदिके समान महावीर पुरुष उत्पन्न करके अपनी मातृभूमिकी महिमा बढ़ाओ। वास्तवमें मनुष्यजातिके महानकार्योंकी सिद्धि महान् सद्गुणी पुरुषोंसे ही होना संभव है। इस समय भारतभूमिमें आर्य्य जाति महान् अधोगतिको पहुँच गई है। इसको बहुतसे सज्जन ईश्वरका कोप कहते हैं, लेकिन हम इसको भारतवासियोंकी भूल और मूर्खता समझते हैं।

गर्भाधानक्रियाके समाप्त होने पर भी दम्पतिमें परस्पर प्रेम रहना चाहिये। क्योंकि इसी समयसे सन्तानकी उत्पत्तिका समस्त भार मातापर आ पड़ता है। माताके शरीरसे

बालकके शरीरको पोषण पहुँचता है। इससे गर्भवती स्त्रीके पतिको उचित है, कि गर्भकालमें स्त्रीको सब तरहसे प्रसन्न रक्खे—उसके साथ ऐसा बर्ताव रक्खे, कि जिससे उसका मन सदैव आनन्दमें मग्न रहे। उसके मनकी प्रसन्नताके लिये उत्तम खूबसूरत पदार्थोंको दिखलावे, और हर तरहसे गर्भवतीको सुख पहुँचानेका प्रयत्न करे। इस गर्भावस्थामें जो मूर्ख पति अपनी स्त्रीको ताड़ना देते, सख्तीसे पेश आते, और उसको किसी प्रकारका क्लेश पहुँचाते हैं अथवा उसके कुटुम्बी लोग उसे कष्ट पहुँचाते हैं, उन सबको प्रकृतिके नियमानुसार कठिन दण्ड मिलता है। क्योंकि गर्भवती स्त्री तो सब प्रकार कष्ट सहन करती रहती है, लेकिन उनके कठिन शब्दोंको श्रवण करके उसके मनमें नाना प्रकारके विकल्प उत्पन्न होते रहते हैं और उन विकल्पोंका असर सन्तानके ऊपर बहुत ही बुरा पड़ता है। फल यह होता है कि उससे दुर्गुणी और क्रोधी सन्तानका जन्म होता है। ऐसी संतान स्वयं दुःखी रहकर जन्मभर सब कुटुम्बको दुःख पहुँचाती है। इसलिये गर्भवतीको मनःवचन और शरीरसंबंधी कोई भी कष्ट न देना चाहिये। परमात्माने मनुष्यको महान् शक्ति अर्पण की है। उसके अनुसार हर एक स्त्री-पुरुषको अति प्रीतिपूर्वक सन्तानोत्पत्ति करना उचित है। जो स्त्री पुरुष परमात्माकी दी हुई शक्तिसे नियमपूर्वक काम लेते हैं उनके सद्गुणी और रूपवान् सन्तान उत्पन्न होती है, और ऐसी संतान अपने कुल, समाज तथा देशका मुख उज्ज्वल करनेमें समर्थ होती है।

इति अष्टमः शाखः।

नवमः शाखः।

इच्छानुसार पुत्र वा कन्या उत्पन्न करनेकी प्रक्रिया।

कई मनुष्योंका विश्वास है कि स्त्रीके पुत्र या कन्या इन दोनोंमेंसे किसका जन्म होगा, इसका निश्चयपूर्वक उत्तर नहीं दिया जा सकता और यह काम ईश्वरकी इच्छा या जीवोंके कर्माधीन है। परन्तु साम्प्रत कालके कई विद्वानोंने इस विषयमें खूब माथापच्ची करके यह निश्चय किया है कि प्रत्येक दम्पति अपने इच्छापूर्वक संतति उत्पन्न कर सकता है। इस विषयमें हम आगे चलकर भारतीय तथा पश्चिमीय विद्वानोंके मत लिखेंगे। परंतु हम यह बात स्वीकार नहीं कर सकते कि यह बात ईश्वर अथवा कर्म्मोंके स्वाधीन है। मनुष्य यदि अपनी बुद्धिसे यथार्थ रीतिसे काम ले तो वह प्रकृतिकी शक्तियोंका भेद भली भाँति जान सकता है। क्योंकि परमात्मा या प्रकृतिने जो शक्तियाँ उत्पन्न की हैं, वे मनुष्यकी सहायता या ज्ञानवृद्धिके हेतु हैं। जो मनुष्य सत्य मनसे इन शक्तियोंके जाननेकी चेष्टा करता है वह उनके गूढ़ रहस्योंको समझकर लाभ उठाता है। इच्छित संतान पैदा करनेकी प्रक्रियाको जान लेना भी प्रकृतिकी एक गुप्त शक्तिका पता लगाना है। अस्तु, अब आयुर्वेदिक मतसे पुत्र वा कन्या उत्पन्न करनेकी विधि लिखते हैं—

पुरुष, स्त्री अथवा नपुंसक होनेका कारण।

सुश्रुतका मत है कि पुरुषका वीर्य्य अधिक होनेसे पुत्र, स्त्रीका रज अधिक होनेसे स्त्री और पुरुष तथा स्त्री दोनोंका वीर्य-रज समान होनेसे नपुंसक संतान उत्पन्न होती है। *

गर्भाधानक्रियाका समय।

ऋतुस्तु द्वादशरात्रं भवति।
दृष्टार्त्तवादृष्टार्त्तवाप्यस्तीत्येके भाषन्ते॥
आर्त्तवस्रावंदिवसा ऋतुः षोडशरात्रयः।
गर्भग्रहणयोग्यस्तु स एव समयः स्मृतः॥

—सुश्रुत।

अर्थात् रजोदर्शनसे लेकर बारहवें दिवस पर्य्यन्त ऋतु-काल कहलाता है। यद्यपि ऋतुके दिन १६ होते हैं, परंतु सुश्रुतका सिद्धांत ऋतुस्रावके समयमें प्रथमके तीन दिवस और अन्तका एक दिवस, गर्भाशयके मुखसंकोचका है। इनको त्याग कर १२ दिवस ही गर्भाधानके लिये उपयुक्त हैं। भाव-मिश्रका सिद्धान्त भी ऐसा ही है। आर्त्तव स्रावके दिवससे लेकर १३ रात्रिपर्य्यन्त, स्त्री ऋतुमती कहलाती है। यही समय गर्भधारणाके लिये योग्य है। यह समय सर्व जाति वा देशविदेशमें रहनेवाली स्त्रियोंके लिये एक समान लागू है। किसी आर्य-वैद्यका यह भी कथन है कि बहुतसी स्त्रियोंका रक्तस्राव दिख-

---

* "तत्र शुक्रबाहुल्यात् पुमानार्त्तवबाहुल्यात् स्त्री साम्यादुभयोर्नपुंसकमिति।"
—सुश्रुत, शारीरस्थान अ० २।

लाई नहीं देता, अर्थात् वे देखनेमें रजस्वला नहीं होतीं; तो भी ऋतुमती समझी जाती हैं और गर्भधारण कर सकती हैं

गर्भाशयका मुख बंद होनेपर गर्भाशयमें पुरुष-वीर्य न पहुँचना।

नियतं दिवसेऽतीते सङ्कुचत्यम्बुजं यथा।
ऋतौ व्यतीते नार्य्यास्तु योनिः संव्रियते तथा॥

अर्थात्—दिवसके व्यतीत होने पर जैसे कमलका फूल बंद हो जाता है, उसी प्रकार स्त्रीके ऋतुकालकी अवधि व्यतीत होने पर, स्त्रियोंके गर्भाशयका मुख बंद हो जाता है और उसमें पुरुषवीर्य्यजन्तु प्रवेश नहीं कर सकते। यही कारण है कि ऋतुकालकी अवधि व्यतीत होनेपर स्त्री-पुरुषके सहवास होनेसे भी गर्भ स्थापित नहीं होता।

गर्भधारणके लिये स्त्रीकी आयुका विचार।

पञ्चविंशे ततो वर्षे पुमान्नारी तु षोडशे।
समत्वागतवीर्य्यौ तौ जानीयात् कुशलो भिषक्॥
ऊनषोडशवर्षायामप्राप्तः पञ्चविंशतिम्।
यद्याधत्ते पुमान् गर्भं कुक्षिस्थः सविपद्यते॥
जतो वा न चिरं जीवेज्जीवेद्वा दुर्बलेन्द्रियः।
तस्मादत्यन्तबालायां गर्भाधानं न कारयेत्॥

अर्थात्—गर्भधारण करानेवाले पुरुषकी अवस्था कमसे कम २५ वर्षकी होनी चाहिये। इससे कम अवस्थावाले पुरुषके वीर्य्यजन्तु अपक्क होते हैं और पुरुषके अपक्क वीर्य्यजन्तुओंसे

स्थापित हुए गर्भसे, बालकका शरीर पुष्ट और नीरोग नहीं होता। कन्याकी अवस्था गर्भधारण करनेके योग्य १६ वर्षके बाद होती है। क्योंकि जितना शारीरिक बल पुरुषको २५ वर्षकी अवस्थामें प्राप्त होता है, उतना ही बल स्त्रीको १६ वर्षकी अवस्थाके उपरान्त प्राप्त होता है। २५ वर्षसे कमकी स्त्री द्वारा जो गर्भ स्थापित होता है, बहुत करके वह या तो गर्भके अंदर ही बिगड़ जाता है और कदाचित् बालक भी उत्पन्न हो, तो वह अधिक समय तक नहीं रह सकता है। यदि जीवित भी रहे, तो सदैव रोगी और दुर्बल रहता है। इसलिये २५ वर्षसे कम पुरुष और १६ वर्षसे कम स्त्रीको कदापि गर्भाधानक्रिया न करनी चाहिये।

रजस्वला और आर्त्तव काल।

मासेनोपचितं काले धमनीभ्यां तदार्त्तवम्।
ईषत्कृष्णं विगन्धं च वायुर्योनिमुखं नयेत्॥
तद्वर्षात् द्वादशात्काले वर्त्तमानमसृक् पुनः।
जरापक्वशरीराणां याति पञ्चाशतः क्षयम्॥

—सुश्रुत।

अर्थात्—स्त्रियोंके योनिमार्गसे हर महीने नियत समय पर रक्त बहा करता है। इस रक्तको वायु दोनों धमनियोंके द्वारा योनिमुख पर लाता है और फिर वह बाहर निकल जाता है। इसका रंग कुछ कुछ कालापन लिये हुए लाल और गन्ध-रहित होता है। इस आर्त्तवके निकलनेको रजो-दर्शन कहते हैं। यह रजो-दर्शन स्त्रियोंको लगभग १२ वर्षकी उमरके

बादसे ५० वर्षकी उमर तक होता है और उनकी यही अवस्था गर्भधारण करनेकी है। किसी किसी स्त्रीको १२ सालकी उमरमें ही प्रथम रजोदर्शन हो जाता है। पर रजो-दर्शन होनेसे उसे गर्भधारणके योग्य कदापि न समझना चाहिये। क्योंकि १६ वर्षकी उमरके पहले स्त्रीका गर्भाशय पूर्णरूपसे प्रफुल्लित नहीं होता है।

ऋतुकालमें सम-विषम दिवसोंमें पुत्र और कन्याका जन्म।

युग्मेषु तु पुमान् प्रोक्तो दिवसेष्वन्यथाऽबला।
पुष्पकाले शुचिस्तस्मादपत्यार्थी स्त्रियं व्रजेत्॥

—सुश्रुत।

युग्मेषु तु दिनेष्वासां भवत्यल्पतरं रजः।
संयोगं तत्र यो गच्छेत् सा पुमान्संप्रसूयते॥
अयुग्मेषु दिनेष्वासां भवेद्बहुतरं रजः।
संयोगं तत्र यो गच्छेत् सा तु कन्या प्रसूयते॥

—विदेहाचार्य्य।

अयुग्मे स्त्री पुमान् युग्मे सन्ध्यायां तु नपुंसकम्।
शुक्राधिक्यात् पुरुषः प्रमदा रजसोऽधिकात्॥
शुक्रशोणितयोः साम्यात् तृतीया प्रकृतिर्भवेत्।

—भोजवैद्य।

युग्म अर्थात् सम दिवस जैसे चौथा, छठा, आठवाँ, बारहवाँ, चौदहवाँ और सोलहवाँ, इन दिवसोंमें गर्भाधान क्रियाके निमित्त स्त्रीसहवास करनेसे पुत्र उत्पन्न होता है। विषम जैसे पाँचवाँ, सातवाँ, नववाँ, ग्यारहवाँ, तेरहवाँ, पन्द्र-

हवाँ इन दिवसोंमें स्त्रीसहवास करनेसे कन्या उत्पन्न होती है। इसलिये दम्पतिको उचित है कि रजोदर्शनके चार दिवस त्यागकर अर्थात् शुद्ध होनेपर जिनको पुत्रकी इच्छा हो, वे सम रात्रियोंमें और जिनको कन्याकी इच्छा हो, वे विषम रात्रियों-में गर्भाधान किया करें। यह सुश्रुतका मत है।

आगे विदेहाचार्य्यजी इन सम-विषम रात्रियोंमें पुत्र या कन्या होनेका कारण बतलाते हैं। युग्म अर्थात् सम दिनोंमें स्त्रीका रज अर्थात् स्त्रीबीज बहुत थोड़ा और पुरुषबीज अधिक होता है। यही कारण है कि सम दिवसमें गर्भाधान किया करनेसे पुत्र उत्पन्न होता है। विषम दिवसोंमें रज अर्थात् स्त्रीवीर्य्यजन्तुओंकी अधिकता और पुरुषवीर्य्यजन्तुओं-की न्यूनता होनेसे कन्या होती है।

भोजवैद्य कहते हैं कि विषम दिवसोंमें गर्भाधान क्रियाके करनेसे कन्या, और सम दिवसोंमें पुत्र और सम-विषमकी सन्धियोंमें गर्भाधान क्रिया करनेसे नपुंसक सन्तान उत्पन्न होती है। एवं शुक्रकी अधिकतासे पुत्र, स्त्रीरजकी अधिकतासे कन्या, और दोनों पक्षका बीज समान होनेसे नपुंसक सन्तान होती है।

मनुस्मृतिमें भी यही ऋतुसमय माना गया है और शुरूके चार दिनमें सहवास निषिद्ध बतलाया है—

ऋतुः स्वाभाविकः स्त्रीणां रात्रयः षोडशः स्मृताः।
चतुर्भिरितरैः सार्द्धमहोभिः सद्धिगर्हितैः।

इसी तरह आयुर्वेदमें भी प्रथमके चार दिन वर्जनीय हैं

"प्रवहत्सलिले क्षिप्तं द्रव्यं गच्छत्यधो यथा ।
तथा वहति रक्ते तु क्षिप्तं वीर्य्यमधो व्रजेत् ।"

जैसे जलके बहते हुए प्रवाहमें कोई वस्तु डाली जाय, तो जलके साथ नीचेको बह जाती है, उसी प्रकार रजोधर्मके समय रक्तप्रवाहके साथमें, पुरुषवीर्य्यजन्तु गर्भाशयमें प्राप्त होकर भी रक्तप्रवाहके साथ बाहर निकल आते हैं। इसी कारण ऋतुके आरम्भके चार दिवस त्याज्य लिखे हैं। धर्म-शास्त्र मनुस्मृतिमें जैसे प्रथमके चार दिवस त्याज्य लिखे हैं, उसी प्रकार ग्यारहवीं और तेरहवीं रात्रि भी निन्दित मानी है:—

तासामाद्याश्चतस्रस्तु निन्दितैकादशी च या ।
त्रयोदशी च शेषास्तु प्रशस्ता दश रात्रय ॥

सोलह रात्रियोंमेंसे छः (चार रात्रियाँ पहली और एकादशी तथा त्रयोदशी) निकालकर गर्भधारणके लिये केवल दश रात्रियाँ श्रेष्ठ मानी गई हैं। यहाँ रात्रि शब्दसे सिद्ध होता है कि प्राचीन कालकी पद्धतिके अनुसार गर्भाधानक्रिया रात्रिके समय ही करनी चाहिये। अब इस सम्बन्धमें पाश्चिमात्य डाक्टरों या विद्वानोंकी राय लिखते हैं।

अरिस्टाटल (अरस्तू) और एन कोटोगोरासका कहना है कि लड़के अथवा लड़कीका होना दाहिने अथवा बायें भागके अवयवसे संबंध रखता है। अर्थात् माता-पिताके दाहिने ओरके अंडकोषसे निकले हुए रजवीर्य्यसे पुत्र और बाईं ओरके अवयवसे निकले हुए रजवीर्य्यसे कन्या उत्पन्न होती है।

प्रोफेसर मोन्सथ्यूरीने सन् १८६३ में एक पुस्तक प्रकाशित की थी। उसमें उन्होंने लिखा है, पुत्र अथवा कन्याका होना स्त्रीबीजकी पक्वता या अपक्वता पर निर्भर है। पुत्रकी उत्पत्तिके लिये जोरदार रज या स्त्रीबीजकी आवश्यकता है, क्योंकि पक्क बीजसे ही पुत्र उत्पन्न होता है। रजोदर्शनसे चौथे दिन शुद्ध होनेके ३-४ दिवस पीछे स्त्रीका बीज पक्क होता है। इसलिये रजोधर्म आनेके दिवससे ७ वा ८ दिवस पीछे गर्भाधान क्रिया की जाय, तो पुत्र उत्पन्न होता है; और यदि ऋतुस्नानके दूसरे तीसरे अथवा चौथे दिवस गर्भाधानक्रिया की जाय, तो कन्या उत्पन्न होती है। इसका कारण यह है कि प्रथमके अर्थात् ऋतुस्नानके बाद चार दिवस तक स्त्रीका बीज पक्क नहीं होता है।

डाक्टर मेयर अपनी पुस्तकमें लिखते हैं कि यदि स्त्री रजोदर्शनसे निवृत्त होकर आठ दस दिवसके बाद अपने पतिसे गर्भाधानके लिये रतिक्रिया करे, तो उसके गर्भसे पुत्र उत्पन्न होता है। इसका कारण यह है कि जिस समय स्त्रीको रजोदर्शन होता है, उसी समय उसके बीज उत्पन्न होता है; और इस कारण उस समय बीजमें पुष्टता अधिक होती है और स्त्रीतत्त्व अधिक बलवान होते हैं। पीछे रजोदर्शनका समय जैसे जैसे व्यतीत होता जाता है, स्त्रीबीजका बल घटता जाता है और बारह तेरह दिनके बाद बिलकुल नष्ट हो जाता है। स्त्रीजन्तुओंकी अधिकतामें गर्भाधान क्रिया करनेसे कन्या और उनकी न्यूनतामें पुत्र पैदा होता है। इन डाक्टर महाशयका कथन प्राचीन आर्य्य वैद्योंकी रायके अनुकूल है।

वे हजारों वर्ष पूर्व निश्चय कर चुके हैं कि पुरुषके बलवान् वीर्य्यकी अधिकतासे पुत्रसन्तान उत्पन्न होती है और स्त्रीके बलवान् रजकी अधिकतासे कन्यासन्तान उत्पन्न होती है।

किसी किसी डाक्टरका कथन है, कि रजोदर्शनसे निवृत्त होकर स्त्रीजातिको पुरुषसहवास करनेका विशेष जोश, प्रकृतिके नियमानुसार होता है; उस समय स्त्रीका बीज भी अधिक जोशमें रहता है, अतएव स्त्रीके जोशदार वीर्य्यजन्तुसे कन्या और उसके जोश कम होने अर्थात् अधिक रात्रियाँ व्यतीत होनेपर पुत्र उत्पन्न होता है।

एक और डाक्टरने लिखा है कि रजोदर्शनका रक्त बन्द होनेके पीछे दोसे लेकर छः दिवस पर्य्यन्त गर्भाधानक्रिया की जाय, तो कन्या और नवें दिवससे लेकर बारहवें दिवस पर्यंत गर्भाधानक्रिया की जाय, तो पुत्र उत्पन्न होता है।

कितने ही यूरोपियन डाक्टर पुत्र और कन्या होनेका कारण स्त्रीका आहार बतलाते हैं। डाक्टर **लीयोपोल्ड सेन्डका** मत है कि मेरे हाथमें कितनी ही रोगी स्त्रियाँ चिकित्साके निमित्त, कितनी ही बार आई। इन रोगी स्त्रीयों-की परीक्षा करनेसे मालूम हुआ कि जिन स्त्रियोंके मूत्रमें मिष्ट पदार्थ (शक्कर) आता है, उनके गर्भसे कन्या उत्पन्न होती है। मूत्रमें मिष्ट पदार्थ आ जानेसे कन्या क्यों उत्पन्न होती है, इसका उत्तर उसने दो युक्तियाँ देकर दिया है। एक तो यह कि जब स्त्रीबीज खूब पक्व हो जाता है तब पुत्र होता है; और दूसरी युक्ति यह दी है, कि एक जाति अपनी ही जाति-

को उत्पन्न नहीं करती, दूसरी जातिको उत्पन्न करती है। अर्थात् स्त्री पुत्रका उत्पन्न करती है और पुत्री पुरुषवीर्यके असरसे होती है। स्त्री-बीजकी पक्वताको समझाते हुए वह लिखता है कि जब स्त्रीके सम्पूर्ण अवयव अपना नियत कार्य्य करते हैं तब उसका वीर्य्य भी पक्व होता है। जब शरीरमें हर एक धातु पुष्ट करनेवाली शक्तियाँ बराबर अपना काम करती हैं, तब मूत्रमें मिष्ट पदार्थ नहीं आता, और शरीरकी रसवाहिनी धमनियोंके द्वारा समस्त शरीरके रासायनिक कार्य्य बराबर होते रहते हैं। इन सम्पूर्ण कार्य्योंके यथार्थ रीतिसे होनेसे स्त्रीका बीज पक्व होता है। इसका मुख्य आधार पौष्टिक आहार ही है। यदि आहार किया हुआ पदार्थ बराबर न पचे तो मूत्र द्वारा मिष्ट पदार्थ जाने लगता है और इसके फलसे स्त्री-बीज यथेष्ट पक्व नहीं होने पाते हैं। जिस स्त्रीके मूत्रमें मिष्ट पदार्थ बिलकुल नहीं जाता, उसी स्त्रीका बीज पक्व समझा जाता है। पुत्रीकी अपेक्षा पुत्रके शरीरके अवयव मजबूत होते हैं, इस कारण निर्बल वीर्य्यसे पुत्री, और पक्व वीर्य्यसे पुत्र उत्पन्न होता है।

उक्त डाक्टरके कथनसे ज्ञात होता है कि निर्बल स्त्रियाँ पुत्र उत्पन्न करनेमें असमर्थ होती हैं। अतः निर्बल स्त्रियोंको——जो पुत्रकी इच्छा रखती हों——सबसे पहले सबल होनेकी चेष्टा करनी चाहिये। उन्हें भोजनकी ओर अधिक ध्यान देना चाहिये। जिस भोजनमें मिठाई या माँड़का अंश अधिक हो, जैसे-चाँवल, साबूदाना, अंडा आदि-वह न खाना चाहिये। गेहूँका दलिया, दूध और गेहूँ बाजरा आदि सब तरहके अनाज

खाना फायदेमंद है। जब तक मूत्रमें मिष्ट पदार्थ आवे तब तक गुड़, शक्कर आदि मिष्ट पदार्थ न खाना चाहिये। वर्ष छः महीने ऐसा आहार करनेसे स्त्रियोंकी यह निर्बलता दूर हो जाती है और वे पुत्रोत्पत्तिके योग्य सबल और पक्व रजवाली हो जाती हैं।

वर्त्तमान समयके विद्वानोंमेंसे जर्मन निवासी डाक्टर **एफ. सी. कस्ट** एम. डी. ने नर और नारी जातिके प्राकृतिक भेद और इच्छापूर्वक पुत्र वा कन्या उत्पन्न करनेके विषयमें एक पुस्तक लिखी है। उस पुस्तकमें लिखा है कि पुरुष तथा स्त्रीकी दाहिनी बृषण-ग्रन्थिमेंसे जो बीज उत्पन्न होता है, उससे पुत्र और पुरुष तथा स्त्रीकी बाई बृषण ग्रन्थिमें जो बीज उत्पन्न होता है, उससे कन्या उत्पन्न होती है। यदि पुरुषके दाहिने बृषणमेंसे और स्त्रीके बाई तरफ़के गर्भ-अण्डमेंसे बीज उत्पन्न होकर, गर्भाशयमें दाखिल हो, तो यह विपरीत अवयवका बीज, गर्भाशयमें पहुँचने पर भी परस्पर मिश्रित होकर गर्भाकृतिको धारण नहीं करता। किन्तु स्त्री और पुरुष दोनोंका बीज एक ही ओरकी बृषणग्रन्थिमेंसे अर्थात् दाहिनी दाहिनी अथवा बाई बाईसे उत्पन्न होकर स्त्रीके गर्भाशयमें दाखिल हो, तो ऐसा बीज मिश्रित होकर निश्चयपूर्वक गर्भधारणका कारण होता है।

इस विषयकी परीक्षा **डाक्टर सी कस्टने** इस प्रकारसे की,—उसने कुछ सुअर अपने खानेके वास्ते पाले थे, और उनको पुष्ट बनानेके लिये उन्हें ख़स्सी कर दिया था, लेकिन एक सुअरका बाईं तरफका एक बृषण, निकालनेके वक्त

भूलसे रह गया था। बहुत दिन पीछे डाक्टरको मालुम हुआ कि सूअरका बाईं तरफका बृषण निकालनेसे रह गया है। तब उसने एक खास मकानमें इस सूअरके समीप एक सूअरी को रखकर यह परीक्षा करनेका निश्चय किया कि नर या मादा जाति किस अवयवके बीजसे उत्पन्न होती है। कुछ दिनोंके बाद वह सूअरी गर्भवती हुई और उससे ५ बच्चे उत्पन्न हुए, जो सबके सब मादा जातिके थे। इसके बाद डाक्टरने नई उमरकी कई सूअरी और खरीदीं और उनके दाहिने ओरके 'गर्भ अण्ड' आपरेशन करके निकाल दिये। इनमेंसे कई सूअरी तो मर गईं; परन्तु दो बच गईं। पीछे उर्पयुक्त सूअरके साथ इन दोनों सूअरियोंको एक कोठरीमें बन्द करके हिफाजतसे अपनी निगरानीमें रक्खा। निदान ये दोनों सूअरी उसी सूअरसे गर्भवती हुईं। एक सूअरीके आठ और दूसरीके नौ बच्चे पैदा हुए, जो कि सबके सब मादा जातिके थे। इस परीक्षाके करनेसे **डाक्टर सी कस्टको** पूर्ण रूपसे विश्वास हो गया कि नर और नारी जातिके दक्षिण भागके बृषणमें नर जाति और बाईं ओरके बृषणमें नारी जातिके उत्पन्न करनेका बीज होता है। डाक्टर सी कस्टने इस तरहकी और भी कई परीक्षायें कुत्तों, शशकों आदि जानवरों पर कीं और उन सबमें ऊपरका सिद्धान्त सत्य ठहरा।

डाक्टर बेलहीगने लिखा है कि हमने एक स्त्रीके गर्भसे ९ पुत्र उत्पन्न होते देखे। जब जब उसके गर्भ रहा तब तब उसके गर्भसे पुत्र ही उत्पन्न हुआ, कन्या एक भी न हुई। अतएव मरने पर मैंने जब उसकी परीक्षा की तब मालूम

हुआ कि उसके गर्भाशयकी बाईं तरफ़का 'गर्भ अण्ड' (अंतफल) बिलकुल सूखकर सिकुड़ गया था और दाहिनी ओरका पूर्ण रूप-में था। यही कारण है कि उसके पुत्र ही पुत्र हुआ करते थे। बहुधा जिन स्त्रियोंके सात सात आठ आठ लड़कियाँ होती हैं-पुत्र एक भी नहीं होता, अवश्य ही किसी कारणसे उनकी दाहिनी ओरका गर्भ अण्ड बिगड़ा हुआ होता होगा।

डाक्टर रुलेमन और थीलौनके समीप एक ऐसा मनुष्य आया, जिसकी बाईं तरफ़की वृषणग्रन्थि अभिघात पहुँचनेसे बिलकुल चूर चूर हो गई थी। उस ग्रन्थिके नष्टप्राय होनेसे उसे बहुत कष्ट हो रहा था, अतः डाक्टरोंने आपरेशन द्वारा उसे काटकर अलग कर दिया। तनदुरुस्त होने पर उस मनुष्यने एक विधवा स्त्रीके साथ विवाह किया। डाक्टर थीलोन कहते हैं कि उस स्त्रीके द्वारा उसके पाँच पुत्र हुए। उसकी बाईं वृषणग्रन्थि नष्ट हो जानेसे उसके कन्या नहीं हुई—पुत्र ही पुत्र हुए। विधवा स्त्रीके पतिसे उत्पन्न हुई दो लड़कियाँ थीं। इससे सिद्ध होता है कि स्त्रीके दोनों गर्भ अण्ड साबुत होने-से उसमें पुत्र वा कन्या दोनों उत्पन्न करनेकी शक्ति थी, परन्तु उसके दूसरे पतिकी बाईं वृषणग्रन्थि कट जानेसे उसमें कन्या उत्पन्न करनेकी शक्ति न थी।

अब इस विषय पर ध्यान देना है कि जो दम्पति पुत्रो-त्पत्तिकी इच्छा रखते हों उनको क्या करना चाहिये। पशुओं-के समान उनकी वृषणग्रन्थि काटी तो जा नहीं सकती। डाक्टर सी कस्ट इस विषयमें यह तरकीब बतलाते हैं कि एक कमरपट्टी ऐसी होनी चाहिये कि जिसका एक भाग तो फ़ौध-

बीके समान कमर और पेट पर बाँध लिया जाय, और दूसरे दो पट्टे ऐसे होने चाहिये, जो कोपीन अथवा लँगोटके कच्छके माफिक हों। इन दोनोंमेंसे एक आगेके भाग पर होना चाहिये, जिससे दाहिनी तरफकी वृषणग्रन्थिको पुरुष ऊपर चढ़ाकर, उसके ऊपरसे इस पट्टेको कोपीनकी तरह पीछेके दोनों पैरोंके बीचसे निकालकर ले जाय, और कमरपट्टेके बटनोंमें इसका सिरा चढ़ा ले। दूसरे पट्टेकी कोपीनको पीछे-से दोनों पैरोंके बीचमेंसे पहिली कोपीनके ऊपरसे निकाल कर, कमरसे बँधी हुई पट्टीके बटनोंमें आगेकी तरफ चढ़ा ले। ऐसा करनेसे दाहिनी तरफकी पुरुषवृषणग्रन्थि पेटकी तरफ ऊपरको चढ़ी रहेगी। जब स्त्रीपुरुषका विचार पुत्र उत्पन्न करनेका हो, तब दाहिनी तरफकी वृषणग्रन्थि चढ़ा ले और जब कन्या उत्पन्न करनेका विचार हो तब बाईं तरफकी चढ़ा ले।

यूरोपीय डाक्टर इस बातको जोर देकर कहते हैं कि इस प्रक्रियाके द्वारा प्रत्येक दम्पति अपने इच्छानुसार पुत्र वा कन्या उत्पन्न कर सकता है।

सद्य गर्भस्थितिके लक्षण।

स्त्रीके गर्भाशयमें शुक्रके स्थित होनेपर थकावट होना, जंघाएँ भारी होना, ग्लानि, तृषा और गुह्य अंगमें स्फूर्ति होना आदि लक्षण होते हैं। ये सद्यः गर्भवतीके चिह्न हैं।

गर्भ रहनेके बादके विशेष लक्षण।

स्तनोंके अग्र भागका काला होना, रोमांच होना, पलकोंका मिचना, पथ्य भोजन करने पर भी वमन होना, (किसी किसी स्त्रीको वमन नहीं होता) उत्तम सुगन्ध भी बुरी मालूम होना,

मुखसे लार बहना, प्रातःकाल सोकर उठते ही विशेष थुकथुकी लगना और शरीरका जकड़ासा मालूम होना, ये लक्षण गर्भ धारण करनेके दो मास बाद प्रकट होते हैं।

पुत्र-गर्भवती स्त्रीके लक्षण।

जिस स्त्रीके गर्भमें पुत्र होता है, उसके गर्भाशयमें दूसरे महीनेमें गर्भपिण्डका आकार गोल गोल प्रतीत होने लगता है, गर्भिणीकी दाहिनी आँख कुछ बड़ी दिखने लगती है, प्रथम दाहिने स्तनमें दूध उत्पन्न होता है, दाहिनी जङ्घा कुछ पुष्ट होती है, मुख प्रसन्न रहता है, पुरुष नामवाली वस्तुओं पर उसकी इच्छा होती है, और स्वप्नमें भी पुरुषसंज्ञक कल्पित वस्तुएँ प्राप्त होती हैं।

कन्या-गर्भवती स्त्रीके लक्षण।

जिस स्त्रीके गर्भमें कन्या होती है, उसके गर्भाशयमें दूसरे महीनेमें लम्बी मांसपेशीसी मालूम पड़ती है, उसकी रुचि स्त्रीसंज्ञक वस्तुओंपर होती है और वह स्वप्नमें नारंगी-खिरनी-चमेली-जुही आदि फल-फूलोंको देखती है। सारांश यह कि पुत्रगर्भके लक्षणोंसे विपरीत लक्षण कन्यागर्भके होते हैं। अब पाठक स्वतः विचार कर सकते हैं कि पुत्रगर्भवतीके दाहिने अंगों और कन्या गर्भवतीके बाँए अंगोंमें विशेषता होती है। आप लोग ऊपर पढ़ चुके हैं कि दक्षिण तरफ़के गर्भ अण्डके बीजसे पुत्र और बाएँ अण्डके बीजसे कन्या उत्पन्न होती है।

ग्रीक तत्त्ववेत्ता **अरिस्टाटिलने** अपनी पुस्तकमें लिखा है कि जिस गर्भवती स्त्रीका पेट दाहिनी तरफसे विशेष उठा

हुआ हो, उसके गर्भसे पुत्र उत्पन्न होता है। इसके विशेष लक्षण इस प्रकार हैं,—पेटमें दाहिनी तरफ विशेष भार मालूम हो, दाहिनी तरफकी स्तन कठिन हो। इन सब लक्षणोंसे जानना चाहिये कि स्त्रीके पेटमें पुत्र है। यदि यही चिह्न गर्भवती स्त्रीके बाईं तरफ हों, और पेट भी बाईं तरफको उठा हुआ मालूम पड़े, तो समझना चाहिये कि कन्या उत्पन्न होगी।

नपुंसक-गर्भके लक्षण।

जिस स्त्रीके गर्भाशयमें नपुंसक बालक होता है, उसके पेटमें अर्बुदके समान मांस पिण्ड प्रतीत होता है, अर्थात् उस मांसपिण्डके समान गर्भके दोनों पार्श्व कुछ ऊँचे प्रतीत होते हैं, और पेट आगेसे बड़ा दीखता है।

इस नवम शाखामें प्राचीन वैद्यकके मत और अपने अनुभवसे हमने जो बात लिखी हैं, जन साधारण यदि उनकी तरफ़ ध्यान दें तो हमको आशा है कि वे प्रकृतिके इस भेद-को अवश्य जान जायँगे। जब कि पशु पक्षी भी अपने मनकी शक्तिके आधारसे अपने रक्षोपयोगी अंग प्रत्यंगोंको उत्पन्न कर सकते हैं, तब मनुष्य जातिके लिये अपने इच्छानुसार सन्तान पैदा करना कोई कठिन और असंभव काम नहीं है। क्योंकि मनुष्यके दिमागमें परमात्माने तरह तरहकी शक्तियाँ भर दी हैं; उनसे काम लेना और उनको विकासित करना मनुष्यका कर्तव्य है। अपने कर्तव्यको भाग्य या परमेश्वर पर डालकर निश्चेष्ट बैठ रहना ठीक नहीं।

इति नवमः शाखः।

दशमः शाखः
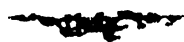
गर्भधारण-विधि ।

ऊपरकी नौ शाखाओंमें इच्छित, सद्गुणी और रूपवान् सन्तान पैदा करनेकी प्रक्रिया अनेक विद्वानोंके परीक्षित प्रमाणों सहित लिखी गई है । इस दशम शाखामें गर्भधारणकी विधि लिखी जाती है । जिस सन्तानके लिये समस्त स्त्री पुरुष सदैव लालायित रहते हैं, जो समस्त सांसारिक सुखोंका एक मात्र कारण है, उसकी उत्पत्तिमें लापरवाही या उदासीनता दिखाना मानो अपने भावी सुखों पर पानी फेर लेना है । सन्तानके अभावमें संसारका कोई सुख सुख नहीं कहा जा सकता । ऐसे मनुष्य बहुत कम निकलेंगे जो संतानरूपी धन-प्राप्तिकी इच्छा न रखते हों । अस्तु, जब संतान ऐसी उत्तम वस्तु है, तब उसकी उत्पत्तिमें अज्ञानता और बे-पर्वाही रखना मूर्खता है ।

पुराणों और उपनिषदोंमें लिखा है कि 'आत्मा वै जायते पुत्रः' अर्थात् पुत्र अपनी आत्माके समान होता है । जब संतान माता पिताके शरीरका रूपान्तर या अंश ही है, तब उसके भविष्यके लिये उद्योग न करना आत्मघात नहीं तो और क्या है ? बहुतेरे लोग समझते हैं कि माता-पिता बनना एक सहज काम है; परन्तु वास्तवमें ऐसा नहीं है । माता-पिताकी ओरसे संतानको जो सद्गुणरूपी हक मिलना चाहिये,

वह सहज ही नहीं मिल जाता—उसके लिये बहुत श्रम करना पड़ता है। अतएव मनुष्योंको चाहिये कि वे सद्‌गुणी और उत्तम संतान पैदा करनेके लिये पहलेसे ही प्रयत्न करें। जब कुम्हार मृत्तिकासे घट बनाना चाहता है तब वह पहलेसे ही उसकी आकृति और ढालका विचार कर लेता है। बढ़ई लकड़ीकी कोई चीज बनाते समय उसको सुडौल बनानेके लिये पहलेसे ही नाप तौल कर लेता है—उसका नमूना या आदर्श स्थिर कर लेता है। इस तरह संसारमें जितने कार्य्य किये जाते हैं वे सब सोच समझकर किये जाते हैं। परन्तु खेदका विषय है कि लोग सन्तानोत्पत्तिकी ओर कुछ भी ध्यान नहीं देते। इसका कारण यही है कि एक तो यहाँ पर जैसा चाहिये, वैसा शिक्षाका प्रचार नहीं है। दूसरे जो लोग शिक्षित भी हैं उनका इस ओर ध्यान नहीं जाता। ध्यान जाय कैसे? देशभाषाओंमें इस विषयके ग्रन्थ ही नहीं हैं।

इसी अज्ञानताके कारण हमारी बहुतही दुर्दशा हो गई है। जिन महान् वीरोंके शरीरमें शस्त्र छिदे रहते थे, जो शर-शय्या पर शयन करते थे और जिनकी हुंकारसे शत्रुओंकी छाती दहल जाती थी, उन्हीं पुरुषसिंहोंकी संतान आज बिलकुल कमजोर और डरपोक हो गई है। आपने क्या कभी इस बातका विचार किया है कि इसका क्या कारण है? जब तक यथोचित रीतिसे सन्तानोत्पत्ति न की जायगी, जब तक संतानोत्पत्तिविद्यासे मातापिता अज्ञान रहेंगे, तब तक नीरोग, सबल, सद्‌गुणी और देशका मुख उज्ज्वल पैदा करनेवाली संतान कदापि पैदा नहीं हो सकती।

अब उत्तम संतानोत्पत्ति होनेके लिये गर्भाधानविधि लिखते हैं। गर्भ रहनेके लिये नीचे लिखे हुए साधनोंकी बड़ी आवश्यकता है। इनमेंसे एक साधनका अभाव भी गर्भाधानमें बाधक हो सकता है। अतएव संतानोत्पत्तिकी इच्छा रखनेवाले प्रत्येक मातापिताको इन साधनोंकी ओर ध्यान रखना अत्यावश्यक है:—

१—गर्भाधानके लिये स्त्रीकी अवस्था १६ सालसे कम और ४५ सालसे अधिक न हो।

२-गर्भाधानके लिये वीर्य्य-दान करनेवाले पुरुषकी अवस्था २५ वर्षसे कम और ६० वर्षसे अधिक न हो।

३—गर्भाधानके समय दम्पतिको किसी तरहकी शारीरिक वा मानसिक व्याधि न होनी चाहिये।

४—गर्भाधानके लिये पुरुषके वीर्य्यजन्तु परिपक्व होने चाहियें।

५—स्त्री-बीज-जन्तु परिपक्व होना चाहिये और गर्भ-अंडमेंसे फलवाहिनी धमनीके द्वारा स्त्रीके गर्भाशयमें पहुँचना चाहिये।

६—गर्भाशयका भीतरी पर्त ऐसा शुद्ध और नीरोग होना चाहिये कि जो स्त्रीबीज और पुरुष-बीजको ग्रहण करके उसका पोषण कर सके।

७—स्त्रीके गर्भाशयका मुख जिसको (कमलमुख) कहते हैं, यथार्थ रीतिसे खुला होना चाहिये। कमलमुखमें किसी प्रकारकी व्याधि न होनी चाहिये।

८—कमलमुख और गर्भाशयके पीछेका भाग, यथास्थान-नियत होना चाहिये; अर्थात् कमलमुख योनिमार्गकी सीध में होना चाहिये ।

९—कमलमुखमें किसी प्रकारका चिकना पदार्थ न होना चाहिये, जो पुरुषबीजके जानेमें प्रतिबन्धरूप हो। ऐसा होनेसे गर्भाशयके भीतरी-पर्त पर पुरुषबीज दाखिल होकर स्त्रीबीजसे नहीं मिल सकता ।

१०-गर्भाशयके अन्तःपिण्डमेंसे अथवा योनिमार्गमें स्वाभाविक स्राव इतना अधिक और विकृत न हो कि जिसमें मिलनेसे पुरुषवीर्य्यजन्तु मरकर नष्ट हो जायँ (प्रायः श्वेत स्रावका अम्ल रस होता है । यदि यह अम्लरस अधिक तीव्र हो, तो इसमें पुरुषवीर्य्यजन्तु मिलते ही मर जाते हैं ।)

११ रजोदर्शन होनेके बाद जब स्त्री ऋतुस्नानसे निवृत्त होती है तभी वह गर्भधारणके योग्य होती है ।

महर्षि चरकने उत्तम संतानोत्पत्तिके लिये पुत्रेष्टि कर्मका विधान लिखा है । इस स्थलपर उसकी पूरी पूरी विधि लिखने की आवश्यकता नहीं दिखाई देती । जो लोग इस विधिकी सब बातें जानना चाहें, उनको 'षोड़शसंस्कार-विधि' पढ़नी चाहिये। इसकी क्रिया इस तरहकी है कि संतानोत्पत्तिकी इच्छा रखनेवाले स्त्रीपुरुष एक वेदीके समीप बैठकर वैदिक मंत्रोंके द्वारा हवन करते हैं । हवन-क्रिया हो चुकने पर संतान की कामना रखनेवाली स्त्री अग्निकुंडकी प्रदक्षिणा करके और वेदपाठी-ब्राह्मणोंसे स्वस्तिवाचन करके हवनसे बचे हुए घृतको

जाती है और फिर रात्रिके समय संतानोत्पत्तिके लिये पतिसे सहवास करती है ।

कृष्णादिवर्ण संतान होनेका कारण ।

जब तेजोधातुके साथ जल और आकाशधातु अधिक मिलता है तब संतान गौर वर्णकी होती है । तेजोधातुके साथ पृथ्वी और वायु धातुओंके मिलनेसे संतान कृष्ण वर्ण होती है । इसी तरह जब तेजोधातुके साथ समस्त धातुएँ समान रूपसे मिल जाती हैं तब श्याम वर्णकी संतान होती है ।

गर्भधारणके लिये स्त्री-पुरुषकी सहवास-विधि ।

(१) गर्भधारणके समय स्त्री-पुरुष अलंकारयुक्त हों, दोनोंका शरीर स्वच्छ, शोभायमान और सुगन्धित द्रव्योंसे सुशोभित हो ।

(२) स्त्री और पति दोनोंके मनमें अत्यन्त उत्साहपूर्ण प्रीति और समागमकी पूर्णेच्छा हो । उनके मनमें किसी तरहकी चिन्ता या भय न रहना चाहिये ।

(३) सहवासस्थान गुरुजनोंसे रहित, एकान्त, स्वच्छ और हो सके तो अलंकृत भी होना चाहिये ।

(४) दम्पति हर्षित और प्रसन्न मन होने चाहिये । इस विषयमें डाक्टर ट्राल लिखते हैं कि जब स्त्री और पुरुषके शरीर और मनकी उत्तम स्थिति हो, एकका मन दूसरेमें लग रहा हो, दोनोंका मन एक ही काम अर्थात् इच्छित सद्गुणी और रूपवान् सन्तान उत्पन्न करनेकी ओर लगा हो, पेटमें एक दम आहारका भार न हो, कलेजा साफ और शरीर पर

किसी प्रकारका मल न हो, ऐसे समयमें गर्भाधान करनेसे जो संतान उत्पन्न होती है वह उत्तम, सद्गुणी और सुन्दर होती है।

(५) दम्पति न तो क्षुधातुर हो, और न उनका पेट ही खूब भरा हुआ हो। भोजन करनेके २॥ वा ३ घण्टे बाद गर्भाधानक्रिया होना चाहिये।

(६) गर्भाधान क्रियाका समय रात्रिके ८ बजेसे लेकर रात्रिके २ बजे तक है।

(७) स्त्रीको उचित है कि सीधी शयन करके पुरुष-बीजको ग्रहण करे। पुरुषको उचित है कि स्त्रीके किसी अङ्गको बेजा हरकत न पहुँचावे और न टेढ़ा बाँका करे। गर्भाधान-क्रियाके समय, स्त्रीपुरुषको मन एकाग्र होकर सद्गुणी रूपवान् पुत्रकी उत्पत्तिमें लवलीन होना चाहिये।

घृतकुम्भो यथैवाग्निमाश्रितः प्रविलीयते।
विसर्पत्यार्त्तवं नार्य्यस्तथा पुंसां समागमे॥

जैसे घृतका घट अग्निके संयोगसे तपकर घृतको पतला कर देता है, उसी प्रकार स्त्री-पुरुषके समागमसे ऊष्मा उत्पन्न होकर वह बीजको द्रवरूप कर देता है। पुरुषबीज द्रवरूप होकर वायुकी प्रेरणासे स्त्रीके गुह्यावयवके अन्दर गिरता है और गर्भाशयमें पहुँचकर स्त्री-बीजसे मिलता है। पुरुषको इस समय स्त्रीसे पृथक न होना चाहिये। वीर्य्य स्खलित होनेके १० मिनिट बाद तक उसी आसनसे स्थिर रहनेसे वीर्य्य गर्भाशयके अन्दर चला जाता है और स्त्रीके बीजजन्तुओंसे जाकर मिल जाता है। पुरुषके पृथक् होने पर स्त्रीको १५ मिनट तक उसी आसनसे, सीधे लेटे रहना चाहिये,

क्योंकि उसी समय खड़े हो जानेसे वीर्य्य गर्भाशयसे बाहर निकल आता है। स्त्री-पुरुषके समागममें पुरुषके समान स्त्रीका वीर्य्य भी स्खलित होता है, परन्तु स्त्रीका यह वीर्य्य गर्भ-धारणमें उपयोगी नहीं होता। स्त्रीके गर्भ अण्डमेंसे फल-वाहिनीके द्वारा जो स्त्री बीजजन्तु आते हैं, वे ही गर्भधारणके लिये उपयोगी होते हैं।

गर्भाधानाक्रियाके अयोग्य स्त्रीके लक्षण।

जिस स्त्रीने पेट भरके खूब भोजन किया हो, जो भूखी प्यासी हो, जिसका मन मलीन, शोकार्त्त या क्रोधयुक्त हो, पतिसे वैमनस्य रखती हो, जो पतिके अतिरिक्त अन्य पुरुष-से रतिकी इच्छा रखती हो, जो गर्भधारणकी शक्तिसे रहित बिलकुल कम उमरकी, अति वृद्ध अथवा संकुचित अंगवाली हो, जो अधिक समयसे रोगी अथवा अन्य किसी विकारसे पीड़ित रहती हो, ऐसी स्त्री गर्भधारणके योग्य नहीं होती। जो स्त्री गर्भधारणके योग्य नहीं है, उससे रति करना भी सर्वथा व्यर्थ है; क्योंकि जिस बीजसे बड़े बड़े विद्वान्, ज्ञानी, पंडित और श्रेष्ट पुरुष उत्पन्न होते हैं, उसे कुक्षेत्रमें डालना उचित नहीं है। इन्हीं दोषोंसे युक्त पुरुष भी उत्तम नहीं समझा जाता। सम्पूर्ण दोषोंसे रहित स्त्री–पुरुषको गर्भाधानके लिये रतिकर्म करना उचित है।

सहवासमें आसनदोष।

न च न्युब्जां पार्श्वगतां वा संसेवेत। न्युब्जाया वातो बलवान् स योनिं पीडयति। पार्श्वगतायां दक्षिणे पार्श्वे

श्लेष्मा स च्युतो पिदधाति गर्भाशयं । वामे पार्श्वे पित्तं तदस्यां पीडितं विदहति रक्तशुक्रं । तस्मादुत्ताना बीजं गृह्णीयाम् । तस्या हि यथास्थानमवतिष्ठन्ते दोषाः ।

न्युब्ज भाव (तिरछी रीतिसे) और पार्श्वगत (करवट लिये हुए) स्त्रीके साथ गमन न करना चाहिये । न्युब्ज भावमें सोती हुई स्त्रीके साथमें सहवास करनेसे वायु बलवान होकर योनि अवयवको पीड़ित करता है । दाहिनी करवटमें सोती हुई स्त्रीके साथ गमन करनेसे श्लेष्मा प्रच्युत होकर गर्भाशयको ढक लेता है । बाईं करवटसे सोती हुई स्त्रीके साथ गमन करनेसे पित्त कुपित होकर गर्भाशयके रक्त (स्त्रीबीज) और पुरुषबीजको दूषित कर देता है, अतएव गर्भाधानके समय स्त्रीको उत्तान अर्थात् चित्त शयन करना चाहिये । ऐसा करनेसे वातादि दोष अपने अपने स्थान पर स्थिर रहते हैं ।

गर्भाधानक्रियाके बाद स्त्रीको उचित है कि हाथ, पैर, मुख और गुह्यावयवको शीतल स्वच्छ जलसे प्रक्षालन करे । यदि उष्ण ऋतु होवे, तो शीतल जलसे और शीत ऋतु हो तो गुनगुने जलसे स्नान करे ।

विधिपूर्वक गर्भधारणका फल ।

ध्रुवं चतुर्णां सान्निध्याद्गर्भः स्याद्विधिपूर्वकः ।
ऋतुक्षेत्राम्बुबीजानां सामग्र्यादङ्कुरो यथा ॥
एवं जाता रूपवन्तो महासत्वाश्चिरायुषः ।
भवन्त्यृणस्य मोक्तारः सत्पुत्राः पितृणां हिताः ॥

भावार्थ—जिस तरह ऋतु, खेत, जल और बीज इन

चारोंके संयोगसे अंकुर उत्पन्न होता है, उसी तरह ऋतुकाल, गर्भाशय, स्त्रीरज और पुरुषवीर्य्यसे गर्भोत्पत्ति होती है। अतएव स्त्री-पुरुषको उचित है कि वे विधिपूर्वक संतानोत्पत्ति करें। विधिपूर्वक क्रियासे जो संतान पैदा होती है वह रूपवान्, पराक्रमी, दीर्घायु, मातृपितृभक्त तथा पिताके ऋणको चुकानेवाली होती है।

पुंसवनविधि।

गर्भधारण क्रियाके बाद दूसरे तीसरे महीनेमें पुंसवन-संस्कार किया जाता है। इन महीनोंमें गर्भाशयमें बालकका शरीर बनता है, इसलिये उत्तम उत्तम औषध और भोजनके द्वारा गर्भस्थ बालकको सहायता पहुँचाना ही पुंसवन-संस्कारका मुख्य प्रयोजन है। छान्दोग्य उपनिषद्में लिखा है;—

आहारशुद्धौ सत्त्वशुद्धिः सत्वशुद्धौ ध्रुवा स्मृतिः।

आहार-शुद्धिसे सत्वशुद्धि और सत्वशुद्धिसे गर्भस्थ बालकके शरीरमें स्थिर-शुद्धिके तत्त्व आते हैं। अर्थात् पुंसवनमें जो औषधादि स्त्रीको दिये जाते हैं, उनसे गर्भस्थ बालककी शरीर-रचनामें सत्त्वप्रधान तत्त्व सम्मिलित होते हैं। पुंसवनमें जिन औषधोंका प्रयोग किया जाता है उन्हें यहाँपर लिखते हैं। पुंसवनसंस्कारकी विशेष विधि 'षोड़श संस्कार-विधि'में देखो।

गौ चरानेकी जगहमें उत्पन्न हुए वट-वृक्षकी पूर्व और उत्तरकी शाखाओंमेंसे दो निर्दोष कोंपलें ले आवे। उन दोनों कोंपलोंको दो उड़द अथवा सफेद सरसोंके साथ दहीमें डालकर पुष्य नक्षत्रमें गर्भिणीको खिलावे। अथवा जीवक, ऋष-

भक, ओंगा और सहदेवी इन सबको अथवा एक एकको घोंटकर लुगदी बनावे और दूधके साथ पिलावे।

अब सुश्रुतके मतसे पुंसवन विधि लिखते हैं:—

जो स्त्री पुत्रकी कामना रखती हो, उसके गर्भधारण करने पर लक्ष्मणा,* वटवृक्षकी कोंपल या सहदेवी † इनमेंसे किसी एकको पीसकर तीन चार बूंद उसके दाहिने नथुनेके द्वारा सुँघावे और थूकने न देवे। आश्वलायन गृह्यसूत्र और पारस्कर गृह्यसूत्रमें भी लिखा है कि गर्भ रहनेके दूसरे वा तीसरे महीनेमें वटवृक्षकी जटा वा कोंपलको स्त्रीके दाहिने नकुएसे सुँघावे। अथवा पुष्य नक्षत्रमें गरम की हुई पिठी (पिष्टक) की भाफको दाहिने नथुनेसे सुँघावे और उसी पीठीके रसको रूई या फाहेके द्वारा दाहिने नथुनेमें निचोड़े। इसके अतिरिक्त कोई उत्तम वैद्य या विद्वान् ब्राह्मण जो पुंसवन बतलावे, उचित हो तो उसका भी सेवन करावे।

तीसरे महीनेमें जैसे पुंसवनसंस्कारका विधान है, उसी तरह चौथे महीनेमें सीमन्तोपनयन संस्कारका विधान है।

---

* सुश्रुतने लक्ष्मणा बूटीको नस्य देनेके लिये लिखा है। उसकी पहिचान यह है—

पुत्रकारकरक्ताल्पबिन्दुभिर्लाञ्छिता यदा।
लक्ष्मणा पुत्रजननी बस्तगन्धाकृतिर्भवेत्॥

अर्थ—जिसके पत्तोंपर रक्तके समान छोटे छोटे बिन्दु हों और जो बनतुलसी (रेहानवृक्ष) की आकृतिके समान हो, उसका नाम लक्ष्मणा बूटी है।

† कोई कोई आचार्य्य सफेद फूलकी बला अर्थात् खिरैंटीको और कोई कोई आचार्य्य गिलोय और ब्राह्मी बूटीको भी इस काममें लेते हैं। —लेखक।

गर्भ रहनेके चौथे महीनेके शुक्ल पक्षमें जिस दिन मूलादि पुरुष नक्षत्रोंसे युक्त चन्द्रमा हो, उस दिन सीमन्तोपनयन संस्कार करे। इस संस्कारकी पूर्ण विधि अन्य षोडशसंस्कारादि ग्रन्थोंसे जान लेनी चाहिये। चौथे महीनेके सिवाय छठे और आठवें महीनेमें भी सीमन्तोपनयन संस्कार करे। शौनक, गोभिलीय, पारस्कर आदि गृह्यसूत्रोंका भी यही मत है।

गर्भनाशक चेष्टाएँ।

जो गर्भवती स्त्री उकडूँ होकर बैठती है, ऊँचे स्थान पर चढ़ती उतरती है, कठोर आसनोंपर बैठती है, अधोवायु, मूत्र और पुरीषके उपस्थित वेगोंको रोकती है, कठिन और परिश्रमके कामोंको करती है, तीक्ष्ण, उष्ण पदार्थोंका अत्यन्त सेवन करती है, अथवा भूखी रहती है उसका गर्भ कुक्षिके भीतर ही मर जाता या अकालमें अर्थात् दो-चार छः महीनेका होकर गिर जाता या शुष्क हो जाता है। इसी प्रकार चोट लगनेसे, प्रपीड़नसे (दबाव पड़नेसे) बारम्बार गहरे गड्ढे या नीची ऊँची जमीनमें उतरने और कूपादि अति नीचे गर्त्तोंको देखनेसे भी अकालमें गर्भ गिर जाता है। इनके अतिरिक्त अत्यन्त संक्षोभी (जिसमें विशेष धक्का लगे) सवारी पर चढ़कर सफर करनेसे, अप्रिय और अत्यन्त घोर शब्दोंके (जैसे तोप-बम्ब-गोलादिका शब्द) सुननेसे भी गर्भपात हो जाता है। सदैव चित्त (सीधा) शयन करनेसे गर्भस्थ बालककी नाभिमें रहनेवाली नाड़ी (नाल) कण्ठको लपेट लेती है। जो गर्भिणी स्त्री चारों हाथ पैरोंको पसारकर सोती अथवा रात्रिके समय बाहर भ्रमण करती है, उसकी सन्तान

उन्मत्त होती है। कलहकारिणी अर्थात् लड़नेवाली स्त्रीकी संतान मिर्गी रोगसे ग्रस्त होती है। व्यवायशीला (अत्यन्त मैथुनाभिलाषिणी) स्त्रीकी सन्तान कुत्सिताङ्ग, निर्लज्ज, और व्यभिचारी होती है। नित्य प्रति शोकाकुलित स्त्रीकी सन्तान डरपोक, कृश और अल्पायु होती है। अभिध्यात्री (परधनसे ईर्ष्या रखनेवाली) स्त्रीकी सन्तान परोपतापी, ईर्ष्यायुक्त और व्यभिचारी होती है। चोर स्त्रीकी सन्तान अति परिश्रमी, अति द्रोही और अशील होती है। अमर्षिणी अर्थात् क्रोधित स्त्रीकी सन्तान प्रचण्ड, उपाधियुक्त और ईर्ष्या करनेवाली होती है। स्वपननित्या (बहुत सोनेवाली) स्त्रीकी सन्तान तन्द्रालु, अज्ञान और मन्दाग्निवाली होती है। मद्यनित्या (शराब पीनेवाली) स्त्रीकी सन्तान पिपासालु (प्यासयुक्त) और उद्विग्नचित्त होती है। गोहके मांसको खानेवाली स्त्रीकी सन्तान शर्कराश्मरी (पथरी) और शनैर्प्रमेह रोगवाली होती है। शूकरके मांसको खानेवाली स्त्रीकी सन्तान लाल लाल नेत्रवाली, हिंसक तथा कड़े रोमोंवाली होती है। मछलीका मांस खानेवाली स्त्रीके चिरनिमिष (विलम्बसे पलक मारनेवाली) स्तब्धाक्ष (पथराये हुए नेत्रोंवाली) सन्तान होती है। प्रतिदिन अधिक मधुर भोजन करनेवाली स्त्रीकी सन्तान प्रमेह रोगवाली, गूँगी और स्थूल शरीरवाली होती है। अधिक खटाई खानेवाली स्त्रीकी सन्तान रक्तपित्त, त्वचा और आँखके रोगवाली होती है। अधिक नमक खानेवाली स्त्रीकी सन्तानके बाल शीघ्र सफेद हो जाते हैं और वह इन्द्रलुप्त रोगवाली होती है। अति कटु भोजन करनेवाली स्त्रीके दुर्बल, अल्प-

वीर्य्य और निस्सन्तान रहनेवाली सन्तान होती है। तीक्ष्ण मिरचादि पदार्थ अधिक खानेवाली स्त्रीके शोषरोगी, निर्बल, और कृश सन्तान होती है। कषाय पदार्थ अधिक खानेवाली स्त्रीके श्यामवर्ण, आनाह वा उदावर्त्त रोगवाली सन्तान होती है। जो जो वस्तुएँ जिन जिन रोगोंकी उत्पत्तिका कारण हैं, उनके खानेसे वही रोग संतानको हुआ करते हैं।

गर्भिणीके रोगोंका उपचार।

उत्तम सन्तानोत्पत्तिकी इच्छा रखनेवाली स्त्रियोंको चाहिये कि वे ऊपर कहे हुए हानिकारक आहार-विहारोंका परित्याग करके सौम्य और हितकारक आहार-विहारका सेवन करें। जब गर्भिणी स्त्रीको कोई बीमारी हो तब उसकी मृदु, मधुर और शीतल ओषधियोंसे चिकित्सा करनी चाहिये। चिकित्सक गर्भवती स्त्रीको वमन, विरेचन या शिरोविरेचनादि कदापि न दे। इसी तरह फस्द खोलकर रक्तका निकालना या वस्तिकर्म करना भी वर्जनीय है। यदि कोई दुःखदायक रोग अचानक हो जाय तो उस समय इन प्रयोगोंको कर सकते हैं। परन्तु चिकित्सकको इस बातका पूरा ख़याल रखना चाहिये कि गर्भिणी स्त्रीको जो औषधि दी जाय या जो क्रिया की जाय उसे वह सहन कर सके और उससे गर्भको किसी तरहकी हानि न पहुँचे।

गर्भकालके आठवें महीने या उससे आगे ऐसे रोगोंमें—जो वमन आदि उपचारोंसे शान्त होते हैं—मृदु वमन विरेचन आदि दे सकते हैं, परन्तु वे बहुत ही मृदु और गर्भिणीको

सह्य होने चाहिये। क्योंकि गर्भ-कालमें स्त्रियोंका शरीर बड़ी जोखिममें रहता है। जैसे भरे हुए बर्तनको बड़ी सावधानीसे उठाना पड़ता है, जरासी असावधानी या धक्केसे उसका तेल गिर जाता है, उसी तरह गर्भवती स्त्रियोंका हाल समझो। उनकी चिकित्सामें बड़ी सावधानी रखना उचित है। यदि किसी कारण दूसरे तीसरे महीने गर्भिणी स्त्रीको रजोदर्शन हो तो समझ लो कि गर्भस्राव होनेवाला है। क्रोध, शोक, ईर्षा, भय, त्रास, मैथुन, क्षोभ, वेगोंको रोकने, विषम आसन और भूख प्यास आदिकी अधिकतासे रजोदर्शन या गर्भस्राव हो जाता है। यदि तीसरे चौथे महीनेमें ऐसा उत्पात दिखाई दे, तो उसके लिये नीचे लिखे अनुसार उपचार करना चाहिये।

गर्भस्रावका उपचार।

ऊपर कहे अनुसार यदि गर्भवतीको रजोदर्शन हो तो उसे तत्काल कोमल शय्या पर शयन करावे। जिस शय्या पर वह लेटे उसका पाँयता सिरहानेसे ऊँचा रखना चाहिये। फिर शीतल जलमें मुलहठीका चूर्ण और गायका घी डालकर दोनोंको खूब मथ ले और उसमें रूईका फाहा भिगोकर स्त्रीके योनिमार्गमें रख देवे। नाभिके नीचे धुले हुए घीका लेप करके ऊपरसे गायके दूधका, ठंडे या बर्फके पानीका, मुलहठी अथवा न्यग्रोधादिक * शीतल क्वाथका सिंचन करे। अथवा क्षीरवृक्ष

---

* न्यग्रोधादि गण—बड़, गूलर, पीपल, पिलखन, महुआ, अम्बड़ा, ककुभ (कोहा या अर्जुन) आम कोशाम्र, चोरकपत्र, छोटी जामुन, प्रियाल, मधुक, कायफलकी छाल, बेंत, कदम्ब, बेरोकी छाल, तेंदू, सल्लकी, लोध, भिलावाँ, ढाक और नन्दी

जैसे गूलर आदि और कषायवृक्ष, जैसे आँवले आदि इनके क्वाथमें अथवा बड़की कोंपलोंसे सिद्ध किये हुए घृत–दुग्धमें रूईका फाहा भिगोकर योनिमार्गमें रक्खे और इन्हीं ओषधियोंमें से कोई एक दो तोला ओषधि स्त्रीको खिलावे, अथवा केवल घी या दूध ही पिलावे। पद्म, उत्पल और कुमुदकेसरको शहद अथवा मिश्रीके साथ चटावे। अथवा सिंघाड़ा, पुष्करबीज, कसेरू, गन्ध–प्रियङ्गु, सिता उत्पल, शालूक और गूलरके कच्चे सुखाये हुए फल खानेको दे, या बड़की कोंपल बकरीके दुग्धके साथ पीसकर पान करावे, या बला, अतिबला, शाली, (साठी चांवल) ईखकी जड़ और काकोली इनके समान भाग लेकर परिमित मात्रासे क्षीरपाककी विधिसे दुग्ध सिद्ध करके शीतल होने पर पिलावे। या शहद और मिश्रीके साथ साठी लाल चावलोंका भात खानेको दे। भोजन करनेकी जगह शीतल हो। यदि वहाँ शीतल पवन आती हो तो और भी अच्छा है। ऐसे समय स्त्रीको क्रोध, शोक, परिश्रम, मैथुन और व्यायाम इनसे बचना चाहिये। परिचारिका स्त्रियोंको गर्भिणीकी उत्तम रीतिसे रक्षा करनी चाहिये। शान्तिदायक और मनोऽनुकूल कथा वार्त्ता सुनाना चाहिये जिससे उसका चित्त गर्भस्रावकी तरफसे हटकर अन्य बातोंमें लग जाय।

समाप्त।

वृक्ष (बेलिया पीपल) ये सब चार न्यग्रोधादि गणमें शामिल हैं। इनमेंसे [illegible] और मिलावाँ त्याज्य है।